पंचायत एवं समाज सेवा संचालनालय मध्यप्रदेश द्वारा समस्त पंचायतों एवं प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों के लिए, शिक्षा विभाग द्वारा समस्त महाविद्यालयों, उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों/हाई स्कूलों, शिक्षा महाविद्यालयों, बुनियादी प्रशिक्षण संस्थाओं, राज्य स्तरीय संस्थाओं तथा केन्द्रीय एवं जिला पुस्तकालयों के लिए, स्थानीय शासन विभाग द्वारा नगर निगमों एवं नगर पालिकाओं के लिए तथा आदिमजाति कल्याण विभाग द्वारा आदिवासी शालाओं के लिए स्वीकृत। उ.प्र. शासन द्वारा जिला पुस्तकालयों एवं वाचनालयों के लिए अनुमोदित।

तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश की मासिक मुखपत्रिका

तुलसी मानस भारती

संस्थापक संपादक	परामर्श	प्रधान संपादक
i- xkjyky 'kDy	Mk- je'kpn 'kkg	,u- ,y- [kMyoky

संपादक मंडल

iHkn;ky feJk] ch- ,y- fnokdj] noUn dekj jkor

vuØef.kdk

lEikndh;

1. मानस में कांड का नाम सुंदर क्यों ? एन.एल. खण्डेवाल 03
2. श्रद्धांजलि : संत प्रवर श्री राजेश्वरानंद सरस्वती प्रभुदयाल मिश्र 06

vFk lnjdkM

dfork

3. सेतु बंध प्रकरण महाकवि विष्णु दास 10

y[k

4. आज भी सुरक्षित है सुंदरकांड की पांडुलिपि पूनम नेगी 12
5. क्या हनुमानादि वानर बंदर थे ? शांतिविलास शर्मा 14

dk.Mdkuke lnjD;k\

dfork

6. सुंदराकांड रचना पं. रामप्रकाश अनुरागी 20

y[k

7. सुंदरकांड की शिखर मान्यता का आधार महामहोपाध्याय देवर्षि कलानाथ शास्त्री 21
8. कांड का नाम 'सुंदरकांड' क्यों ? डॉ. दादूराम शर्मा 25
9. सुंदरकांड सुंदर क्यों ? डॉ. रामेश्वर प्रसाद गुप्त 29
10. सुंदरकांड का सौंदर्य शोभाकांत झा 34
11. सुंदरकांड : सत्य और शिव का संयोग डॉ. किशोरीशरण शर्मा 39
12. मानस के सुंदरकांड की सुंदरता डॉ. सुशील कुमार पांडेय 'साहित्येन्दु' 44
13. जब लंकापुरी देवपुरी बन गई कपिलदेव तैलंग 49

lnjdk.MdkdF;

dfork

14. सीता–शोधा गिरिमोहन गुरु 54

y[k

15. 'सुंदरकांड' का सौंदर्य बोध डॉ. शिववंश पाण्डेय 58
16. श्री हनुमान जी का सम्प्रेषण –कौशल...... प्रो. बालकृष्ण कुमावत 64
17. सुंदरकांड का सौंदर्य डॉ. रमानाथ त्रिपाठी 73

18.	देखि परम विरहाकुल सीता	डॉ. प्रेम भारती	75
19.	अशोक वन में विरहिणी सीता और राम भक्त हनुमान	सनातन कुमार वाजपेयी 'सनातन'	79
20.	सुंदरकांड : कर्म का सौंदर्य	डॉ. अनिल कुमार	84
21.	सुंदरकांड : वायुपुत्र हनुमान की अग्निबाण यात्रा	शांति देवेन्द्र खरे	88
22.	रघुनाथ सम कृपा सिंधु नहिं आन	डॉ. शकुंतला कालरा	93
23.	हनुमान जी की सफलता का प्रतीक : सुंदरकांड	डॉ. सरोज गुप्ता	97
24.	भवानखिलान्तरात्मा	प्रभुदयाल मिश्र	100
25.	विभिषण शरणागति	डॉ. हरप्रसाद शर्मा	103
26.	धरउँ देह नहिं आन तिहोरें	नित्यानंद श्रीवास्तव	109
27.	सीता की खोज में विभीषण का योगदान	डॉ. गंगाप्रसाद बरसैंया	114
	l|njdk.M dk r|yukRed foo|pu		
	x t|y|		
28.	दो गज़लें	जितेन्द्र कुमार तिवारी	118
	y|[k		
29.	'सुंदरकांड' का आरंभ : त्रि–आयामी दर्शन	प्राचार्य डॉ. विश्वास पाटील	119
30.	वाल्मीकि रामायण के सापेक्ष मानस–सुंदरकांड का वैशद्य	डॉ. रूपनारायण पाण्डेय	124
31.	सीता की खोज तथा लंका दहन	डॉ. जयनारायण कौशिक	128
	l|njdk.M d| vk/k|fud l|nHk		
	dfork		
32.	चिखुरी	राजेन्द्र बहादुर सिंह 'राजन'	136
	y|[k		
33.	क्या तुलसी ने आतंक का प्रत्युत्तर सुंदरकांड में दिया ?	मनोज श्रीवास्तव	138
34.	हनुमान जी का मैनेजमेंट	प्रो. डॉ. मज़हर नक़वी	144
35.	बल और बुद्धि का समन्वय : सुंदरकांड	देवेन्द्र कुमार रावत	147
36.	मानस शंका समाधान	रामशरण तिवारी	150
	i|l|xo'k		
37.	सुंदरकांड और श्री हनुमत् चरित	पं. नवीन आचार्य	153
	leh{kk		
38.	मृत्यु की तत्व मीमांस	प्रभुदयाल मिश्र	155
39.	दीर्घाकार कविताओं का इतिवृत्त	प्रभुदयाल मिश्र	157
40.	बुंदेली काव्य संग्रह : बेताल की चौकड़ियाँ	देवेन्द्र कुमार रावत	159
	ikBd fy[k r|g|		160
	i|fr"Bku l ekpkj		161

ग्राहक शुल्क : वार्षिक रु. 250.00, पंचवर्षीय रु.1100.00, आजीवन रु. 2500.00 इस अंक का रु.175.00

विदेश में : फिजी आयरलैण्ड, मॉरीशस व अन्यत्र समुद्री डाक से (भारतीय रुपये में) वार्षिक रु. 1250.00, पंचवर्षीय रु. 5000.00 आजीवन रु. 12500.00, हवाई डाक से वार्षिक रु. 1500.00 पंचवर्षीय रु. 6000.00 आजीवन रु. 15000.00

सम्पर्क : तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश, मानस भवन, श्यामला हिल्स, भोपाल–462002

दूरभाष : 0755–2661196, 2660010

संपादकीय

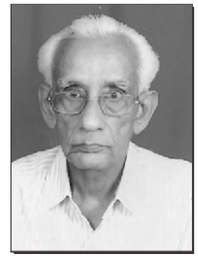

ekul e dkM dk uke lnj D;k \

गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित मानस को सात कांडों में विभाजित करके प्रस्तुत किया है– बाल कांड, अयोध्या कांड, अरण्य कांड, किष्किंधा कांड, सुंदरकांड, लंका कांड और उत्तर कांड। सुंदर कांड को छोड़कर मानस के अन्य काण्ड उसके वर्ण्य विषय पर अथवा जहां घटनाक्रम घटित हुआ है उस स्थान के नाम पर आधृत हैं पर "सुंदर कांड" को सुन्दर नाम क्यों दिया गया, इस पर विद्वानों ने मंथन किया है और उस नाम के लिए अपने–अपने तर्क दिए हैं।

सुंदर कांड के बारे में एक श्लोक प्रचलित है–

सुन्दरे सुन्दरे दृश्यं सुंदरे सुंदरी कथा।
सुन्दरे सुन्दरी सीता सुन्दरे किं न सुंदरम्।।

अथवा

सुन्दरे सुन्दरी सीता, सुन्दरे सुन्दरी कथा।
सुन्दरे सुन्दरः रामः सुन्दरे किं न सुंदरम्।।

अर्थात् सुन्दरकांड में सब कुछ सुंदर है इसलिए उसका नाम सुन्दर कांड रखा गया। विद्वानों ने इस मत का यह कहकर खंडन किया है कि मानस में तो सभी कांड एक से एक सुंदरता से परिपूर्ण हैं फिर मात्र इसे ही "सुंदर" कहना न्याय–संगत नहीं कहा जा सकता।

फिर यह भी कहा जाता है कि हनुमान का एक नाम "सुंदर" था अतः इसमें हनुमान का चरित्र प्रधान होने के कारण इस कांड को "सुंदर" नाम दिया गया। यह तर्क भी गले नहीं उतरता क्योंकि हनुमान का शौर्य तो लंका–कांड में भी उभरता है जहां उनका युद्ध कौशल और लक्ष्मण की जीवन–रक्षा के लिए संजीवनी बूटी लाने का पराक्रम उनको ऊँचाइयों पर प्रतिष्ठित करता है। क्या यह हनुमान जी की सुंदर गाथा नहीं है ?

गोस्वामी तुलसीदास से लगभग 132 वर्ष पूर्व वि.सं. 1499 (सन् 1442 ई.) में ग्वालियर के महाकवि विष्णुदास ने भाषा रामायन कथा लिखना प्रारम्भ किया था। उनके तीन ग्रंथ उपलब्ध होते हैं– भाषा रामायन कथा, महाभारत कथा (पांडव चरित) और स्वर्गारोहण। विद्वानों ने अब इन्हें "युगीन नवोन्मेष का प्रथम महाकवि" मान लिया है। अपनी "रामायन कथा" में इन्होंने रामायण की कथा को तीन अध्यायों में समेटा है– बालकाण्ड, सुन्दरकाण्ड और उत्तरकाण्ड। सुंदरकांड में हनुमान के लंका गमन से लेकर रामराज्य तक का वर्णन है अर्थात् लंका कांड सुन्दरकाण्ड में ही समाहित है अतः यह कहना संगत प्रतीत नहीं होता है कि "सुंदरकांड" नाम इसलिए सार्थक है क्योंकि

इसमें हनुमान के सुंदर गाथा का ही वर्णन है।

फिर, कुछ विद्वानों का कथन है कि इस कांड में सत्य और शिव का संयोग है, इसलिए कांड का नाम "सुंदर" सार्थक है। परंतु मानस में तो सर्वत्र शिव और सुंदर है, फिर इसी कांड को "सुंदर" क्यों कहा गया ?

गोस्वामी तुलसीदास की प्रसिद्धि रामचरित मानस के रचयिता के रूप में तो प्रख्यात है ही, उन्होंने रामलीला–मंचन के क्षेत्र में भी उल्लेखनीय कार्य किया है। छेदीलाल कांस्यकार ने अपने शोध ग्रंथ "रामलीला के पाँच सौ वर्ष" में लिखा है कि "राम की नगरी में लोक भाषा में रामायण की रचना और लोक नाट्य परम्परा में रामलीला के प्रवर्तन का श्रेय संत तुलसीदास को है।" इसका आशय यह है कि गोस्वामी तुलसीदास "काव्य–कला" के साथ "नाट्य–कला" में भी प्रवीण थे।

नाट्य कला के अनुसार नाटक की पाँच अवस्थाएं मानी जाती हैं– आरम्भ, प्रयत्न, प्राप्त्याशा, नियताप्ति और फलागम। डॉ. बलदेव उपाध्याय ने अपनी पुस्तक संस्कृत आलोचना में लिखा है कि "मानव को अपने जीवन के लक्ष्य तक पहुंचने के लिए नाना विरोधी घटनाओं के साथ संघर्ष करना पड़ता है। वह सीधे ढंग से अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँच सकता, बल्कि रास्ते में आने वाले विघ्नों को कुचलना तथा पद दलित करना उसका आवश्यक कार्य होता है।" हमारी समझ में यही संघर्ष नाटक की दूसरी अवस्था "यत्न" अथवा "प्रयत्न" के अंतर्गत आता है और ऐसा ही संघर्ष हमें रामचरित मानस के सुन्दरकांड में देखने को भी मिलता है। इस प्रकार कह सकते हैं कि मानस का "सुन्दरकांड" नाटक प्रयत्न अवस्था के समरूप है।

इधर, पं. गिरिमोहन गुरु की एक छोटी–सी रचना "बाल–रामायण" देखने में आई है। इन्होंने उसमें सर्गों का नामकरण निम्न प्रकार किया है–

जन्म सर्ग, संघर्ष सर्ग, वन सर्ग, दुख सर्ग प्रयत्न सर्ग और विजय सर्ग। इसमें न जाने किस प्रेरणा से उन्होंने "कांड" के 'सुंदर' नाम के स्थान पर "प्रयत्न सर्ग" नाम रखा।

संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ में "प्रयत्न" का अर्थ "किसी कार्य की सिद्धि के लिए किया जाने वाला प्रयास" तथा नाटक के अर्थ में 'फल की प्राप्ति के लिए शीघ्रतापूर्वक की जाने वाली क्रिया' दिया है। सुंदरकांड में यही सब कुछ है। अतः तुलसीदास ने नाटक की "प्रयत्न" अवस्था को ध्यान में रखते हुए कांड का नाम परम्परानुसार "सुंदर" रखा, क्योंकि तुलसी के पहले महर्षि वाल्मीकि और महाकवि विष्णुदास आदि कांड का नाम "सुंदर कांड" रख चुके थे।

हमने सुंदरकांड पर आघृत अंक सुंदरकांड की लोक प्रसिद्धि के कारण निकालने का प्रयास किया है।

इस अंक के प्रकाशन के क्रम में हमें बेहद दुःखद सूचना मिली कि परमसंत, साधु पुरुष, कुशल प्रवचनकार श्री राजेश्वरानंद सरस्वती हमारे बीच नहीं रहे। अतः हम तुलसी मानस भारती का यह अंक उनकी स्मृति में सादर समर्पित करते हैं।

हमारी प्रार्थना पर जिन लेखकों ने अपने व्यस्त कार्यक्रम से समय निकाल कर हमें सामग्री उपलब्ध कराई उनके प्रति हम कृतज्ञ हैं। जो लेखक किसी कारणवश नहीं लिख सके उनका आशीर्वाद और शुभेच्छा हमारे साथ है।

,u-,y- [kMyoky

ekul Hkou eJk)ktfy
lr iojJkh jkt'ojkun ljLorh

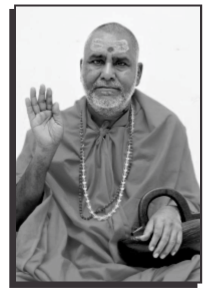

किसी के मन में जब राम कथा का बीज जम जाता है तो उसे अंकुरित होने में समय नहीं लगता और वह पल्लवित होकर शीघ्र वृक्ष बन जाता है। श्री अमरदास शर्मा के घर जन्मे श्री राजेश मोहम्मद के मन में भी राम कथा में रुचि जाग्रत हुई तो वह राजेश मोहम्मद से राजेश मोहम्मद रामायणी और फिर राजेश रामायणी और फिर राजेश्वरानंद सरस्वती हो गए। उन्होंने राम कथा को अपने जीवन में उतार लिया और अपनी राम कथा के रस से सुनने वाले हजारों लाखों व्यक्तियों को अप्रभावित किया। राम कथा सुनाते–सुनाते वे कवि और संगीतकार भी बन गए और भक्ति के साथ कविता और संगीत तीनों की त्रिवेणी के माध्यम से रामकथा को नया आयाम दिया।

श्री तुलसी मानस प्रतिष्ठान को प्रारंभ से ही उनका आतिथ्य करने तथा इससे जुड़े रामानुरागी भक्तों को उनकी अमृतराजी सुनने का अवसर मिलता रहा है। गत् माह 2 से 6 दिसम्बर 2018 तक हमारे बीच उपस्थित थे।

ऐसे कथाकार द्वारा जीवन का संवरण श्रोताओं के लिए एक अप्रतिम क्षति है। जिसकी पूर्ति निकट भविष्य में संभव नहीं है।

पूज्य स्वामी जी अमर शांति आश्रम, ग्राम पचोखरा, एट, जिला जालौन उत्तर प्रदेश में विराजते थे।

आज की यह सभा उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करती है और भगवान से प्रार्थना करती है कि वे राम कथा में लीन अप्रतिम भक्तों को अपनी शरण में लें।

J)katfy

^jl* jkt'ojkuun thegkjkt dk lkdr okl

iHkn;ky feJk

भोपाल के तुलसी मानस प्रतिष्ठान और तत्समय के श्री रामकृष्ण आश्रम, भोपाल में विगत आधी सदी से लगातार लोकरंजिनी रामकथा के अगाध स्रोत श्री राजेश्वरानंद ने विवेकानंद आश्रम रायपुर में छठे दिन की कथा सुनाकर 10 जनवरी 19 को रात्रि में इहलोक की लीला का संवरण कर प्रभु राम के चरणों में चिर विश्रांति हेतु साकेत वास ले लिया। चूंकि उपासना और भक्ति का मार्ग जन सामान्य के लिए बहुत स्वाभाविक और सरल पथ ठहरता है, अनेक दिग्गज महात्माओं और धर्म धुरंधरों की तुलना में राजेश्वरानंद जी श्रोताओं में गहरी पैंठ रखते थे। अतः हमें तब कोई आश्चर्य नही हुआ जब विगत 2 दिसंबर से 6 दिसंबर को भरत चरित पर आधारित उनकी कथा का रस पान करने वालों के लिए 700 श्रोताओं को समा लेने की क्षमता वाला रामकिंकर सभागार छोटा पड़ गया। इस कथा में उन्होने सार रूप में यही बताया कि तुलसी के अनुसार भरत आदर्श और व्यवहार की ऐसी धुरी हैं जो सभी प्रकार के विरुद्ध धर्मों में भी समन्वय रख सकती है। इसी सिद्धान्त का विवेचन करते हुए स्वामीजी ने उपासना और ज्ञान के भी समन्वय का अद्‌भुत सूत्र सामने रखा। उन्होंने कहा कि प्रायः तथाकथित वेदांती और ज्ञानी लोग यह कहते हुए सुने जाते हैं कि चूंकि वे कण–कण में ईश्वर का दर्शन करने लगे हैं; अतः अब उन्हें मंदिर, पूजा, विग्रह और शास्त्र की कोई आवश्यकता ही नहीं है। स्वामी जी ने कहा कि जिस प्रकार ज्ञान शरीर की क्षुधा की पूर्ति नहीं कर पाता ठीक वैसे ही साधना के सभी पक्ष और पद्धतियों की जीवन में उपयोगिता है। जब आपने ठाकुरजी अपने मंदिर में रखे हुए हैं और यह माना है कि उनकी पूजा करना जरूरी है, तो आपको उपासना की बराबर आवश्यकता है।

भरत जी के चरित्र का यह आदर्श पूज्य श्री स्वामीजी की कथा और उनके आचरण में प्रतिफलित होता था। वे साधुत्व की पराकाष्ठा थे। जिसने उन्हें जिस दिशा में खींचा, वे उधर के ही हो जाते थे। इस तरह जब कुछ सतसंगी उन्हें कथा स्थल पर पहुँचने में विलंब करा देते थे तो हम लोगों को कहना होता था कि स्वामी जी आज कुछ देर हो गई है। स्वामी जी तुरंत स्वीकृति में कह उठते थे – कल

बिलकुल देर नहीं करेंगे। किन्तु अगले दिन ....

स्वामी जी सन्यास पूर्व राजेश मुहम्मद थे। उनके नाम का यह मुस्लिम पक्ष उनके व्यवहार और आदर्श की कोई छोटी बाधा या परीक्षा नहीं थी। वे अपने निवास ग्राम पचोखरा, एट जिला जालौन, उत्तर प्रदेश में विराजते थे। उनके निकट संबंधी श्री गुणसागर सत्यार्थी, जो कुंडेश्वर टीकमगढ़ में रहते हैं, मेरे परम मित्र हैं। उनके दादा थे हिन्दी के प्रख्यात रचनाकार मुंशी अजमेरीजी जो राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के साथ चिरगांव में रहते थे। इस परिवार को कला और साहित्य में विरुद संस्कारतः उपलब्ध रहा है। बुंदेलखंड की यह धरती 'रामराजा' द्वारा परिपोषित प्रजा भूमि है जिसमें महाराज वीरसिंह (प्रथम) जैसा उदार राजा, गणेशकुँवर जैसी भक्त रानी, केशव जैसा महाकवि और 'मिश्र–मित्रोदय' जैसे धर्मशास्त्रकार पैदा हुए हैं। यहाँ तक कि ओरछा की उस इतिहास सिद्ध नर्तकी को भी लोक कभी भुला नहीं सका जिसने सम्राट अकबर को परनारी का संस्पर्श न करने के व्यवहार शास्त्र का ज्ञान देकर अपनी और ओरछा राज्य की आन की रक्षा की थी।

स्वामी जी की कथा और शास्त्र ज्ञान में अध्यात्म और साधुत्व की इस अखंड परंपरा का उन्मेष था। उनके संवाद की शैली बुन्देली तर्ज प्रधान थी। इस जन भाषा के उच्चारण के समय उदात्त–अनुदात्त स्वर प्रयोग, आवश्यकतानुसार लघु और दीर्घ वाणी विराम और भावों का मुखाकृति विज्ञान श्रोताओं को मंत्र मुग्ध करने की इसकी अपनी अद्‌भुद विरासत है जिसमें स्वामीजी को पूर्ण महारत प्राप्त थी। उन्होंने अपने एक प्रवचन में तो यह भी कहा कि तुलसी के मानस को ठीक से समझने के लिए बुन्देली भाषा की परंपरा महत्वपूर्ण भूमिका का काम करती है। वास्तव ने तुलसी ने बुन्देली के कुछ ऐसे दूरस्थ शब्दों का प्रयोग भी किया है जिनसे अच्छे भाषा शास्त्री भी विस्मित और चमत्कृत होते आए हैं। इसके लिए उन्होने रावण को चोर सिद्ध करने वाले ठेठ बुन्देली शब्द 'भड़या', स्त्री द्वारा पुत्र को जन्म देने के लिए 'बियानी' आदि के उपयोग का उल्लेख किया।

वर्ष 1973–74 में जब पूरे देश में रामचरित मानस के प्रादुर्भाव पर आधारित पूरे देश में 'मानस चतुश्शताब्दी' समारोह मनाए जा रहे थे, उसी समय गायक मुकेश द्वारा मानस का रागात्मक गायन भी प्रकाश में आया। तब भोपाल आकाशवाणी से भी रामकिशन चंदेश्वरी आदि अनेक शास्त्रीय गायन शैलियों में मानस के गायन को लोकप्रियता प्रदान करते थे। इसके पूर्व राधेश्याम तर्ज और बिन्दु आदि कवियों के द्वारा रामकथा की रससिद्धता का प्रवर्तन किया जा चुका था। रामकथा प्रेमियों में भागवत कथा की रस स्निग्धता का व्यापक परिचय मुरारी बापू आदि की कथा से भी हुआ है। ऐसे राम रसाश्रयी श्रोताओं को स्वतः के संगीत और गायन से एकसाथ सराबोर कर देने वाले श्री राजेश का आविर्भाव एक बहुत बड़ी घटना थी जिसका रामकथा अनुरागियों ने दशकों तक भरपूर लाभ लिया।

श्री राजेशजी बहुपठित, बहुश्रुत और बहुआयामी कल्पनाशील सर्जक भी थे। प्रत्येक कथा के अंत में उनके द्वारा पढे जाने वाले इस दोहे के उत्तरार्ध की यह पंक्ति प्रायः प्रत्येक श्रोता को याद रहने वाली है –

'जननि जनक राजेश के जय श्री सीता राम'

उन्होंने ऐसे अनेक पद, सवैये, दोहे और कवितायें लिखीं जो भक्ति, वीर, अद्‌भुत और शांति रस से परिपूर्ण तथा साहित्य की दृष्टि से मानक

स्तर की हैं। वर्तमान में अनेक कथाकार और प्रवचनकार उनकी इन रचनाओं को दोहराते हुये अपनी कथा को गति प्रदान करते हुए देखे जाते हैं।

इसके अतिरिक्त स्वामी जी की रचना–धारा की एक और बड़ी विशेषता यह थी कि वे हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत और उर्दू के शब्द और पदों का प्रयोग भी समान अधिकारिता और सिद्धिपूर्वक करते थे। उनकी इन सभी भाषाओं की बहुज्ञता उन्हें बड़ी असाधारणता प्रदान करती थी।

स्वामी जी ने सनातन हिन्दू परिपाटी में सन्यास दीक्षा प्राप्त कर उन अति परंपरावादियों को जैसे मौन कर दिया था जिन्हें उनके आश्रम पूर्व के 'मुहम्मद' मुखड़े से आपत्ति होती थी। कर्ण की किसी ऐसी ही मनोदशा पर अपने खंडकाव्य 'रश्मि रथी' में श्री रामधारी सिंह दिनकर ने लिखा था –

'मैं उनका आदर्श कभी जो व्यथा न खोल सकेंगे
पूछेगा जग किन्तु पिता का नाम न बोल सकेंगे !

किन्तु क्या कबीर, जायसी, रहीम, रसखान, साई बाबा और वर्तमान समय के अजहर हाशमी आदि को हम जन्म या जाति के तराजू पर तौलकर उनकी सार्वजनीनता को माप सकते हैं !

विनयपत्रिका में तुलसी का तो यही कहना है –

'भलो लोक परलोक तासु
जाके बल ललित ललाम को
तुलसी जग जानियत नाम
ते सोच न कूच मुकाम को
कलि नाम कामतरु राम को ।

तुलसी के अनुसार तो राम का नाम मात्र कल्प वृक्ष जैसा फलदायी है। अब किसी को पते ठिकाने के लिए गली, कूचा, मकान और देश के ठिकाने में जाने की कहीं कोई जरूरत नहीं है। ये सारे लौकिक विवरण अनावश्यक विस्तार में पहुंचाकर केवल भटकाने का ही काम करते हैं । जिसने राम के नाम का आश्रय ले लिया उसके लिए लोक और परलोक दोनों स्वतः ही संवर जाते हैं।

स्वामी श्री राजेश्वरानंद जी सरस्वती न केवल मध्यकालीन भक्ति परंपरा के नैरंतर्य के परिचायक हैं बल्कि वे भारतीय संस्कृति–बोध के भविष्य के वह स्तम्भ हैं जो अपनी कालजयिता में सदा चिरन्तन है। उनकी दिव्य स्मृति को प्रणाम !

35, ईडन गार्डन चूनाभट्टी, कोलार रोड, भोपाल 16 (9425079072)

vFk l|nj dkM

dfork

lrq c/k iidj.k

egkdfo fo".knkl

विलम्यौ खिनकु विभीषन राउ। बोले राघव करहु पसाउ।।
बाँधत सेतु न लावहु वार। ज्यों कपिदल सब उतरहि पार।।1।।
सगर तिहारौ पुरुखा भयौ। तिहिं खनि सेतु समुद निरमयौ।।
तातैं लहियौ सागर नाम। या पहँ मारग माँगहु राम।।2।।
इतनौ कहत विभीषन मंतु। मंत्री बूझै सकल तुरंतु।।
तब कपि राजा भाख्यौ एह। आपुन राघव द्यरनौ देहु।।3।।
ताके वचन राम मन धरे। समुद्र तीर कुस संथर करे।
राघव सोहत तहाँ बईठ। जनुक कुंड बैसंदर दीठ।।4।।
उवौ सूरु निसि गई बिहाइ। राघौ लखिमन लियो बुलाइ।।
देखहु गारौ सागर तनौ। रूप न दरसावत आपुनौ।।5।।
मेरौ बैरी पेट समाइ। अब मो सरिस रहौ गरुबाइ।।
अति संभई पुरुष जो होइ। जीवत वींर मरैं वर सोइ।।6।।

क्षिमावंतं समायुक्तं, मामयं वरुणालयं।
असामर्थ विजानीया, ध्रिगुमां याति जीवनं।।
चापयामानया सोपि, मृिते सरन सेवया।
सरेणशोर्षायिष्यामि, पश्चाजांति दिवंगता।।
ंदंभोलिताछोरने को अंभोनिधि हतं मया।
भस्मीकुरुस्थ लंकारि, सागरस्य विनाशनम्।।

मैं राखी सागर की कानि। मोहिं रह्यौं वह कायर जानि।।
ताकी बुद्धि हँसै संसार। करौ जु नीच जोग उपगार।।7।।
सागर जल जारन के काज। वज्र समान तिनहि गुन गाज।।
मैलौ तानि समुद संघरौं। जलनिधि सोखि धूरिनिधि करौं।।8।।
लछिमन धनुष बान लै आउ। हौं मानव सागर भरियाउ।।
सोखत नीर न लावहुं बार। बंदर जाहिं पयादे पार।।9।।
इतनौ कहि तब धनुहर लयौ। बान अनेकन सागर हयौ।।
उठौ धूम आकासहँ जाय। जलचर बहुत मरे अकुलाइ।।10।।

उसटि गयौ जल जौजन बीस। सहि न सकी राघव की ईस।।
अगिनि बान गुन कियौ रिसाइ। देखि समुद आयौ अकुलाइ।।11।।
पुरुष रूप अति रतनन जर्‌यौ। आवत दृष्टि राम की पर्‌यौ।।
नासिर मुकुट रतन उर हार। कुंडिल श्रवननि लसत उजार।।12।।
नदी नवासी नवसौ साथ। आइ राम कहँ जोरे हाथ।।
हौं कृतघ्न सुनि मो सहँ बात। दैयत जितै जबहि तो तात।।13।।
देवनि पास वचन जब लह्यौ। सु अब सुनौ सागर यौं कह्यौ।।
राजा दसरथ मांग्यो एहु। एक पुत्र मेरे घर देहु।।14।।
सूर सबल अति धरमी सोइ। जातैं मोकहँ कीरति होइ।।
इतनौ सुनि तब देव कहंत। चार पूत हवँ हैं बलवंत।।15।।
जेठै तिनहिं महाबल होइ। सागर कीरत तारहि सोइ।।
यह बरु लै दसरथ तब गयौ। तब वह मित्र हमारौ भयौ।।16।।
हौं भैया करि मान्यौ सोइ। तू मोहिं जानि पिता सम सोइ।।
सुनि राघच यह आदि सहाउ। शत्रु मित्र जो एक सुभाउ।।17।।
दुसह हिलोर सुभर जल भर्‌यौ। सुर नर असुर जात नहिं तिर्‌यौ।।
यह न होइ मेरौ अपराधु। राघव रहत सु सदा अगाध।।18।।
रावन नाखि सिया लै गयो। यह मो एकु अलच्छनु भयौ।।
अब तुम कोपि कियौ संधानु। निफल न जाइ राम कौ वान।।19।।
पश्चिम उत्तर बीच जु देस। छाँड़हु अग्निबान हरि केस।।
सागर वचन बान छाँड़ियौ। जारि सुनीर मूलकि कियौ।।20।।
भयौ राम कह जै जैकार। कह्यौ भेद इमि उतरहु पार।।
बंदर एक आहि नल नाम। आइसु ताहि देहि जो राम।।21।।
बाँधै मोहिं समुद यौं कह्यौ। सागर पास भेद यह लह्यौ।।
उहि बिसकर्मा यह वर लह्यौ। तब नल रामचंद्र सौं कह्यौ।।22।।
मेरे पिता मोहिं वर दियौ। सो अब करौं जो चाहो कियौ।।
सुनत वचन तब हरषे राम। नल कहँ आइसु दीनौ ताम।।23।।
बाँधहु सेतु न लावहु वार। अरु सुग्रीव जनावहु सार।।
दुइ सै चाल छंद चौपही। आगम हेत बिष्नु कवि कही।।24।।
विभीषन आगम कौ हेतु। कहिहौं ज्यों अब बाँध्यौ सेतु।।
विष्नुदास कवि कह्यौ बखान। पढ़त सुनत गंगा अस्नान।।25।।

'भाषा रामायन कथा' से उद्‌धृत

ys[k

vkt Hkh ljf{kr g lnjdk.M dh ik.Mfyfi

i ue uxh

सोलहवीं सदी में गोस्वामी तुलसीदास रचित सुंदरकाण्ड की पाण्डुलिपि आज भी सुरक्षित है। उत्तर प्रदेश के लखीमपुर खीरी जिला स्थित दुलही गांव में एक परिवार पाँच पीढ़ियों से इसकी सुरक्षा करता आ रहा है। तुलसीदास ने इसी गांव में रामचरितमानस के इस महत्वपूर्ण अंश की रचना की थी।

लोक मंगल के अमर गायक और भारतीय वाङ्मय की अमर धरोहर "रामचरितमानस" के सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंश सुंदरकाण्ड की पाण्डुलिपि अब तक सुरक्षित है। गोस्वामी तुलसीदास ने इस कालजयी कृति की रचना 16वीं सदी के उत्तरार्द्ध में उत्तर प्रदेश के लखीमपुर खीरी जिले की धौरहरा तहसील के दुलही गांव में की थी। दुलही निवासी पं. जागेश्वर दयाल तिवारी के परिवार के पास मौजूद सुंदरकाण्ड की वह पाण्डुलिपि अब तक सुरक्षित है। गांव वालों के मुताबिक जागेश्वर तिवारी का परिवार पांच पीढ़ियों से इस अनमोल धरोहर की सुरक्षा करता आ रहा है।

कहा जाता है कि 16वीं शताब्दी में काशी के घाट पर रामचरितमानस का श्रीगणेश करने के उपरान्त एक बार गोस्वामी तुलसीदास भ्रमण करते हुए वर्तमान लखीमपुर जिले के सघन वन प्रांत में जा पहुंचे। वहां का सुरम्य शांत वातावरण उन्हें बहुत भाया। अतः उन्होंने कुछ समय के लिए वहीं एक वट वृक्ष के नीचे डेरा डाला और रामचरितमानस के अंश सुन्दरकाण्ड की रचना की। वह वट वृक्ष आज भी महाकवि के सृजन का मूक साक्षी है।

महाकवि तुलसी की इस अनमोल विरासत को सुरक्षित रखने का जिम्मा संभालने वाले जागेश्वर दयाल तिवारी की माने तो गोस्वामी जी ने यह पांडुलिपि उनके पूर्वज पं. भवानी प्रसाद तिवारी को रामभक्ति से प्रसन्न होकर भेंट स्वरूप प्रदान की थी। तभी से उनका परिवार इस धरोहर की सुरक्षा पीढ़ी दर पीढ़ी करता आ रहा है।

वह पाण्डुलिपि भोज पत्र पर काली स्याही से मोटे अक्षरों में लिखी गई है तथा

इसके प्रत्येक पन्ने पर सीताराम लिखी गोल मुहर भी लगी हुई है। इस पाण्डुलिपि पर संवत् 1672 अंकित है। सनद रहे कि बीती सदी में गीता प्रेस (गोरखपुर) के संचालक हनुमान प्रसाद पोद्दार स्वयं वहां आए थे और उन्होंने उस पाण्डुलिपि को देखने के बाद उसके तुलसीदास के हस्तलिखित होने की पुष्टि की थी। उन्होंने "कल्याण" के वर्ष 13, अंक–3, मानसांक खंड–3 में इस पाण्डुलिपि का जिक्र करते हुए इसे मौलिक और प्रामाणिक बताते हुए इस आशय पर एक लेख भी प्रकाशित किया था।

यही नहीं, बीती सदी में मौजा द्यौरहरा से निकलने वाली एक उर्दू पत्रिका "वाजिलबुलअर्ज" में प्रकाशित द्यौरहरा के जांगड़ा राजा खड़क सिंह के उर्दू में लिखे एक आलेख से भी तुलसीदास के यहां मानस का सृजन करने की जानकारी मिलती है।

उक्त आलेख के मुताबिक गोस्वामी जी सोलहवीं सदी में सरयू नदी किनारे भ्रमण करते हुए इस क्षेत्र के जंगल में आये थे और वहीं उन्होंने मानस के कुछ अंशों की रचना की थी। आलेख के विवरणानुसार एक बार वे द्यौरहरा के राजा खड़क सिंह से भेंट करने गये तो राजा के कर्मचारियों ने उनसे कहा कि राजा साहब पूजा कर रहे हैं। इस पर तुलसीदास बोले उठे– "तुम्हारे राजा पूजा नहीं कर रहे, वे हिसाब लगा रहे हैं।" यह कहकर वे लौट गये। जब राजा को यह बात पता चली तो उनके मन में तुलसीदास से मिलने की तीव्र उत्कंठा जाग उठी और वे उसी वक्त उनकी कुटिया पर जा पहुंचे। गोस्वामी जी उस समय शौच के लिए गए हुए थे। तब राजा साहब उनकी शक्ति की परीक्षा लेने के उद्देश्य से उनके आसन पर जा बैठे। थोड़ी देर बाद हाथ में बरगद की टहनी लिए तुलसीदास वहां पहुंचे और राजा से कहा– "तुमने पृथ्वी का राजा होकर फकीर का आसन ले लिया। अब पृथ्वी का राज्य तुम्हारे हाथ से निकल जाएगा।" राजा साहब को अपनी भूल पर बहुत पश्चाताप हुआ और वे तत्क्षण तुलसीदास जी के चरणों में गिर कर क्षमा मांगने लगे।

किवदंती है कि गोस्वामी जी द्वारा वहां रोपी गई बरगद टहनी आज विशाल वट वृक्ष में तब्दील हो चुकी है। यह स्थान अब "रामवटी" के नाम से समूचे क्षेत्र में विख्यात है। कहते हैं कि जिस स्थान पर गोस्वामी जी ने सुंदरकांड की रचना की थी, उस स्थान को वर्तमान में तुलसी चौरा के नाम से जाना जाता है।

इस क्षेत्र के कुछ वयोवृद्ध जानकारों का कहना है कि द्यौरहरा के जांगड़ा राजा खड़कसिंह के परिवार द्वारा इस तुलसी चौरे के पश्चिम में बीती सदी में ठाकुरद्वारा का निर्माण कराकर उसमें श्रीराम, माता सीता और लक्ष्मण की प्रतिमा के साथ संत तुलसीदास की प्रतिमा भी स्थापित की गई थी। ठाकुर द्वारे पर लगे शिलालेख के मुताबिक इसका निर्माण वर्ष 1937 में होने का पता लगता है। ठाकुरद्वारे में एक हवन कुंड भी है। कहा जाता है कि गोस्वामी जी यहां यज्ञ किया करते थे। वन्य क्षेत्र के मध्य स्थित महान संत तुलसीदास की यह रचनास्थली क्षेत्रीय लोगों के बीच आस्था के केंद्र के रूप में विख्यात है।

"पांचजन्य" से साभार

ys[k

D;k guekukfn okuj cnj Fk \

'kkfrfo ykl 'kek

हमारे देश में प्रचलित मूर्ति पूजा की परंपरा और साहित्य में वर्णित तथ्य इस बात को प्रकट करते हैं कि राम रावण युद्ध में प्रमुख भूमिका निभाने वाले प्रमुख वीर हनुमान, सुग्रीव आदि वानर वीर बंदर थे परंतु मेरा हृदय कदापि इस तथ्य को स्वीकार नहीं करता।

यद्यपि विद्वानों ने वानर वीरों को रीछ, बंदर सिद्ध कर राम के महत्व को बढ़ाने का प्रयास किया है कि वे रीछ बंदर ही थे। राम इतने कुशल संगठक थे कि उन्होंने मनुष्य तो मनुष्य पशुओं तक को भी संगठित करके रावण जैसे बलवान शत्रु से केवल लोहा ही नहीं लिया अपितु सागर को भी पार किया व अजेय शत्रु को जीत भी लिया।

प्रभु श्रीराम तो जगत नियंता है। जो समग्र जगत को संगठित व नियंत्रित रख सकता है वह यदि पशुओं को संगठित करे तो कोई विशेष बात नहीं होती और यह कहने से कि उन्होंने पशुओं को भी संगठित करके एक बड़ा युद्ध लड़कर महान कार्य किया तो उस महिमामय के गौरव में कोई वृद्धि नहीं होती। क्या सूर्य को दीपक से अधिक प्रकाशित किया जा सकता है ? कदापि नहीं। हाँ, इतना अवश्य है कि अनेक व्यक्ति–समूह जो यत्र–तत्र बिखरे अपनी प्रच्छन्न संघ शक्ति से अनभिज्ञ थे, एक संगठित आतंकवाद के आगे निरीह बने नत मस्तक थे, उन्हें श्रीराम ने स्वशक्ति व स्वाभिमान से अवगत करा कर गौरवान्वित किया और अपने अभीष्ट की सिद्धि की।

अब मुख्य प्रश्न पर दृष्टिपात करें ? क्या वानर बंदर थे ? रामचरितमानस एवं रामायणादि ग्रंथों के अवलोकन से इस प्रश्न का नकारात्मक उत्तर मिलता है क्योंकि बंदर की गणना पशुओं में की जाती है और आमतौर पर यह पालतू पशु न हो कर जंगली पशु जाना जाता है। यदि सुग्रीव हनुमानादिक सचमुच वानर यानि बंदर या वनवासी जंगली जानवर होते तो फिर राम उनसे यह प्रश्न क्यों करते–

"कारण कवन बसहु बन मोहि कहहु सुग्रीव ?"

जो स्वाभाविक रूप से वनवासी हैं उसके वन में रहने का कारण पूछे जाने का

कोई औचित्य समझ में नहीं आता। मुनि नारद विश्वमोहिनी के रूप से मोहित हो सोचते हैं–

हरिसन मांगों सुंदरताई।
होइहि जात गहरु अति भाई।।
मोरें हित हरि सम नहीं कोऊ।
एहि अवसर सहाय सोई होऊ।।
आपन रूप देहु प्रभु मोही।
आन भांति नहीं पावौं ओही।।
जेहि बिधि नाथ होई हित मोरा।
करह सो वेगि दास मैं तोरा।।

इस प्रार्थना को सुन कर प्रभु ने कौतुक रचाया–

मुनि हित कारन कृपानिधाना।
दीन्ह कुरूप न जाई बखाना।।

जब नारद को यह ज्ञात हुआ कि मुझे कौन सा रूप प्राप्त हुआ तो बोले–

कपि आकृति तुम कीन्ह हमारी।
करिहहिं कीस सहाय तुम्हारी।।

अर्थात प्रभु ने नारदजी को कपि की आकृति प्रदान की जो कि देव स्वरूप हैं।

कपि सुकर्मा देवताओं के वर्ग के देवता हैं। देखें ब्रह्माण्ड पुराण 4.1.88। प्रभु ने उन्हें देवाकृति प्रदान की थी। यह एक अलग बात है कि वह देवाकृति उस समय विश्वमोहिनी के नगर में सुन्दर न मानी गई, जिस प्रकार आदि मानव की वर्तमान पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित चित्र–कृतियां सुंदर नहीं मानी जातीं। वे मानव आकृतियां उनके काल में सुन्दर ही रही होंगी। कुंभकर्ण वानरों को अपने उद्यान का आभूषण मानता है–

"नापराध्यंति मे कार्य वानराः वनचारिणः
जातिराय विधाना सो पुरोद्यान विभूषणं।"

वानर हमारे अपराधी नहीं है वे तो हमारे उद्यान के आभूषण हैं। नगर उद्यान की शोभा जंगली जीव नहीं हो सकते। रावण ने अनेक देवताओं को अपने वशवर्ती बनाकर अनेक सेवा–कार्यों में लगा रखा था। कपि उनके सुकर्मा देवताओं के एक वर्ग में से थे, जो रावण के उद्यान की देख रेख में लगाए गए थे। कुंभकर्ण कपि को उपवन की शोभा मानता है। शब्द वानर उपर्युक्त श्लोक में प्रयुक्त हुआ है जिससे बंदर का भ्रम हो गया है।

संभवतया यह कोई वनवासी जाति हो सकती है, जो उपवन की देखरेख, बागवानी का कार्य कुशलतापूर्वक करती हो। पौराणिक शब्द कोष में यही बात स्वीकार की गई है। वाल्मीकि रामायण में कपि/वानर/मर्कट पद कई बार आए हैं। पर कहीं भी इसका अर्थ बंदर नहीं है। वाल्मीकि रामायण में युद्ध प्रसंग में तैयारी के सतत श्रीराम कहते हैं–

न चैव मानुष रूपं कार्य हरिभिराहवे
एषांभवतु न संज्ञायुद्धेस्मिनयानो बले।

इस युद्ध में किसी को मनुष्य रूप नहीं धारण करना चाहिये। इस युद्ध में वानरों की सेना का हमारे लिये यही संकेत चिह्न होगा। इस स्वजन वर्ग में वानर ही हमारे चिह्न होंगे। केवल हम सात व्यक्ति ही राम लक्ष्मण विभीषण और उनके चार मंत्री मनुष्य रूप में रहकर युद्ध करेंगे अर्थात् वे वानर वस्तुतः मनुष्य थे परंतु युद्ध व नीति (नारदादिक के शाप को मान देने के लिये) के अंतर्गत उन्हें मनुष्य रूप में रहने से वंचित किया गया था। जब कुंभकर्ण के युद्ध प्रहार से घबराकर सैनिक भागने लगे थे, तो अंगद उनका उत्साहवर्धन करता हुआ कहता है–

कुलेषु जाता सर्वेस्मिन विस्तीर्णेषु महत्सुच
क्व गच्छत भय ग्रस्ता प्राकृत हरयो तथां
अनार्यो खलु यदभीर्तास्वियक्त्वा वीर्यप्रधानतः"

ऋ66ऋ31

तुम लोग महान और बहुत दूर तक फैले हुए श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न हुए हो फिर साधारण वानरों की भांति भयभीत होकर कहां भागे जा रहे हो ?यदि तुम पराक्रम छोड़कर भय के कारण भागते हो तो निश्चय ही अनार्य समझे जाओगे। महान कुल में उत्पन्न "उच्चकुल" "आर्य कुल" ये सब विशेषण जो सैनिकों के लिये प्रयुक्त हुए हैं, ये मनुष्य जाति के लिये हैं बन्दरों के लिये नहीं। बंदरों के लिये उच्चकुल की दुहाई कोई मायने नहीं रखती। एक बार नंदीश्वर की वानर मूर्ति देखकर रावण हंसा था। इसलिये उन्होंने कहा था मेरे समान, रूप व पराक्रम वाले ही तेरे कुल का नाश करेंगे। अतः नंदीश्वर के समान पराक्रमी सैनिकों ने वानर रूप धारण कर उसका नाश किया। जब नारद ने हरि भगवान से यह कहा कि "आपन रूप देहु प्रभु मोही" तब हरि ने अपना अर्थात हरि रूप प्रदान किया। अति अद्‌भुत उस रूप को देखकर सब लोग अचरज में पड़ गये। प्रश्न यह हुआ कि यह रूप क्या किन्नर, मृग या वानर या मनुष्य का है ?पशु किन्नर तो देवताओं की जाति के रूप में प्रसिद्ध हैं ही, मृग है या नहीं यहीं निश्चय होना था। मृग नहीं है अर्थात् नर है यह निश्चय हुआ। किन्नर नहीं, मृग नहीं, नर के साथ होने से तीसरा अर्थात् वानर मान लिया गया। कपि, मर्कट ये बंदर के पर्यायवाची होने से किसी को उन्हें बंदर मानने में कोई संदेह पैदा नहीं हुआ। जब कोई वस्तु या शब्द किसी एक अर्थ में प्रचलित हो जाता है तो वह उसी अर्थ में रूढ़ हो जाता है। यही हरि, वानर आदि शब्दों के साथ हुआ। बंदरों को संगठित कर उनसे काम लेना तो समझ में आता है, आज भी सर्कस या सिनेमा में मदारी जानवरों से व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से काम लेते हैं, परंतु ये सब काम संकेतों द्वारा ही संपन्न कराये जाते हैं, किसी प्रकार वंश या कुल की दुहाई देकर नहीं। वंश का गौरव या स्वाभिमान मनुष्यों में ही संभव है, पशुओं में नहीं। सैनिकों को कुल की दुहाई दी गई। इससे सिद्ध होता है कि वे बंदर नहीं मनुष्य थे। यही नहीं वे आर्य संतान थे। युद्ध में सुग्रीव, हनुमान, जांबवान आदि सड़सठ करोड़ वानर हताहत होते हैं। विभीषण घायलों की कुशल क्षेम पूछने जाते हैं। जांबवान से पूछने पर वे कहते हैं— मैं देख नहीं सकता पर यह तो बताओ कि क्या पवन कुमार जीवित हैं। तो विभीषण पूछते हैं— आपने राम, लक्ष्मण, सुग्रीव आदि को छोड़ हनुमान का समाचार क्यों पूछा ? तो वे उत्तर देते हैं— जीवितं वीरे तु हतस्याप्रितं बलं हनुमत्युज्झितं प्राणे जीवंतापि मृतावयम्। यदि हनुमान जीवित हैं तो हम सब के जीने की आशा की जा सकती है क्योंकि वे हमें मृत्यु के दुख में से भी वापस ला सकते हैं। हनुमान ने ही प्राण त्याग दिये तो समझो हम तो जीते हुए ही मर गये। तब हनुमान ने पास आकर उनके पैर पकड़ लिये और उन्हें प्रणाम किया। इस प्रकार वैचारिक अभिव्यक्ति क्या किसी पशु द्वारा संभव है ? कुंभकर्ण के साथ युद्ध में सुग्रीव कहते हैं— महानियदे मयासह तवाद्‌भुतम अद्य भूतानि पश्यंतु शक शंबरयोरिव। आज इंद्र और शंबरासुर की भांति सब प्राणी मेरे साथ तुम्हारा युद्ध देखें और इस युद्ध में मुष्टियों की कड़कड़ाहट, हड्डियों का टूटना, रक्त का बहना और कवचों का टूटना आदि घटनाएं बड़े वेग से घटित होने लगीं। इससे यह ध्वनित होता है कि योद्धा कवच धारण किये हुए थे। वानर संगठन का मुष्टि युद्ध, पेड़ युद्ध और पहाड़ युद्ध तो समझ में आता है परंतु वानरों की कवच धारण करने वाली बात समझ में नहीं आती। यदि मात्र वनवासी वानरों को एकत्रित कर

राम ने युद्ध–कौशल में दक्ष रावण को परास्त कर दिया यहां तक तो ठीक परंतु उनके लिये कवच की व्यवस्था कहां से की ? क्या आधुनिक युग के समान कोई कवच या आयुध कारखाना खोल डाला था, जो तत्काल करोड़ों बंदरों को कवच उपलब्ध करा दिये गये। आज के मशीनी युग में अचानक इतने सारे सैनिकों को कवच उपलब्ध कराना संभव नहीं फिर उस समय इतने कवच कैसे उपलब्ध हो सके? यदि माया से उपलब्ध कराते तो नर देह की मर्यादा भंग होती। वस्तुतः वे सब मात्र बंदर न होकर विभिन्न देशीय राज्यों की सेनाओं के प्रशिक्षित सैनिक थे जो वानर जाति के थे। आगे चलकर वानर का पर्याय बंदर होने से उन्हें बंदर मान लिया गया। सीता की खोज में गये हनुमान अशोक–वाटिका में सीता को देख विचार करते हैं कि मैं सीता से वार्तालाप कैसे करूं ? संस्कृत भाषा में बोलूं तो सीता मुझे रावण समझेगी, अवश्य ही मुझे उस सार्थक भाषा का प्रयोग करना चाहिये जिसे अयोध्या की साधारण जनता बोलती है। यदि हनुमान मात्र बंदर होते तो सीता से सार्थक संवाद कैसे स्थापित कर सकते थे ? यह तो माना जा सकता है कि सीता पशु–पक्षियों की भाषा जानती हो जिसमें दोनों का संवाद हो सका हो। बंदर में कार्य करने की क्षमता तो होती है वैचारिक क्षमता नहीं। फिर बंदरों की अपनी भाषा होती है। वे उसी भाषा को जानते हैं। मनुष्यों की भाषा जन–भाषा और संस्कृत भाषा का ज्ञान और उन सभी भाषाओं में सम्यक प्रकारेण विचाराभिव्यक्ति की क्षमता होना बंदर में संभव नहीं। यदि ये कहा जाये कि वे अवतार थे तो अवतारी उत्कृष्ट शौर्य प्रदर्शन तो करते हैं परंतु जैविक मर्यादा का अतिक्रमण नहीं। इससे यह स्पष्ट होता है कि हनुमान बंदर नहीं वरन मानव थे। तब आर्यावर्त में शासक प्रवंश देव, आर्य, वानर एवं राक्षस थे। उन्हें निर्विकार क्षत्रियगण का एक भाग वानर नामक कपि माना जाये। आर्यों का भारत में वर्चस्व रहा, अच्छे बुरे सभी तरह के राजा हुए, उत्कृष्ट गुणशाली सम्राट आर्य देव नाम से संबोधित तथा प्रसिद्ध हुए, निकृष्ट–राक्षस नाम से संबोधित किये जाते रहे इसी तरह किसी राजपुरुष को उसकी उच्छृंखलता के कारण वानर नामकरण कर दिया गया। यह घटना प्रकाश में नहीं आई, पर वह राजपुरुष अत्यंत विस्तार को पा अपने उसी उपनाम से प्रसिद्ध हो गया। किसी कारणवश दिया गया विशेषण ही उस वंश का नाम रह गया। कालांतर में बंदर से अर्थ साम्य होने से उन्हें भी बंदर मानने का भ्रम प्रसूत हुआ जिसका निवारण नहीं हो पाया। उपर्युक्त तथ्यों के प्रकाश में निष्कर्ष है कि वे बंदर नहीं मानव थे। जहां तक जाम्बवान का प्रश्न है दक्षिण भारत में रीक्ष नाम पर्वत है उसके पास निवास करने वाले रीक्ष कहलाते थे। इसी कारण जामवंत को रीक्षराज कहा गया है। रीक्ष का अपभ्रंश अर्थ रीछ होने से उन्हें रीछ, भालू मानने की भ्रांति चल पड़ी। वस्तुतः वे रीक्ष पर्वत के निवासी मानव ही थे।

78 नाथवाड़ा शाजापुर म.प्र. 465001 मो.: 09479977635

rqy lh ekul ifr"Bku

d idk'ku lu 2003 l idkf'kr rqy lh ekul Hkkjrh fo'k"kkdk dk Øe

idkf'ku lu	fo'k"kkd	eY; #i;e
2003	रामकिंकर स्मृति ग्रंथ	25.00
2004	अवतार अंक	30.00
2005	सीता चरित अंक	30.00
2006	रामकथा के ऋषि	35.00
2007	रामकथा जस किंकर बरनी	40.00
2008	रामांक	40.00
2009	रामकथा–स्थल	65.00
2010	भारत के विभिन्न प्रदेशों की रामकथा	60.00
2011	लोक साहित्य और लोक जीवन में राम	75.00
2012	संस्कृत वाङ्मय में रामकथा	75.00
2013	रामकथा का सामाजिक, दार्शनिक और आध्यात्मिक पक्ष	75.00
2014–2015	तुलसी द्वारा प्रयुक्त सूक्तियाँ दो खंड प्रत्येक	75 और 100 रुपये
2016	तुलसी इतर रामकथाएँ	100 रुपये
2017	तुलसी का रचना–संसार	125.00
2018	विनयपत्रिका–दर्शन	

उपर्युक्त विशेषांकों के अतिरिक्त निम्नलिखित पुस्तकें भी उपलब्ध हैं–

1. रामचरित मानस एक विश्लेषण	संपादक– डॉ. प्रभुदयालु अग्निहोत्री	मूल्य 60 रुपये
2. अरथ अमित अरु आखर थोरे	गोरेलाल शुक्ल	मूल्य 35 रुपये
3. संस्कृति के स्वर	अम्बा प्रसाद श्रीवास्तव	मूल्य 40 रुपये
4. पथ के दीप	डॉ. समर बहादुर सिंह	मूल्य 35 रुपये
5. तुलसी वाङ्मयः विविध कोणों से	डॉ. दादूराम शर्मा	मूल्य 260 रुपये
6. तुलसी अनुक्रमणिका	मुक्तेश्वर सिंह	मूल्य 250 रुपये
7. अर्धालियों के पूर्णाकार	प्रभुदयाल मिश्र	मूल्य 200 रुपये
8. विचार–कण	एन.एल.खंडेलवाल	मूल्य 200 रुपये
9. भाषा के प्रश्न	एन.एल.खंडेलवाल	मूल्य 50 रुपये

प्राप्ति–स्थान–तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश मानस भवन, श्यामला हिल्स, भोपाल–462002
डाक द्वारा मंगवाये जाने पर डाक खर्च अतिरिक्त देय होगा।

dk.M dk uke lqnj D;k \

dfork

lqnj&dk.M&jpuk

i- jke i dk'k vujkxh

कर किष्किंधा कांड पूर्ण जब,
आगे कथा बढ़ाई थी।
"सुन्दरकांड" सृजन की सुंदर,
झलक सामने आयी थी।
पवन–पुत्र का प्रबल पराक्रम,
राम कृपा अविराम। शत–शत तुम्हें प्रणाम।
सीताजी का पता चल गया,
फिर लंका का दहन हुआ।
फिर समुद्र पर सेतु बँध गया,
सैन्य संगठन गहन हुआ।
"रामेश्वरम्"– स्थापना पूजन,
फिर आगे संग्राम।   शत–शत तुम्हें प्रणाम।
"सुंदरकांड"– सृजन करने में,
हनुमत पल–पल साथ रहे।
वे ही सुघर कांड के नायक,
प्रभु का पल–पल हाथ रहे।
अजर–अमर गुण–निधि–सुत माँ के
करे अनूठे काम। शत–शत तुम्हें प्रणाम।
"सुंदरकांड"– सृजन ने उनमें,
दृढ़ विश्वास जगाया था।
अपनी भक्ति प्रौढ़–सी उर
प्रथम बार–हर्षाया था।
पहली बार हुआ मन हल्का,
आया अल्प विराम। शत–शत तुम्हें प्रणाम।

"वंदनीय मानस के तुलसी"
महाकाव्य से साभार

ys[k

lqUnjdk.M dh f'k[kj ekU;rk dk vk/kkj

egkegk ik/;k; nof"k d yk ukFk 'kkL=h

गोस्वामी तुलसीदास जी का कालजयी ग्रन्थ रामचरित मानस सदियों से धर्मप्राण मानवों की संजीवनी बना हुआ है यह तो सुविदित तथ्य है। पिछले कालखंड में भक्तजनों में उसके सुन्दरकाण्ड की जो महिमा व्यापक रूप से फैली, समय–समय पर घर–घर में सुन्दरकाण्ड के सस्वर पारायण के, संगीतबद्ध कथाकथन के तथा सामूहिक पाठ के आयोजन होने लगे, लाखों भक्त प्रतिदिन सुन्दरकाण्ड के पाठ का पुण्य लेने लगे तथा सुन्दरकाण्ड की विशेष मान्यता देशभर में फैली उससे इस काण्ड को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना गया है यह धारणा बद्धमूल हो चली। इसका बड़ा कारण वैसे तो प्रबुद्धजनों को ज्ञात है किन्तु सामान्यजन इसके इतिहास से उतने अधिक परिचित नहीं हैं।

मुझे याद आ रहा है स्वतन्त्रता से पूर्व जयपुर की विद्वन्मण्डली में हुआ एक परिसंवाद जिसमें मूर्धन्य विद्वान पं. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी से पूछा गया यह प्रश्न कि सुन्दरकाण्ड में न तो राम की विजय वर्णित है, न कोई परम पावन धार्मिक माहात्म्य इसका प्रसिद्ध हुआ, फिर इसके पारायण को शीर्ष महत्व मिलने का क्या कारण है ? उस सभा में सुदीर्घ विद्वत्संवाद से यह स्पष्ट हुआ कि सुन्दरकाण्ड की शिखरस्तर की मान्यता केवल रामचरित मानस के सुन्दरकाण्ड को जिन कारणों से चमत्कारी महत्व मिला हुआ था उन्हीं कारणों से आजकल रामचरित मानस के सुन्दरकाण्ड को मिला है। उसका प्रमुख कारण है हमारे आराध्य रामभक्त हनुमान। हनुमान हैं तो राम के भक्त, उनके आराधक किन्तु सदियों से वे करोड़ों के स्वयं आराध्य भी तो हैं, देवता की तरह पूजे जाते हैं, उनके अनेक मन्दिर बने हुए हैं, अनेक भक्त हैं।

अपने आराध्य की गाथा का गान और स्मरण आराधक का पावन कर्तव्य होता है। तभी तो कृपाभक्त श्रीमद्भागवत आदि का पाठ करते हैं, रामभक्त रामायण का, देवीभक्त दुर्गा–सप्तशती का। हनुमद् भक्तों के लिए कौनसा धर्मग्रन्थ आराध्य बने ? उन पर कोई पुराण या चरित्रग्रन्थ प्राचीनकाल से प्रसिद्ध है नहीं। उनकी स्तुतियाँ कवियों ने छुटपुट रूप से अवश्य लिखी हैं, उनका पाठ भले ही कर लो, कथावाचन

या मूल ग्रन्थ की तरह उसकी पूजा तो हो नहीं सकती। इसलिए कुछ सदियों पूर्व यह मान्यता स्थापित हुई कि वाल्मीकि रामायण का सुन्दरकाण्ड जिसके नायक श्रीहनुमान हैं, हनुमद् भक्तों का मूल आराध्य ग्रन्थ माना जाए। यह बतलाने की आवश्यकता नहीं कि सुन्दरकाण्ड में हनुमान का पराक्रम, उत्कृष्ट आत्मबल, उद्देश्य को प्राप्त करने का दृढ़ संकल्प और शिखर स्तर की क्षमता जिस प्रकार वर्णित है तथा उनके मुख से निकले कुछ श्लोक जिस प्रकार रामभक्ति की दृढ़ता के प्रतीक लगते हैं, उन्हें देखकर वाल्मीकी रामायण का सुन्दरकाण्ड इष्ट की प्राप्ति का अमोघ उपाय माना जाने लगा। इसके 68 सर्गों का किस प्रकार साप्ताहिक पाठ किया जाए, मासिक पारायण कैसे किया जाए इत्यादि के अनेक मार्ग बतलाए गए। कुछ भक्त इष्टसिद्धि के लिए इसका दैनिक पाठ करने लगे, उन्हें यह कण्ठस्थ हो गया। इसके अनेक उदाहरण बतलाए जाने लगे।

वाल्मीकि रामायण का सुन्दरकाण्ड जिस प्रकार हनुमान जी का प्रतीक धर्मग्रन्थ बन गया था और हनुमद्भक्तों के लिए वेद या गीता की तरह पूज्य बन गया था, उसी प्रकार रामचरितमानस का सुन्दरकाण्ड हनुमद्भक्तों का मूल ग्रन्थ माना जाने लगा। स्वयं गोस्वामी तुलसीदास जी संभवतः यह मानते थे कि "रामायण निगदितं'' चरित्र जो हनुमान जी का है वह सुन्दरकाण्ड में ही है। तभी तो उन्होंने अपने सातों काण्डों में समस्त देवताओं की मंगलाचरण स्वरूप स्तुतियां लिखी हैं (श्रीराम की शंकर की आदि) किन्तु हनुमान जी की स्तुति से मंगलाचरण केवल सुन्दरकाण्ड में किया है जो भक्तों का कण्ठहार बना हुआ है

अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकल गुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि।।

तुलसीदास जी संस्कृत के मूर्धन्य विद्वान एवं व्यापक अध्येता थे किन्तु उन्होंने संस्कृत के जो पद्य लिखे उनमें जानबूझकर व्याकरण या छन्द की कुछ स्वतन्त्रता ले ली, जिसे कुछ समालोचक "संस्कृतभासी हिन्दी" भी कहने लगे। ऐसी थोड़ी स्वतंत्रता इस पद्य में भी है। संस्कृत व्याकरण में "धामं" नहीं बनता "धामानं" बनता है। यह संस्कृत छन्द "मालिनी" नाम का है। जिसके लक्षण के अनुसार "रघुपतिप्रियभक्तं" में ति का उच्चारण सही नहीं माना जाता, "प्रि" अक्षर आगे होने के कारण वह दीर्घ बोला जाएगा, होना चाहिए हृस्व, इसलिए संस्कृत पण्डितों ने इस पद्य का कुछ संस्कार इस प्रकार कर दिया

अतुलितबलधामस्वर्णशैलाभ देहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि।।

अनेक विद्वानों को मैंने इस प्रकार हनुमान जी की स्तुति करते हुए सुना है। यह जानकारी तो यहां प्रसंगवश दे दी है। अस्तु।

आशय यह है कि जब से हनुमान जी को आराध्य मानकर करोड़ों भक्त उनकी आराधना को समर्पित हुए, उनका एकमात्र आधारग्रन्थ, आराधना का साधन प्रतीकरूपी पुण्य ग्रन्थ बना सुन्दरकाण्ड। संस्कृतवालों के लिए वाल्मीकीय रामायण का, सामान्य भक्तों के लिए अर्थात् हिन्दी और जनभाषावालों के लिए रामचरितमानस का "सुन्दर काण्ड" हनुमान जी की "भागवत" बन गई। जो हनुमान को प्रसन्न करना चाहेंगे वे सुन्दरकाण्ड का

पाठ करेंगे, पारायण करेंगे या कराएँगे।

ukedj.k

अनेक विद्वानों की तो यह मान्यता भी है कि सुन्दरकाण्ड का नाम "सुन्दर" क्यों रखा गया ? इसके कारण भी हनुमान ही हैं। रामायण के अन्य सब काण्ड तो उनकी वर्ण्य वस्तु पर नामित हैं, बाल्यकाल का वर्णन बालकाण्ड में, अयोध्या के राज्य की समस्या का वर्णन अयोध्या काण्ड में, वनवास का वर्णन अरण्यकाण्ड में, किष्किन्धा का निवास किष्किन्धाकाण्ड में, रामरावण युद्ध "युद्धकाण्ड" में (वाल्मीकि ने इसे युद्धकाण्ड कहा है, तुलसीदासजी ने लंकाकाण्ड)। इन सबमें तो वर्ण्यवस्तु से काण्ड का नामकरण है, "सुन्दरकाण्ड" को "सुन्दर" नाम क्यों दिया गया ? उन विद्वानों की मान्यता है कि "सुन्दर" नाम है हनुमान जी का। इसीलिए इसे या तो हनुमत्काण्ड कहना था या सुन्दरकाण्ड। वाल्मीकि ने इसे सुन्दरकाण्ड कहा। तुलसीदासजी ने भी हनुमान काण्ड न कहकर सुन्दरकाण्ड कह दिया। जो विद्वान इस मान्यता से परिचित नहीं हैं या जिनके गले यह बात नहीं उतरती "सुन्दरकाण्ड" नाम के औचित्य की भाँति–भाँति से परिभाषा करने लगे जो प्रसिद्धि पा गई। "सुन्दरे सुन्दरं दृश्यं सुन्दरे सुन्दरी कथा। सुन्दरे सुन्दरी सीता सुन्दरे किं न सुन्दरम्!" अर्थात् सुन्दरकाण्ड का नाम इसलिए पड़ा कि उसमें सब कुछ सुन्दर है। यह बात हमारे गले नहीं उतरती क्योंकि ऋतुओं के सौन्दर्य का वर्णन तो किष्किन्धा काण्ड आदि अन्य काण्डों में मिलता है। उनमें तो अधिक उत्कृष्ट सौन्दर्य वर्णित है अतः केवल इसे ही सुन्दर बताना तो बड़ी ज्यादती है।

अन्य कुछ विद्वानों ने भी स्पष्ट किया है कि "सुन्दर" अभिधान हनुमान जी का ही है। बाल्यकाल में उनकी माता अंजनी उन्हें "सुन्दर" संबोधन देती थीं। एक विद्वान गोस्वामी कपिल देवगिरि ने "सुन्दर काण्ड" का सम्पादन कर उसकी जो वैदुष्यपूर्ण भूमिका लिखी है उनमें "सुन्दर" को वानर का पर्याय बताया है और इसके प्रमाण दिए हैं। कुछ नानार्थ कोशों में वानर का पर्याय सुन्दर मिलता भी है। हनुमानजी का जो सहस्रनाम बाद में सुप्रसिद्ध हो गया उसमें भी हनुमान का एक नाम बताया गया है "सुरसुन्दर" किसी पाठ में "स्वरसुन्दर"।

''अष्टमूर्तिर्नियोपेतो विरूपः सुरसुन्दरः।''

(हनुमत्सहस्रनाम, श्लोक सं.123)

जो भी कारण रहा हो, यह तो स्पष्ट ही है कि सुन्दरकाण्ड को ही वाल्मीकीय रामायण और रामचरितमानस में से चुनकर भक्तिपाठों और पारायणों में सर्वाधिक महत्व मिलने का कारण हैं रामभक्त श्रीहनुमान्।

कुछ सदियों से दोनों महाकाव्यों को सुन्दरकाण्ड के पाठ और पारायण की विधियां भी निर्धारित की गई हैं। वाल्मीकि के 6 काण्डों का पाठ कुछ भक्त एक दिन में, कुछ दो दिनों में, कुछ 9(नौ) दिनों में, कुछ चौदह दिनों में, कुछ 16 दिनों में, कुछ 20 दिनों में, कुछ 68 दिनों में करते रहे हैं। इनके लिए कौन से दिन कितने सर्गों का पाठ किया जाए यह निर्धारित किया गया। इसी प्रकार रामचरितमानस के सुन्दरकाण्ड का पारायण, कथावाचन या गान एक दिन किया जाने लगा जिसमें बहुत अधिक समय नहीं लगता। कुछ भक्त एक सप्ताह में कुछ नौ दिन में इसका पाठ पूरा करते हैं।

o.;lOLr

हनुमान अतुल बलशाली बतलाए गए हैं किन्तु उनके लिए यह विशिष्ट शर्त भी प्रसिद्ध है कि जब

तक कोई उनकी शक्ति का स्मरण उन्हें नहीं कराता, वे अपनी अमोघ शक्ति को भूले रहते हैं। उनकी इस शक्ति का स्मरण जम्बवान किष्किन्धा काण्ड के अन्त में कराते हैं–

''कवन सो काज कठिन जग माहीं।
जो नहिं होइ तात तुम्ह पाही।।''

इसके बाद हनुमान में जो आमोघ शक्ति उदित होती है वह सुन्दरकाण्ड में वर्णित है। वे मच्छर का सा सूक्ष्म शरीर भी धारण कर लेते हैं, "कनकभूधराकार सरीरा" अर्थात् स्वर्णमय सुमेरु पर्वत का सा विशाल शरीर भी धारण कर लेते हैं, अतुलित बल का प्रदर्शन भी करते हैं, दुर्दान्त राक्षसों का संहार कर देते हैं किन्तु ब्रह्मास्त्र का सम्मान करते हुए जानबूझकर उसका प्रतिवाद नहीं करते, समर्पण कर देते हैं। उनका यह विविधरंगी चरित्र एक आदर्श प्रस्तुत करता है। वे सबकुछ कर पाने में समर्थ हैं किन्तु दशग्रीव आदि का जो संहार स्वयं श्रीराम के हाथों होना अभिलिखित है उसमें हस्तक्षेप नहीं करते।

भारतीय संस्कृति के आदर्श चरित्र के ये सभी लक्षण हनुमान के चरित्र में सुन्दरकाण्ड में गोस्वामी तुलसीदास जी ने समाहित कर वर्णित कर दिये हैं। यह वैविध्यमय महिमा अन्य किसी चरित्र में नहीं पाई जाती। अतः सुन्दरकाण्ड हनुमान के चरित्र की आधारभूमि के रूप में हनुमद्भक्तों की असाध्य पावनवाणी बन गया। सदियों से हनुमद्भक्ति उसके पाठ को समस्त कामनाओं की पूर्ति का प्रदायक और अपने आराध्य की प्रसन्नता का साधन मानते रहे हैं। तभी तो साहित्य समीक्षकों का यह कथन स्मृति पटल पर आकर उभरता है कि रामायण और रामचरितमानस के नायक तो राम हैं किन्तु सुन्दरकाण्ड के नायक हनुमान हैं। सच भी है, अन्य देवताओं के चरित्र वर्णन के पुराण, धर्मग्रन्थ महाकाव्य आदि तो अनेक सदियों से उपलब्ध रहे हैं किन्तु हनुमान के चरित्र का कोई एक ग्रन्थ नहीं रहा। उस अपेक्षा की पूर्ति सुन्दरकाण्ड ने की। उसकी शिखर मान्यता का यही रहस्य है इसका कुछ आभास इस विवरण से मिल सकता है।

आधुनिक युग में संभवतः इस प्रकार की अपेक्षाओं की पूर्ति करने के लिए "रामचरित मानस" की तर्क पर नवयुगीन लेखकों द्वारा "हनुमान चरितमानस" जैसे ग्रन्थ लिखे गए हैं और प्रकाशित हुए हैं। दिल्ली के चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट श्री कैलाश चन्द्र शर्मा का लिखा विशाल चरित्रकाव्य श्री हनुमान चरितमानस प्रकाशित हो चुका है। संस्कृत में तो मारुतिशतक (पं. रामावतार शर्मा), हनुमद्दूतम् (पं. नित्यानन्द शास्त्री), हनुमत् स्तोत्रम् (अखण्डानन्द सरस्वती) आदि छोटी स्तुतियाँ तथा लघुकाव्य हनुमान को समर्पित किए जा चुके हैं, हिन्दी में भी उनकी स्तुतियाँ और वर्णन लिखे गए हैं किन्तु उनकी आराधना का प्रमुख आधार सुन्दरकाण्ड आज भी बना हुआ है जो धर्म के इतिहास में इसी कारण स्वर्णाक्षरों में अभिलिखित हो गया है।

C/8, पृथ्वीराज रोड, सी स्कीम, जयपुर (राजस्थान)

ys[k

dk.M dk uke ^lUnjdk.M* D;k \

Mk- nknjke 'kek

अपने रामचरितमानस महाकाव्य को गोस्वामीजी ने सात कांडों में विभाजित किया है– बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्य काण्ड, किष्किन्धा काण्ड, सुन्दरकाण्ड, लंकाकांड और उत्तर काण्ड। बालकाण्ड का नामकरण महान चरित्र नायक राम के जन्म, बाल्यावस्था, यौवन और विवाह की घटनाओं पर केन्द्रित होने के कारण दिया गया है। अयोध्याकाण्ड, अरण्य काण्ड, किष्किन्धा काण्ड और लंका काण्ड इन स्थानों पर घटित महत्वपूर्ण घटनाओं के कारण ये नाम दिए गए हैं। "उत्तर काण्ड" नाम राम के उत्तरकालीन जीवन से सम्बद्ध होने और भक्ति, ज्ञान, दर्शन आदि के जटिल प्रश्नों के उत्तर (समाधान) दिए जाने के कारण दिया गया हैं किन्तु पाँचवें काण्ड को "सुन्दरकाण्ड" नाम क्यों दिया गया है ?यह विचारणीय है।

"सुन्दरकाण्ड" के सूत्रधार, प्रधानपात्र अथवा नायक हैं अतुलित बलधाम, हेमशैलाभदेह, दनुज वन कृशानु, ज्ञानि शिरोमणि, सकल गुण निधान, वानर श्रेष्ठ, राम के प्रियभक्त हनुमान। वे धीरोदात्त नायक हैं। धीरोदात्त नायक महाबली, अत्यंत गंभीर, क्षामावान, डींग न हांकने या आत्मप्रशंसा न करने वाला (अविकत्थन) अविचल, निरहंकार और दृढ़व्रती होता है–

महासत्वोऽतिगंभीरः क्षमावानविकत्थनः।
स्थिरो निगूढाहंकारो धीरोदात्तो दृढ़व्रतः।।

ये सभी गुण हनुमान में पाये जाते हैं। उनका व्यक्तित्व अत्यंत सुंदर और मनोहर है। वे अतुलित बलधाम होने पर भी अत्यंत विनम्र हैं। निरहंकारता या निरभिमानता वीरता का आभूषण हैं– अनुस्तेकखलु विक्रमालंकारः उक्ति उन पर पूरी तरह चरितार्थ होती है। जब अंगद, जामवान् आदि वीर समुद्र पार करके सीता का पता लगाकर लौटने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हैं तो भी हनुमान् चुप रहते हैं और जामवान् जब उन्हें उनकी शक्ति और कर्तव्य का स्मरण दिलाते हैं– "पवन तनय बल पवन समाना" और "रामकाज लगि तब अवतारा" तभी वे अपना पर्वत के समान विशाल आकार धारण करते हैं तथा अत्यंत उत्साह भरे स्वर में जामवान् से पूछते हैं– "जामवंतजी, मेरा मार्गदर्शन कीजिए कि मैं क्या करूँ ? क्या मैं समुद्र को लाँघकर रावण को सेना सहित मौत के घाट उतारकर त्रिकूट पर्वत को

ही, जिसमें लंका स्थित है और उसमें माता जानकी हैं, उखाड़कर ले आऊँ?" तब जामवान् उनके अमित विक्रम पर विवेक का अंकुश लगाते हैं कि उन्हें तो लंका जाकर सीताजी का पता लगाकर उनका कुशल समाचार राम को बतलाना है। फिर सेनासहित रावण का वध करके लंका विजय और सीता की मुक्ति का कार्य तो राम ही करेंगे।

हनुमान अपने कर्तव्य पालन में दृढ़ हैं। वे मैनाक पर्वत के अपने ऊपर थोड़ा विश्राम कर लेने के आग्रह को बड़ी विनम्रता से अस्वीकार करके "राम काजु कीन्हें बिना मोहि कहाँ विश्राम" के अपने लक्ष्य पर आगे बढ़ जाते हैं। देवताओं की प्रेरणा से सुरसा द्वारा ली गई परीक्षा में अपने असीम बल और प्रत्युत्पन्न मति से उत्तीर्ण होते हैं। सुरसा के अपना मुख सौ योजन फैलाने पर हनुमान का अति लघुरूप धारण करके उसमें प्रवेश कर तुरंत बाहर आ जाना उनके प्रत्युत्पन्न मतित्व का परिचायक है।

राक्षसी सिंहिका को मौत के घाट उतार कर समुद्र पार करके तट पर अवस्थित वन की सुंदरता का अवलोकन करते हुए एक विशाल पर्वत पर चढ़कर चारों ओर परिखा से सुरक्षित स्वर्ण के मणिजटित सुंदर परकोटे से घिरी सुंदर स्वर्णपुरी लंका को देखते हैं जो सुंदर, हाटों, बाजारों और वीथियों से सुसज्जित थी। इस तरह लंकापुरी की सुंदरता का चित्रण होने से भी इस कांड का नाम "सुंदरकांड" चरितार्थ होता है।

हनुमान् को अणिमा (जिसमें छोटे से छोटा आकार ग्रहण किया जा सकता है।) "महिमा" (जिससे पर्वत के समान विशाल काय हुआ जा सकता है), "गरिमा" (जिससे पर्वत के समान गुरु (भारी) हुआ जा सकता है) आदि सिद्धियां सहज ही प्राप्त हैं, जिनसे वे आवश्यकतानुसार लघु से लघु और पर्वत के समान विशाल आकार धारण कर सकते हैं। वे मशक के समान छोटा आकार धारण करके लंका में प्रवेश करते हैं और लंका की सजग प्रहरी लंकिनी को पराजित करके अपनी अजेयता का परिचय देते हैं।

एक श्रेष्ठ और सफल गुप्तचर के सभी गुण उनमें हैं– धैर्य, सहिष्णुता, सूझबूझ, समुचित समय की प्रतीक्षा और अवसरानुकूल निर्णय लेने की क्षमता। प्रथम रात्रि के अंतिम प्रहर में वे भगवती सीता के आश्रम स्थल अशोक वृक्ष तक पहुंचकर भी उसके पल्लवों में पूरे दिन और दूसरी रात के दूसरे पहर तक धैर्यपूर्वक उचित अवस्था की प्रतीक्षा करते रहते हैं। रावण के भगवती सीता के प्रति कटु वचन, उन्हें मारने के प्रयत्न और उसके आदेश पर निशाचरियों द्वारा उन्हें प्रताड़ित किए जाने को भी वे बिना उत्तेजित हुए चुपचाप देखते रहते हैं। फिर सीता को त्रस्त करने वाली राक्षसियों को रामभक्त विवेकशील, सन्नारी त्रिजटा अपना स्वप्न सुनाती हैं जिसमें उसने वानर द्वारा लंकादहन और रावण की आसन्न मृत्यु का संकेत पाया था, जिसे सुनकर वे सभी भयभीत हो जाती हैं और सीता से क्षमा याचना करने वहाँ से खिसक जाती हैं। फिर त्रिजटा सीता को राम की शक्ति का स्मरण दिलाकर आत्मदाह करने से रोक देती है। सीता के प्रति आत्मिक स्नेह रखने और उन्हें जीने का सम्बल प्रदान करने वाली त्रिजटा के व्यक्तित्व की सुंदरता का सन्निवेश और पंचकन्याओं– अहल्या, मंदोदरी, तारा, कुंती और द्रौपदी में परिभाषित रावण की पट्टमहिषी मंदोदरी का अपने पति राक्षसराज महाबली श्री रावण को सीता का वध करने के जघन्य कार्य से रोकना और फिर रामदूत महावीर हनुमान के अप्रतिम पराक्रम का स्मरण दिलाते हुए सीता को राम को सादर लौटा देने की मंत्रणा– "सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हे, हित न तुम्हार संभु अज कीन्हे" उनके नारीत्व की, पतिव्रता पत्नीत्व की, उनके नर्म साचिव्य की सुंदरता का उद्घाटन भी "सुन्दरकाण्ड" नाम को

चरितार्थ कर रहे हैं।

प्रियतम राम के असह्य विरह से विकल, राक्षसियों की प्रताड़ना और रावण की मौत के घाट उतार देने की धमकियों से त्रस्त सीता अपने जीवन को समाप्त कर देने के लिए जब अशोक से पल्लवों के रूप में अंगारे मांगने लगती हैं तभी उचित अवसर जानकर हनुमान राम नामांकित मुद्रिका उनके सामने गिरा देते हैं और मधुर स्वरों में राम गुणगान करते हुए उनके प्रति राम के अनन्य अनुराग और राम–सुग्रीव मैत्री का वृत्तांत सुनाकर उनके दग्ध हृदय में शीतल प्रलेप लगा देते हैं और अपने वानर दल के बल–विक्रम के प्रति शंकालु सीता को अपना कनक भूधराकार शरीर दिखाकर भी फल खाने के बहाने अशोक वाटिका का विध्वंस करने, रावण पुत्र अक्षयकुमार जैसे महाबली निशाचरों को अकेले मौत के घाट उतार कर अपनी महावीरता का परिचय देकर उनके मन में लंका विजय का विश्वास जगा देते हैं। फिर लंका के युवराज और रावण के प्रधान सेनापति मेघनाद द्वारा नागपाश से बांधे जाकर वे रावण के दरबार में ले जाए जाते हैं। देवगण और दिक्पाल भी रावण से भयभीत रहते हैं किन्तु हनुमान् रावण की सभा में सर्पों के बीच गरुड़ की भाँति निर्भय प्रवेश करते हैं और रावण को राम का यथार्थ परिचय देते हुए सीता को उन्हें सादर लौटा देने की समुचित सीख देते हैं–

''जाकें डर अति काल डराई,
जो सुर–असुर चराचर खाई,
तासों बयरु कबहुँ नहिं कीजै,
मोरे कहे जानकी दीजे''

क्योंकि राम त्रिदेवों– ब्रह्मा, विष्णु, महेश से ऊपर "नारायण" का अवतार हैं इसलिए सहस्रों त्रिदेव भी उनसे तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकते – "संकर सहस विष्नु अज होही, सकहिं न राखि राम कर द्रोही" किन्तु घोर अहंकारी रावण उनके परम हितकारी परामर्श को ठुकरा देता है और लंकादहन का कारण बनता है।

राक्षसराज रावण के मंत्रिमण्डल के माननीय सदस्य रावणानुज विभीषण की सन्मंत्रणा भी इस काण्ड के नाम को सार्थक करती है कि पर नारी सीता के प्रति उसकी (रावण की) आसक्ति निंदनीय और विनाशकारी है। राम मात्र नरभूपाल नहीं, काल के भी काल जगन्नियंता जगदीश्वर हैं अतः उन्हें उनकी पत्नी सीता को सादर लौटा देने में ही राक्षस कुल सहित राक्षसराज रावण की भी भलाई है। किन्तु उन्हें तिरस्कारपूर्वक लंका से निष्कासित करके रावण लंका के सर्वनाश का कारण बनता है।

विरहाग्नि में दग्ध होकर प्रेम तप्त कांचन (कुंदन) की तरह परिशुद्ध होकर दमक उठता है– और भी भास्वर और अतिसुंदर हो जाता है। सीता की विरहावस्था का मार्मिक चित्रण हनुमान के शब्दों में देखें– "नाम पाहरु दिवस निसि, ध्यान तुम्हार कपाट, लोचन निज पद जंत्रित, प्रान जाहि केहि वाट ?" तथा "विरह अगिनि तनु तूल समीरा– स्वास जरइ छन माँहि सरीरा, नयन सुखहिं जलु निज हित लागी, जौं न पाव देह विरहागी!" सचमुच, उनकी विरह–वेदना वर्णनातीत है–

''सीता कै अति बिपति बिसाला,
बिनहिं कहे भलि दीनदयाला,
निमिष – निमिष करुनानिधि
जाहिं कलप सम बीति!''

राम भी एक पत्नीव्रती अनन्य प्रेमी हैं। सीता जब उनके संदेशवाहक हनुमान से सानुज राम का कुशल–समाचार पूछती हैं और अपने प्रति उनके अनन्य अप्रतिम प्रेम और कोमलचित्त का स्मरण करके करुणा विगलित हो जाती हैं– ***''कबहुँ नयन मम सीतल ताता, होइहहिं निरखि स्याम मृदु गाता ?''*** और पुकार उठती हैं– अहह! नाथ, हौं

निपट बिसारी तब हनुमान राम के उनके प्रति अत्यंत प्रगाढ़ प्रेम को बतलाते हैं– ***''जनि जननी मानहु जियँ ऊना, तुम्ह तें प्रेम राम कें दूना।''*** और उनकी असह्य विरह वेदना से विमल राम की दशा का मार्मिक चित्रण करते हैं कि उनके लिए तो उन्हीं के शब्दों में–

नव तरु किसलय मनहुँ कृसानू,
काल निसा सम निसि ससि भानू,
कुवलय बिपिन कुंत बन सरिसा,
बारिद तपत तेल जनु बरिसा।
जे हित रहे काल तेइ पीरा,
उरग स्वास सम त्रिविध समीरा है।

इस तरह सीता राम के विशुद्ध और मनोहर पारस्परिक प्रेम के चित्रण के कारण भी इस कांड का नाम "सुंदरकांड" सार्थक होता है।

प्रियतमा का प्रिय कुशल समाचार निवेदित करने वाले हनुमान के प्रति राम का कृतज्ञता ज्ञापन

प्रति उपकार करौं का तोरा,
सनमुख होइ न सकल मन मोरा,
सुनु सुत उरिन मैं नाहीं

रूप राम के व्यक्तित्व के सुंदरतम पक्ष का उद्घाटन भी "सुन्दरकाण्ड" नाम को सार्थक कर रहा है।

"शरणागत वत्सलता" राम के व्यक्तित्व का अन्य अभिनंदनीय और उल्लेखनीय पक्ष है। जब वे लंका से तिरस्कारपूर्वक निष्कासित रावणानुज विभीषण को न केवल अपनी शरण में लेते हैं अपितु उन्हें रावण के जीते जी लंका के राजपद पर अभिषिक्त करके अपनी उदारता और विशाल हृदयता का परिचय देकर "सुन्दरकाण्ड" नाम को सार्थक कर देते हैं।

सेव्य (स्वामी) राम की विशाल हृदयता, जिसमें वे सेवक हनुमन के प्रति कृतज्ञता से भरकर कह उठते हैं– ***''सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाही''*** और इस पर सेवक हनुमान की निरभिमान विनम्रता जो प्रभु के चरणों में गिरकर उनसे उन्हें कर्तव्य के अहंकार से मुक्त रखने के लिए "पाहि पाहि" (रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए) पुकार उठती है, "सुन्दरकाण्ड" की सुंदरता में चार चाँद लगा देती है। प्रभु राम अपने कर कमलों को समर्पित भक्त हनुमान के मस्तक पर रख देते हैं, इस दृश्य का स्मरण करके भगवान शंकर भी भाव–विह्वल हो जाते हैं और भगवती पार्वती को आगे की सुंदरकथा सुनाते हैं कि किस तरह समुद्र के पार जाने, रावण के अजेय दुर्ग का विध्वंस और लंकापुरी का दहन करने आदि प्रश्नों के उत्तर हनुमान निरभिमान विनम्रता से देते हुए बदले में राम से कुछ नहीं मांगते, मांगते हैं तो केवल सतत् सेवा वाली अनपायनी भक्ति। भक्त प्रवर चरित नायक महावीर हनुमान के चरित्र की यह हृदयहारी सुंदरता भी "सुन्दरकाण्ड" को नाम से सार्थक कर रही है।

समुद्र को सुखाने का सामर्थ्य रखने पर भी विभीषण के परामर्श पर राम का समुद्र के तट पर बिना अन्न जल ग्रहण किए बैठकर उससे मार्ग देने के लिए प्रार्थना करना– एक महावीर की विनम्रता के सौन्दर्य का प्रकटीकरण भी इस काण्ड को "सुन्दरकाण्ड" बना रहा है।

महाराज बाग, भैरोगंज, सिवनी (म.प्र.) 480661 मो.: 8878580467

ys[k

lUnjdk.M lUnj D;k\

Mk- jke'ojih lkn xIr

मानव–जीवन को सुन्दर बनाने के सुन्दर सूत्र सुन्दरकाण्ड में संजोये गये हैं, अतः इस काण्ड का नाम सुन्दर काण्ड विश्रुत ही है। जीवन की समग्र सुन्दरता के लिये यहाँ निरूपित संविधान परम सुन्दर है, यथा–

''काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ।
सब परिहरि रघुवीरहिं भजहु भजहिं जेहि संत।''

रा.च.मा. 5:38

"सत्यं शिवं सुन्दरं" भारतीय संस्कृति का शोभन सूत्र है। सत्य और शिव जहाँ है वहाँ सौन्दर्य है। संस्कृत के महाकवियों ने सुन्दरता की बड़ी मनोज परिभाषायें प्रस्तुत की है। महाकवि कालिदास ने सुन्दरता की परिभाषा करते हुये लिखा है कि–

''प्रियेषु सौभाग्यफला हि चारुता।''

कुमार सम्भव–5–1

अर्थात् सच्चा सौन्दर्य वही है जिस सौन्दर्य के द्वारा अपने प्रिय को अपनी ओर आकृष्ट किया जा सके।

महाकवि माघ ने भी ***''क्षणे क्षणे यन्नावतामुपैति तदेव रूप ंरमणीयताया।''*** निर्दिष्ट कर प्रतिक्षण नवोन्मेष प्राप्त वस्तु को "सुन्दरं" निरूपित किया है।

वस्तुतः जो आनन्दानुभव कराये, वह सुन्दर कथ्य है। वाल्मीकि रामायण से लेकर "रामचरितमानस" पर्यन्त प्रायः सभी रामायणों में सुन्दरकाण्ड निरूपित है। "सुन्दरकाण्ड" नामकरण में वस्तु के अन्तः और बाह्य सौन्दर्य का अद्भुत, आह्लादक एवं परमानन्द–प्रदायि रहस्य है।

सौन्दर्य का एक पर्याय "भूषण" भी है। भूषण शोभा या सौन्दर्यान्तर्गत ही तो परिगणित है। महाकवि केशव ने तो स्पष्ट ही कहा है कि ***''भूषण बिन न राजई कविता, वनिता मित्त।''*** महाकवि भर्तृहरि भी कहते हैं कि सौन्दर्य के समस्त उपादानों से श्रेष्ठ एवं शाश्वत रहने वाला मधु–वाणी रूप भूषण है। यथोल्लेख है कि–

''क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं,
वाग्भूषणं भूषणम्।।''

नीतिशतकम्–19

महाकवि भर्तृहरि ने समस्त सौन्दर्यों का सौन्दर्य शील गुण को निर्दिष्ट किया है। यथा–

''ऐश्वर्यस्य विभूषणं सुजनता शौर्यस्य वाक्संयमो।
ज्ञानस्योपशमः श्रुतस्य विनयो वित्तस्यपात्रे व्ययः।
अक्रोधः तपसा क्षमा प्रभवितुर्धर्मस्यं निर्व्याजता।
सर्वेषामपि सर्वकारणमिदं शीलं परं भूषणम्।।''

नीतिशतकम्–83

"रामकथा" सहज सुंदर है। यथानिरूपित है कि–

''रामकथा सुन्दर करतारी।
संशय विहग उड़ावन हारी।''

रा.च.मा. 1–113–1

रामकथा के सभी आयाम भी "सुन्दर" हैं। यथा–

''सुठि सुन्दर संवाद वर, विरचे बुद्धि विचारि।
तेइ एहि पावन सुभग सर, घाट मनोहर चारि।।''

रा.च.मा. 1–36

गोस्वामी तुलसीदास सम्पूर्ण रामकथा को ही सुन्दर कथा कहते हैं। यथा–

विमलकथा वर कीन्ह अरंभा।
सुनत नसाहिं काम मद दंभा।।

रा.च.मा. 1–34–6

छंद सोरठा सुन्दर दोहा।
सोइ बहुरंग कमल कुल सोहा।।

रा.च.मा. 1–36–5

रामचरित मानस के "राम" शील रूप परम भूषणागार हैं। यथा–

शीलसुभाव न छल मन माही।

रा.च.मा.

इसीलिये वे परमानन्द हैं। यथोल्लेख है कि–

सुन्दर स्याम गौर दोउ भ्राता।
आनंद हू के आनंद दाता।।

रा.च.मा. 1–216–2

सम्पूर्ण रामकथा, उसके सर्व आयाम, सोपान, कथा–नायक आदि सभी सुन्दर हैं। तथापि रामकथा के रचयिता कविगण इस कथा के एक काण्ड को "सुन्दरकाण्ड" नाम–निरूपण की लालसा संवरण न कर सके। महाकवि तुलसीदास ने भी रामचरितमानस के पंचम काण्ड का नाम सुन्दरकाण्ड निरूपित कर उसकी एक विशिष्ट पहचान देने का श्लाघ्य उपक्रम किया है।

"शीलं परं भूषण" अर्थात् "शील" ही श्रेष्ठ सौन्दर्य है, क्योंकि "शील" शान्तिप्रद होता है और शान्ति ही तो परम उपलब्धि प्रगण्य है। मानव जीवन की श्रेष्ठ प्राप्ति "शान्ति" है, जो शील के पादप का सुफल है। शान्तिरूप सुमन की प्राप्ति–हित मानस के सुन्दरकाण्ड के प्रारंभ में शान्तस्वभाव "श्रीराम" की वन्दना की गई है। यथा–

"शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशन्तिप्रदं,
ब्रह्माशंभुफणीन्द्रसेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम्।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिं
वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूड़ामणिम्।।"

व्यक्ति तब सुन्दर बनता है, जब वह निर्विकार हो। इसीलिये गोस्वामी जी ने अपने माध्यम से मानव मात्र के लिये (सभी के मन) निर्विकार होने की कामना की है। यथा–

भक्तिं प्रयच्छ रघुपुङ्गव निर्भरां मे।
कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च।।

रा.च.मा. 5–2

सुन्दरकाण्ड का अर्थ सुन्दर समय है। व्यक्ति के जीवन का सुन्दर समय तब होता है , जब उसे अपने सत्कर्मों से शुभाशीष प्राप्त होता है।

रामचरितमानस के सुन्दरकाण्ड के नायक हनुमान जी हैं। सुन्दरकाण्ड के प्रारंभ में ही श्री हनुमान जी ने अपनी बुद्धि और बल से सुरसा नाम्नी अहिन की माता को प्रसन्न किया और अतुल शुभाशीष ग्रहण किया। यथोल्लेख है कि–

''रामकाज सब करिहहु, तुम्ह बल बुद्धि निधान।
आसिष देइ गई सो, हरषि चलेउ हनुमान्।।''

रा.च.मा., सुन्दरकाण्ड–दो.2

हनुमान जी ने फिर लंकिनी जैसी क्रूर राक्षसी से भी अनेक आशीष प्राप्त किये। यथा–

"गरल सुधारिपु करहिं मिताई।
गोपद सिन्धु अनल सितलाई।
गरुड़ सुमेरु रेनु समताही।
राम कृपाकरि चितवा जाही"।।

रा.च.मा. सुन्दरकाण्ड–4–2–3

अनन्त सुन्दर बनने के लिये व्यक्ति को आशीष लेना अनिवार्य है। हनुमान् जी ने पात्र–अपात्र सभी का मन जीता और उनसे आशीष लेकर अपना लक्ष्य–मार्ग प्रशस्त किया। उन्हें विभीषण का सत्संग मिला और अपनी अभीष्ट–प्राप्ति का सुगमन पंथ भी। उन्हें खलनायक रावण के व्यक्तित्व का प्रत्यक्षीकरण भी हुआ, जिससे कि आगे उसका सामना करने में कोई हताशा एवं बाधा या भयोत्पत्ति न हो तथा अपने उद्देश्य अर्थात सीता का अन्वेषण भी सहज हाथ लगा। हनुमान जी ने अपनी युक्ति, सहज सुन्दर स्वभाव और मनोरम, मर्मस्पर्शी व्यवहार से सीता जी का विश्वास जीता और फिर सीता जी के द्वारा दिये गये शुभाशीषों का अम्बार हस्तगत किया। यथा–

''आसिष दीन्हि रामप्रिय जाना,
होहु तात बल सील निधाना।
अजर अमर गुननिधि सुत होहू,
करहुँ बहुत रघुनायक छोहू''।।

रा.च.मा. सुन्दरकाण्ड–16–2, 3

शुभाषीष में सौन्दर्य है, सद्व्यवहार में सौन्दर्य है, सत्य में सौन्दर्य है, शील और संयम में सौन्दर्य है, निश्छलता और निर्मलता में सौन्दर्य है, धैर्य में सौन्दर्य है, सद् पराक्रम में सौन्दर्य है, विनम्रता एवं सुहित में सौन्दर्य है, सद्वत्ति और सत्कर्म में सौन्दर्य है। ये सभी सुन्दर गुण श्री हनुमान जी में विद्यमान हैं, जो मानस के सुन्दरकाण्ड के प्रमुख नायक हैं। राजा रावण को बड़ी विनम्रता से समझाइश दी है, हनुमान जी ने। यथा–

''विनती करउँ जोरि कर रावन,
सुनहु मान तजि मोर सिखावन।
देखहु तुम्ह निज कुलहि बिचारी,
भ्रम तजि भजहु भगत भयहारी''।।

रा.च.मा. सुन्दरकाण्ड–21 –7, 8

मोह सुन्दरता को नष्ट करता है। विकार तो सुन्दर से भी सुन्दर व्यक्ति को असुन्दर बना देते हैं। महाकवि तुलसीदास ने मोहादि विकारों जैसे असुन्दर बनाने वाले दुर्गुणों से मुक्त होने के लिये बड़ी मार्मिक चेतावनी दी है। यथा–

''मोहमूल बहु सूल प्रद, त्यागहु तम अभिमान।
भजहु राम रघुनायक, कृपासिन्धु भगवान।।''

रा.च.मा. सुन्दरकाण्ड–23

सुन्दर कृति में प्रसन्नता निहित है। सुन्दर कर्म आनन्द के सुखद शोभन सरोवर में सदा ही आलोड़न कराता है। श्री हनुमान जी सीता का पता लगाकर आये, तो उनके साथ उनके संगी साथी परम हर्षित हुये। यथा– *''मुख प्रसन्न तनतेज विराजा''* एवं *''हरषे सब बिलोकि हनुमाना।''* आदि इसके प्रमाण हैं।

कर्तव्य का भलीभांति परिपालन, संरचनात्मक

ढंग से एवं समर्पण भाव से कार्य के प्रति अनुरक्ति व्यक्ति को अपरमित सुन्दर बनाती है। मन, कर्म और वचन का ऐक्य सुन्दरता के लिये अपरिहार्य है। गोस्वामी जी ने व्यक्ति के लिये मन, वचन और कर्म के ऐक्य के प्रति आगाह किया है। यथा–

''मन क्रम वचन चरन अनुरागी।''

सु.का.–30–4

एवमेव–

''वचन काय मन मम गति जाही।
सपनेहु बूझिअ विपति कि ताही।।''

सु. काण्ड–31–2

"भजन" अर्थात् सेवाकार्य है। भज् सेवायां धातु से भजन शब्द निष्पन्न है। सेवा का सौन्दर्य शाश्वत्, चिरन्तन तथा अजरामर होता है। सेवाकर्म पर शीर्ष व्यक्ति भी अपने सेवक का ऋणी बनता है। मानस के सुन्दरकाण्ड में हनुमान जी का सेवाकार्य सम्पूर्ण काण्ड को ही परम सुन्दर बना रहा है। जीवन में सेवा धर्म अपनाने की प्रत्येक व्यक्ति को परम आवश्यकता है। जिस भी व्यक्ति का सेवाकार्य के प्रति स्मरण नहीं होता, वह तो अपने लिये विपत्ति को बुलावा देता है। यथोक्त है–

''कह हनुमंत विपति प्रभु सोई।
जब तब सुमिरन भजन न होई।।''

सु.का.–31–3

सेवाकार्य से परमात्मा भी व्यक्ति का ऋणी हो जाता है। यथोक्त है कि–

''सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं।
देखेउँ करि बिचार मन माहीं।।''

रा.च.मा. सुन्दरकाण्ड–31–7

प्रत्येक व्यक्ति को अपने उद्धार के लिये, सुख के लिये, मुक्ति के लिये एवं शान्ति के लिये सेवा–भाव की ही कामना करना चाहिये। जैसा उल्लेख है कि–

''नाथ भगति अति सुख दायनी।
देहु कृपा करि अनपायनी।।''

सुन्दरकाण्ड 33–1

सन्मार्ग पर गमन एवं सन्मार्ग प्रदर्शन परम सुन्दरता प्रदायक है। रामचरित मानस के सुन्दरकाण्ड में सुन्दरमार्ग प्रशस्त करने के अनेक प्रसंग है। राजा रावण की रानी मन्दोदरी अपने पति रावण के लिये नीतिसौन्दर्य मार्ग को निर्दिष्ट बनाती है कि–

''रहसि जोरि कर पति पग लागी,
बोली बचन नीति रस पागी।
सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें,
हित न तुम्हार संभु आज कीन्हें।''

रा.च.मा. सुन्दरकाण्ड 35–5, 10

माल्यवन्त और विभीषण की सद्सीख भी सुन्दर व्यक्तित्व निर्माण के लिये परमोपादेय रूप से निरूपित है। सम्पूर्ण मानस–समुदाय के लिये सुन्दर बनने की सीख बड़े ही सुचारु ढंग से गोस्वामी जी ने प्रस्तुत की है। यथा–

''जो आपन चाहै कल्याना,
सुजस सुमति सुभगति सुख नाना।
तो परनारि लिलार गोसाईं,
तजउ चउथि के चंद की नाईं।।
गुनसागर नागर नर जोऊ,
अलप लाभ भल कहइ न कोऊ।।''

रा.च.मा. सुन्दरकाण्ड–37–5, 6, 8

"सुमति" सुन्दरता का ही पर्याय है। अतएव सुमति बनाने के लिये गोस्वामी जी ने निर्देश दिया है। यथा–

''जहाँ सुमति तहँ सम्पति नाना।
जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना।।''

सुन्दरकाण्ड– 39 ख–6

गोस्वामी जी ने मन की निर्मलता को सौन्दर्य का अपरिहार्य तत्व निरूपित किया है। यथा–

''निर्मल मन जन सो मोहि पावा।
मोहि कपट छल छिद्र न भावा।।''

रा.च.मा., सुन्दरकाण्ड–43–5

दया, करुणा, सदाशयता आदि सद्‌गुणों से उपेत श्रीराम छविधाम कहे गये हैं। यथा–

''बहुरि राम छविधाम विलोकी।
रहेउ ठ्ठुकि एकटक पल रोकी।।''

सुन्दरकाण्ड–44–3

काम या इच्छा या याचनाएँ व्यक्ति की असुन्दरता की द्योतक हैं। विकार शोक का धाम है और राम अर्थात् सत्कर्म या सच्चरित्र परमसुंदर हैं। अतः उल्लेख है कि–

"तब लगि कुसल न जीव कहुँ,
सपनेहुँ मन विश्राम।
जब लगि भजत न राम कहुँ,
लोकधाम तजि काम।।"

रा.च.मा. सुन्दरकाण्ड–46

सद्‌गुण से व्यक्ति राम जैसा सच्चिदानन्द स्वरूप प्राप्त करता है एवं वह परमतत्व का उर–वासी बन जाता है। यथा निर्दिष्ट है कि–

''तजि मद मोह कपट छल नाना,
करउँ सद्य तेहि साधु समानां
समदरसी इच्छा कछु नाहीं,
हरषसोकभय नहि मन माही।
अस सज्जन मम उर बस कैसे,
लोभी हृदय बसई धनु जैसे।।''

रा.च.मा. सुन्दरकाण्ड– 47–3, 6, 7

कुटिलता, कृपणता, ममता (मोह), लोभ, क्रोध, काम आदि विकार सुन्दरता के बाधक तत्व हैं और इनके विपरीत सकल सुमंगल सौन्दर्य के प्रदायक सत्कर्म, विनय, मन, वाणी, कर्म का ऐक्य, निश्छलता, सेवा एवं निर्विकारता आदि सद्‌गुण हैं। इन सभी सद्‌गुणों से उपेत श्री हनुमान जी का चरित्र–वर्णन सुन्दरकाण्ड को उसके नाम की सार्थकता प्रदान करता है। सुन्दरकाण्ड में सुन्दर शब्द का सार्थक प्रयोग आठ बार हुआ है। यथा– मूधर सुन्दर, सुन्दरायतनाघना, स्याम सरोज दामसम सुन्दर, रामनाम अंकित अति सुन्दर, सुन्दर फलरूखा, लागे करन कथा अतिसुन्दर, सगुन भये सुन्दर शुभ नाना, सहज कृपन सन सुन्दर नीती। "सावधान मन करि पुनि संकर, लागे कहन कथा अति सुन्दर" से ही स्पष्ट है कि सुन्दर काण्ड अपनी अतिसुन्दर कथा के आधार पर ही "सुन्दरकाण्ड" नामकरण से विभूषित हुआ है।

अस्तु, रामचरितामनस का सुन्दरकाण्ड प्रत्येक मानव को एवं मानवजीवन को अपने सुन्दर चिन्तन एवं सुन्दर–कथा विवेचन से समग्र सौन्दर्य प्रदान करने में सक्षम है। लोक को सौन्दर्य प्रदान करने के कारण सुन्दरकाण्ड के नाम की सार्थकता स्वयं सिद्धि प्राप्त है। सुन्दरकाण्ड के विषय में कहीं गई यह उक्ति सारगर्भित एवं समीचीन ही है। यथा–

''सुन्दरे सुन्दरी सीता, सुन्दरे सुन्दरी कथा।
सुन्दरे सुन्दरः रामः सुन्दरे किं न सुन्दरम्।।''

तुलसी मानस भारती, जुलाई 2014

श्रीमती लक्ष्मी गुप्ता भवन
उद्योग विभाग के पास, सिविल लाइन्स, दतिया (म.प्र.) – 475661

ys[k

lUnjdkM dk lkUn;l

'kkHkk dkUr >k

सप्त सोपानों में विभक्त रामचरित मानस में "सुन्दरकांड" का सौन्दर्य सर्वाधिक है। इसी सर्वातिशयता के प्रभाव से संभवतः यह कांड मंत्र–सा महत्वपूर्ण है। पूरे भारतवर्ष में इसका पाठ प्रचलित है। पूरा रामचरित मानस का पारायण तो कभी–कभार लोग कर पाते हैं, परन्तु कई लोग नित्य या प्रत्येक शनिवार को सुन्दरकांड का पारायण करते हैं, मंत्र–जाप की तरह श्रद्धा–विश्वास से करते हैं। संकट से त्राण के लिए करते हैं। शनिग्रह के प्रकोप से बचने के लिए करते हैं। कार्य सिद्धि के लिए करते हैं–

दीनदयाल बिरद संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी।।
प्रबिसि नगर कीजै सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा।।

विचारकर देखें तो श्रद्धा–विश्वास "मानस" का प्रस्थान बिन्दु है। आधार बिन्दु। इस आधार पर जितनी दृढ़ता से स्थित होकर मनुष्य पाठ और जपादि ही क्या, जीवनादि का जो भी कार्य करता है उतनी ही सिद्धि मिलने की संभावना बढ़ जाती है। अपने भीतर निहित शक्ति देवता से उसे साक्षात्कार हो पाता है। श्रद्धा विश्वास रूप भवानी–शंकर की वंदना मानस के मंगलाचरण में करते हुए बाबा तुलसीदास स्पष्ट कहते हैं–

भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तः स्थमीश्वरम्।।

अन्तःकरण के भीतर निहित ईश्वर का दर्शन श्रद्धा विश्वास से संभव हो पाता है। इस दर्शन का अर्थ क्या है ? यह सिद्धों के लिए ईश्वर का दर्शन है तो सामान्यों के लिए अपने भीतर निहित शक्ति स्वरूपा देवी का साक्षात्कार भी है। अक्षर भी श्रद्धा–विश्वास एवं अभ्यास से मंत्र बन जाते हैं। बीज मंत्र यही तो सिद्ध करते हैं– इसलिए कहा गया है कि सभी अक्षर मंत्र बन सकते हैं। पादप मूल औषधि और सभी मनुष्य योग्य बन सकते हैं, बशर्ते कि कोई योग्य संयोजक या साधक मिल जाये–

अमंत्रमक्षरं नास्ति नास्ति मूलमनौषधम्।

अयोग्यः पुरुषः नास्ति योजकः तत्र दुर्लभः।।

तात्पर्य यह कि सुन्दरकांड में उसके खास–खास चौपाइयों में मंत्रात्मक शक्ति का होना विश्वसनीयता का अपलाप नहीं है। ऐसे में यह तर्क दिया जा सकता है कि ऐसा तो किसी भी कांड या पंक्ति के साथ घटित हो सकता है। हाँ, हो सकता है। आस्था–विश्वास से जब पत्थर की मूर्ति देवत्व प्राप्त कर सकती है तो मानस के अन्य कांड क्यों नहीं ? इसी क्यों का उत्तर सुंदरकांड अपने नाम, प्रभाव, लोकप्रियता आदि के गुणों के द्वारा देता है।

"सुन्दरकांड" नाम वाल्मीकि ने रखा है। तुलसी ने तो सप्त सोपानों में "मानस" को विभक्त किया है। रामायण का सुन्दरकांड अड़सठ सर्गों में रचित है तो "मानस" का यह कांड साठ दोहों में। दोनों का अपना–अपना भावात्मक, मूल्यात्मक एवं रचनागत सौंदर्य है। नामगत सौंदर्य पर पहले विचार करें। बालकांड में श्रीराम की बाल्यावस्था से किशोरावस्था तक की लीलाएं वर्णित हैं। यह अवस्था जीवन की सबसे सुन्दरतम अवस्था मानी जाती है। इसमें वर्णित लीलाएं भी रम्य हैं। अयोध्या कांड अश्रुलीला है। अरण्य कांड संघर्ष कांड का आरंभ है। किष्किन्धा मिलन मैत्री लीला है तो सुन्दरकांड हनुमान लीला से सुन्दर है। लंका कांड संघर्ष का चरमोत्कर्ष है। अंतिम कांड उत्तरकांड संघर्ष की परिणति है। सभी कांडों से हटकर "सुंदरकांड" नाम है। इसके पीछे न तुलसी ने कोई संकेत दिया है न वाल्मीकि ने। परन्तु विद्वानों ने इस नाम के करण के पीछे अपने–अपने मत प्रकट किये हैं। किसी के अनुसार हनुमान जी का एक नाम सुन्दर है, इसलिए उन पर केन्द्रित यह कांड सुंदरकाण्ड है। दूसरा तर्क यह है कि नष्ट द्रव्य या वस्तु की पुनः प्राप्ति को सुन्दर माना गया है–

नष्ट द्रव्यस्य लाभो हि सुन्दरः परिकीर्तितः।।

जानकी का पता लग जाना सुन्दर सुखद प्राप्ति सदृश है। इस खोज से समस्त वानरदल न केवल आनन्दित हुए अपितु उनकी जान में जान आ गई। जैसे पानी पाकर तड़फती मछली सुखी हो जाती है वैसे ही सीता के पता लगने से वानर वृन्द हो गए–

मिले सकल अति भये सुखारी।
तलफत मीन पाव जिम बारी।।

श्रीराम–लक्ष्मण का तो कहना ही क्या ? हनुमान की सेवा–प्रेम के वे ऋणी बन गए, बोल पड़े–

सुन कपि तोहि समान उपकारी।
नहि कोउ सुर नर मुनि तनु धारी।।
(सुन्दरकांड–32)

भगवान शिव पार्वती की तपस्या के ऋणी हैं तो कृष्ण गोपी प्रेम के और श्रीराम हनुमत सेवकाई के। प्रेम की अन्तर्धारा सर्वत्र प्रवाहित है। सुंदरकांड की सुन्दरता के केन्द्र बिन्दु हनुमान सेवक–सेव्य भाव के सौंदर्य के चूड़ान्त निदर्शन है। मंगलमूर्ति होने के कारण वे सुदर्शन तो हैं ही सियाराम के दुलारे हैं और सबके प्यारे हैं–

मंगल मूरति मारुति नन्दन।
सकल अमंगल मूल निकन्दन।
पवन तनय संतन हितकारी।
हृदय बिराजत अवध बिहारी।।

ऐसे चरित्र से प्रतिष्ठित सुन्दरकांड का सुंदर होना स्वाभाविक है। निश्चय ही रामायण रचना की प्रेरणा की तरह "सुंदरकांड" संज्ञा को सहज देवी प्रेरणा मुनि वाल्मीकि को मिली होगी और इसका नाम अन्य कांडों से हटकर रच गया होगा। जैसे देवी प्रेरणा से क्रौंच वियोगोत्थित शोक श्लोक बन गया वैसे ही संभवतः हनुमन्त लाल जी के सुंदर रामकाज को देखकर "सुंदरकांड" नाम मुनि–मानस

में स्वतः स्फुरित हुआ होगा। इसकी मंगलात्मक सुन्दरता को प्रायः लक्षित करते हुए वृहद्धर्मपुराण में भी कहा गया है कि श्राद्ध एवं देव कार्य में सुन्दरकांड का पाठ किया जाना चाहिये –

श्राद्धेषु देवकार्येषु पठेत् सुन्दरकाण्डकम्।

(पूर्व खंड 26/11)

स्पष्ट है कि धर्मप्राण भारत जैसे देश के धर्म–पुराण के वचन एवं फलश्रुति के महात्म्य सबों ने मिलकर सुन्दरकांड को महत्ता प्रदान की है और महत्ता सुन्दरता का मुख्य अभिलक्षण है। महत्ता रहित सुन्दरता निर्गन्ध टेसू फूल जैसी है। इस छोटे से कांड में हर प्रकार के सौंदर्य भरे हैं। जिस सीता की अतुलनीय छवि की नीराजना करते हुए तुलसीदास लिखते हैं–

सुन्दरता कहँ सुन्दर करई।
छबिगृह दीप शिखा जनु बरई।।

और राम को देखकर ज्ञानी जनक गद्‌गद् हो उठे थे– "भयऊ बिदेह बिदेह बिसेषी।" उन्हीं विश्व विमोहन सियाराम के हनुमान जन–मन मोहन वरद पुत्र हैं और मोहक का वर्णन तो मोहक होगा ही। इस अभिव्यंजना की मनोहारिता पर जरा विचार कीजिए कि जगत–नियन्ता श्रीराम हनुमान के सिर पर हाथ रखकर कह रहे हैं–

सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं।
देखउँ करि बिचार मन माहीं।
पुनि–पुनि कपिहि चितव सुरत्राता।
लोचन नीर पुलक अति गाता।।
सुनि प्रभु बचन बिलोकि मुख गात हरषि हनुमन्त।
चरन परेउ प्रेमाकुल त्राहि–त्राहि भगवंत।।32।।
बार–बार प्रभु चहइ उठावा।
प्रेम मगन तेहि उठब न भावा।
पभुकर पंकज कपि कें सीसा।
सुमिरि सो दसा मगन गौरीसा।।

क्या ही नाटकीय रसमय परिदृश्य है। भक्त और भगवान एक दूसरे के भीतर समा रहे हैं। प्रेमाश्रु में नहा रहे हैं। लीला रस में वानर दल डूबे हुए हैं और भगवान शिव–पार्वती भी थोड़ी देर के लिए कथा कहना भूलकर मगन हैं। रामायण रूपी महामाला के हनुमान जी महान रत्न हैं। उनके चरित्र के संदर्भ में डॉ. युगेश्वर ने ठीक लिखा है– "भक्तों के परम भक्त, दासों के दास हनुमान भगवान नहीं हैं, किन्तु भगवान से भी विराट हैं। विशिष्ट हैं। राम के स्वधाम लौटने पर भी वे यहाँ रहेंगे।" (हनुमान एक जीवन, पृ. 159)

श्रीरामकिंकर उपाध्याय के मत में "अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष के साथ–साथ भक्ति और प्रेम की उपलबिध भी इस कांड की विलक्षण देन है। इस कांड के मुख्य देवता पवन पुत्र हनुमान हैं।" (मानस मुक्तावलीः द्वितीय संस्करण, पृ.80)

जैसे रसों का राजा श्रृंगार है वैसे ही प्रेम या रति भावों की रानी है। इस प्रेम को जो भक्ति को धार देता है, वैराग्य की शुष्कता से बचाता है और भक्तों को भगवान से जोड़ता है, उसकी अभिव्यंजना भी यहाँ मोहती है। भक्त विभीषण का भगवान से मिलन, स्वयं हनुमान को भगवती सीता–प्रीति की प्राप्ति आदि प्रेम सौंदर्य के परम प्रकटीकरण हैं–

अजर अमर गुननिधि सुत होहू।
करहुँ बहुत रघुनायक छोहू।।
करहुँ कृपा प्रभु अस सुनि काना।
निर्भर प्रेम मगन हनुमाना।।

(सुन्दरकांड–17)

सकलगुण निधान हनुमान जी अजरता–अमरता का वरदान पाकर उतने पुलकित संभवतः नहीं हुए होते जितने श्रीराम सीता के नेह–छोह को पाकर। वे निर्भर प्रेम पाकर मगन हैं। विभीषण भी श्रीराम के दर्शन अश्रु से पूरित नेत्र एवं पुलकित गात होकर

भक्ति की ही याचना करते हैं और उनके ह्रदय में प्रभु विषयक अपार प्रेम उमड़ रहा है। इस प्रेम सौंदर्य की अभिव्यक्ति यहाँ कमाल की है। इसमें काव्य सौंदर्य की छवि भी दर्शनीय है।

प्रेम या प्रीति रूपी मनोवृत्ति के निरूपण के प्रसंग में डा. रामचन्द्र शुक्ल ने कहा है कि–

"यह प्रवृत्ति इस बात का पूरा संकेत करती है कि मनुष्य की अन्तःप्रवृत्ति में जाकर प्रेम का जो विकास हुआ है वह सृष्टि के बीच सौन्दर्य–विधान की प्रेरणा करने वाली एक दिव्य शक्ति के रूप में। मनुष्य का प्रेम–सौंदर्य, वस्तु–सौंदर्य, कर्म–सौंदर्य, वाक्–सौंदर्य, भाव–सौंदर्य सब देखना और दिखाना चाहता है।" (चिन्तामणिः लोभ और प्रीति, पृ. 69)

सुन्दरकांड की सुन्दरता में उपर्युक्त सभी तरह के सौंदर्यों की अभिव्यक्ति हुई है। यह अभिव्यक्ति इसकी सुन्दरता को निरन्तरता और नवता दोनों प्रदान करती है। क्षण–क्षण में जो नूतन होता हुआ दिखाई दे वही तो रमणीय है– *"क्षणे–क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः।"* इसका सामान्य–सा मेरा अनुभव पिछले साठ वर्षों का है। पहले सुन्दरकांड का इतना व्यक्तिगत और समूहगत पाठ नहीं किया था जिसका अब हो रहा है तात्पर्य यह कि काल प्रवाह ने इस कांड के सौंदर्य को मलिन करने के बजाय निखारा है। मैं समझता हूँ कमोवेश आप सबका भी ऐसा ही कुछ अनुभव होगा। सुन्दरता ईश्वर की विभूति है। गीता में प्रेम–पुंज कृष्ण कहते हैं कि हे अर्जुन! जो– जो वस्तु या व्यक्ति विभूतियुक्त है– सुन्दरतायुक्त एवं शक्तियुक्त है वे सब मेरे ही अंश के प्रकटीकरण हैं–

यद्यद्विभूतिमत्सत्वं श्रीमदूर्जिमेव वा।
तत्तदेवावगंच्छ त्वं मम तेजोंऽशसंभवम्।

(10–41)

ईश्वरीय विभूति हनुमान की भूषणता कई रूपों में यहाँ प्रकट हुई है। इस भूषणता से भावित होकर हमारी अन्तःसत्ता तदाकार हो जाती है। कुछ क्षण के लिए हम मग्न होकर निर्भर आनन्द में खो जाते हैं। हम सीता–राम और हनुमान हो जाते हैं। यही सुन्दरकांड का आकर्षण है। उसकी विभूति है।

पूरी रामायण या पूरा रामचरित मानस श्री राम–सीता की रम्यता से रम्य है ही, परन्तु उनकी ही विभूति से भूषित श्री हनुमान केन्द्रित यह आनन्दकांड अधिक रमणीय है। इस रमणीयता की झांकी इस कर्म–सौन्दर्य के रूप में देखी जा सकती है। सब लोग हनुमान के सीता–अन्वेषण रूपी अद्भुत कार्य की भूरि–भूरि प्रशंसा करते हैं, किन्तु हनुमान इस प्रशंसा के भार से दबे जा रहे हैं। राम जब उनसे पूछते हैं कि आपने रावण रक्षित लंका को कैसे जला डाला तो वे भगवान से अभिमान रहित होकर यही कहते हैं कि यह सब आपके प्रताप का प्रभाव है। इसमें मेरी प्रभुताई कुछ भी नहीं है। डाल पर उछलने वाले बंदर मुझमें इतनी सामर्थ्य कहाँ कि लंका जला डालूं–

प्रभु प्रसन्न जाना हनुमाना।
बोला बचन बिगत अभिमाना।
साखामृग कै बड़ि मनुसाई।
साखा ते साखा पर जाई।।
सो सब तव प्रताप रघुराई।
नाथ न कछू मोरि प्रभुताई।।

(–सुन्दर 33)

जहाँ कर्म अद्भुत होकर भी कर्तापन के अहंकार से मुक्त हो वहाँ कर्म–सौन्दर्य की झाँकी मिलती है–

अहंकारविमूढ़ात्मा कर्ताऽहमिति मन्यते।।

(गीता–13)

अभिमानग्रस्त लोग प्रायः कहते पाये जाते हैं कि मैंने यह किया, वह किया। इससे अच्छे कर्म की रमणीयता घट जाती है। इसलिए कहावत है "नेकी कर दरिया में डाल।" हनुमान जी ने ऐसा ही किया।

पवन पुत्र का दौत्यकर्म भी कर्म–सौन्दर्य का अन्यतम दृष्टान्त है। बुद्धि–विवेक और मनोविज्ञान के चातुर्य से ओतप्रोत है। सामान्य दूत, जो कहा जाता है उतना ही करके वापस आ जाता है। मौका मुनासिब भूलकर आवेश में आ जाता है। परन्तु अंजनिनंदन ने न केवल चतुराई से सीता का पता लगाया अपितु लगे हाथ लंका को जलाकर रावण के बल विक्रम को भी थाह लिया। विभीषण को भी राम से मिलवा दिया। रावण को भी समझने का प्रयास किया ताकि युद्ध को टाला जा सके। युद्ध वह आग है जो दोनों पक्षों को जलाती–झुलसाती है और विजय संशयास्पद हुआ करती है। इस दौत्य कार्य की खूबसूरती वहाँ निखर कर आती है जहाँ श्रीराम का संदेश जानकी माता को और माता का संदेश श्रीराम को वे सुनाते हैं। राम ने तो हनुमान को पहचान के लिए अंगूठी भर दी थी। उन्हें तो पता ही नहीं था कि सीता कहाँ हैं, हैं भी या नहीं, फिर वे संदेश क्या देते ? किन्तु राम की मनोव्यथा का अनुमान लगाकर उन्होंने तदाकार वृत्ति से ऐसा संदेश सुनाया कि वैदेही का थोड़ी देर के लिए ही सही, दुख दूर हो गया। वे सुधि–बुधि भुला बैठीं। राम प्रेम में मगन हो गईं–

प्रभु संदेसु सुनत वैदेही।
मगन प्रेम तन सुधि नहिं तेही।।

इसी तरह सीता का संदेश सुनकर राजीव नयन के आंसू छलक पड़े। जो आँसू वनवास के समय नहीं छलके थे वे इस संदेश को सुनते ही रुक नहीं पाये–

सुनि सीता दुख प्रभु दुख अयना।
भरि आए जल राजिव नयना।।

है न दौत्यकार्य का सौंदर्य। है न हनुमान सुंदर। सुन्दर से सुन्दरता सदा छाया की तरह लिपटी रहती है। इस कांड के काव्य सौंदर्य के प्रति इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि "कविता केवल वस्तुओं के ही रंग–रूप में सौंदर्य की छटा नहीं दिखाती, प्रत्युत कर्म और मनोवृत्ति के भी अत्यन्त मार्मिक दृश्य सामने रखती है। वह जिस प्रकार विकसित कमल, रमणी के मुखमंडल आदि का सौंदर्य मन में लाती है, उसी प्रकार उदारता, वीरता, त्याग, दया, प्रेमोत्कर्ष इत्यादि कर्मों और मनोवृत्तियों का सौंदर्य भी मन में जमाती है।" (आचार्य शुक्ल, चिंतामणि, पृ. 133)

संतोषी चौक, कुशालपुर, रायपुर (छ.ग.) फोनः 0771'2243530

ys[k

lUnjdk.M% lR; vkj f'ko dk l;kx

Mk- fd'kkjh'kj.k 'kek

महाकवि गोस्वामी तुलसीदास कृत "श्री रामचरित मानस" विश्व में एक अन्यतम ग्रंथ के रूप में अपनी पहचान बना चुका है। लगभग छः शताब्दी पूर्व सृजित इस महाकाव्य के पूर्व भी भगवान श्रीराम को केन्द्र में रखकर अनेक ग्रंथ लिखे गये जिनमें महर्षि वाल्मीकि विरचित आदि महाकाव्य "रामायण", महाकवि भवभूति रचित "उत्तर रामचरितम्" तथा महाकवि कालिदास लिखित "रघुवंशम्" को श्रेष्ठ माना गया है। डॉ. फादर कामिल बुल्के ने अपने शोध प्रबन्ध "रामकथा" में विश्व की विभिन्न भाषाओं में रचित पाँच सौ कृतियों का उल्लेख किया है। कर्मण्य तपोभूमि सेवा न्यास, प्रकाशन, ग्वालियर (म.प्र.) ने सन् 2012 में "हिन्दी विश्व महाकवि गोस्वामी तुलसीदास साहित्य–शोध–समीक्षा–संदर्भ ग्रंथ (प्रथम खण्ड)" का प्रकाशन किया है। उसमें सन् ई. 1911–12 (एक शताब्दी) में प्रकाशित 5011 ग्रंथों का विवरण दिया गया है। सभी कृतियाँ गोस्वामी जी व उनके द्वारा विरचित साहित्य पर केन्द्रित हैं।

गोस्वामी जी की कृतियों में "श्रीरामचरित मानस" लोक–परलोक दोनों ही दृष्टि से सर्वाधिक लोकप्रिय है। इसके पाठक का धार्मिक विधान भी है जिसमें दैनिक पाठ, नवाह्न पाठ, मासिक पाठ तथा अखण्ड पाठ का नियम है। इस विशाल काव्य–ग्रंथ को सात अध्याय में विभक्त किया गया है। अध्याय को "काण्ड" की संज्ञा दी गई है। शीर्षक है– बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड, सुन्दरकाण्ड, लंकाकाण्ड तथा उत्तरकाण्ड। मेरे अन्तर्मन में दीर्घकाल से एक जिज्ञासा घर कर गई है कि अधिकतर रामभक्त इस विशाल काव्य–ग्रंथ का यदि पूरा पाठ नहीं कर पाते तो मात्र "सुन्दरकाण्ड" का ही पाठ करके संतुष्ट हो लेते हैं। एक प्रश्न और करवट लेता रहता है जो काण्डों के नामकरण से संबंधित है। "बालकाण्ड" शीर्षक में भगवान राम के जन्म और उनकी बाल्यावस्था के कार्यकलापों का वर्णन मिलता है। अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड तथा लंकाकाण्ड का नामकरण घटित घटनाओं के स्थान विशेष के आधार पर हुआ है। इस क्रम में "उत्तरकाण्ड" में सम्पूर्ण रामकथा का सार

निरूपित है किन्तु पाँचवे काण्ड का शीर्षक "सुन्दरकाण्ड" रखने के परोक्ष में क्या रहस्य है कि इसका नामकरण सुन्दरकाण्ड रखा गया ? क्यों न इसका नाम इसके वर्ण्य विषय को आधार बनाकर रखा गया ? ये प्रश्न मुझे विगत लम्बे समय से कुरेदते रहे हैं। इस विषय पर "मानस" के अनेक अध्येताओं से जानकारी प्राप्त करने का मैंने प्रयास भी किया किन्तु संतुष्टि नहीं हुई। पुनः मनन करते–करते इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि सुन्दर में सत्य और शिव का संयोग है। जो सत्य और शिव से आप्लावित होता है, वही सुन्दर होता है। एक सा रहता है। सम्पूर्ण जगत के परोक्ष में सुन्दर है। इसलिए जगत में चेतन–अचेतन सुन्दर दिखते हैं। सत्य, शिव और सुन्दर का संयुक्त ही सच्चिदानन्द है। मुझे ऐसा अनुभूत होता है कि सुन्दरकाण्ड में सत्य से प्रस्फुटित शिव की पावन धारा सुन्दर रूप में प्रवाहमान है। यह कल्याण और शुभ का सूचक है। सुन्दरकाण्ड की सुन्दरता की समझ के लिए सुन्दरकाण्ड की घटनाओं पर दृष्टिपात के पूर्व अरण्यकाण्ड तथा किष्किन्धाकाण्ड पर भी संक्षिप्त ही सही किन्तु एक दृष्टि डाल लेना समीचीन प्रतीत होता है।

अरण्यकाण्ड में श्रीराम अपने अनुज लक्ष्मण के साथ सीता जी की खोज में विरहाकुल होकर भटक रहे हैं। घायल जटायु से उनकी भेंट होती है। रावण द्वारा सीताजी के हरण का उनको संज्ञान होता है। जटायु की इच्छा के अनुकूल श्रीराम उसको मुक्ति देते हैं। फिर वह आगे बढ़ते हैं। हनुमान जी उनको देखकर राम में निहित परमेश्वरत्व को पहचान लेते हैं। वह अपना रूप बदलकर ब्राह्मण के वेश में राम से मिलते हैं। समाचारों से अवगत होने पर वह पुनः अपने रूप में आ जाते हैं। श्रीराम और लक्ष्मण को लेकर रिष्यमूक पर्वत पर हनुमान जी जाते हैं और सुग्रीव से मिलवाते हैं। सुग्रीव की समस्या और बालि के अनाचार से भगवान राम अवगत होते हैं तथा बालि का वध करते हैं। सुग्रीव माता सीता का पता लगाने में अपनी सम्पूर्ण सैन्य शक्ति को न्यौछावर करने का वचन देते हैं। जामवन्त हनुमान जी की अपार शक्ति और बुद्धि विवेक को जानते हैं। वह उनको ही लंका जाकर सीता जी का पता लगाने का सुझाव देते हैं तथा हनुमान जी को प्रेरित करते हैं। वह हनुमान जी के कार्य–दायित्व की सीमा भी निर्धारित करते हैं–

कहइ रीछपति सुनु हनुमाना।
का चुप साधि रहेहु बलवाना।।
पवन तनय बल पवन समाना।
बुद्धि बिबेक बिज्ञान समाना।।
कवन सो काज कठिन जग माहीं।
जो नहिं होई तात तुम्ह पाहीं।।
राम काज लगि तब अवतारा।
सुनतहिं भयउ पर्वताकारा।।
कनक बरन तन तेज बिराजा।
मानहुँ अपर गिरिन्ह कर राजा।।
सिंहनाद करि बारहि बारा।
लीलहिं नाघउँ जल निधि खारा।।
सहित सहाय रावनहि मारी।
आनउँ इहाँ त्रिकूट उपारी।।
जामवंत मैं पूँछउँ तोही।
उचित सिखावन दीजहुँ मोही।।
एतना करहु तात तुम्ह जाई।
सीतहि देखि कहहु सुधि आई।।
तब निज भुल बल राजिवनैना।
कौतुक लागि संग कपि सेना।।

(किष्किन्धाकाण्ड)

गोस्वामी जी ने प्रत्येक काण्ड के प्रारम्भ में

विषयानुरूप विशिष्ट देव–देवियों का वन्दन किया है। "सुन्दरकाण्ड" में भी उन्होंने भगवान शिव, राम तथा वर्ण्य–विषय के अनुकूल हनुमान जी की वन्दना करके आगे का वर्णन आरंभ किया है। सुन्दरकाण्ड में भगवान राम को प्रणाम करने के बाद गोस्वामी जी हनुमान जी के शौर्य का स्मरण करते हुए प्रणाम निवेदित करते हैं। दृष्टव्य है यह श्लोक–

अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि।।

(सुन्दरकाण्ड)

इस श्लोक के माध्यम से गोस्वामी जी ने हनुमान के असीम शौर्य और सद्गुणों से युक्त प्रभु श्रीराम के प्रति पूर्ण समर्पण का भाव उद्भासित किया है। हनुमान जी जामवंत के विचारों को स्वीकार कर सीता जी का पता करने के लिए लंका को प्रस्थान करते हैं। वह सभी दायित्वों का सकुशल निर्वाह करते हुए पलभर भी राम से अलग नहीं होते हैं। प्रथमतः उनको समुद्र पार करना है। वह सुरसा और समुद्री निश्चरी के दुष्प्रयास को अपने विवेक से निष्फल कर देते हैं। लंका के प्रवेश द्वार पर लंकिनी रक्षा में तत्पर है। वह हनुमान जी पर प्रबल प्रहार करती है किन्तु हनुमान जी एक ही गदा में उसको धराशायी कर देते हैं। वह मुक्ति के पूर्व हनुमान जी को मंगल कामना देती है –

प्रविसि नगर, कीजे सब काजा।
हृदयँ राखि कोसल पुर राजा।।
गरल सुधा रिपु करहि मिताई।
गोपद सिंधु अनल सितलाई।।

(सुन्दरकाण्ड)

हनुमान जी लंका में प्रवेश करते हैं। वह अपने बल, बुद्धि, विवेक, सहनशीलता तथा मर्यादा का सदा ध्यान रखते हैं और लक्ष्य प्राप्ति के प्रति सन्नद्ध हैं। आवश्यकतानुसार वह वेशभूषा भी बदलते हैं। सर्वप्रथम सम्पूर्ण लंका का निरीक्षण करते हैं। फिर विभीषण की कुटी देखकर उनसे सम्पर्क करते हैं। उनको श्रीरामभक्त के रूप में पहचान कर सीता जी के संबंध में संज्ञान प्राप्त करते हैं। उनसे मिलने अशोक वाटिका जाते हैं। उनको श्रीराम की दी हुई मुद्रिका देकर श्रीरामभक्त होने तथा उनके निर्देश पर आने की पुष्टि करते हैं। रावण के उत्पात व अत्याचार का संज्ञान लेकर श्रीराम जी के आने और माता सीता को ले जाने के प्रति आश्वस्त करते हैं। उनसे आज्ञा लेकर लंका के उद्यान में फल खाकर भूख मिटाते हैं। उद्यान–रक्षकों के अत्याचार से क्षुब्ध होकर वह उनको करारा प्रतिउत्तर देते हैं। मेघनाद के द्वारा बन्धक बनाये जाने पर मर्यादा का ध्यान रखते हैं। रावण के दरबार में लाये जानेपर यथोचित उत्तर देते हैं। पूँछ में अग्नि लगाने पर लंका की अट्टालिकाओं पर छलांग लगाकर सम्पूर्ण लंका को अग्नि के हवाले कर देते हैं। फिर समुद्र में छलांग लगाकर पूँछ में प्रज्वलित अग्नि का शमन करते हैं और सीता जी से प्रमाण स्वरूप चूड़ामणि प्राप्त करके सुग्रीव और जामवंत के पास वापस आते हैं। प्रभु श्रीराम से मिलकर माता सीता का हाल बतलाते हैं तथा उनके दिये चूड़ामणि को श्रीराम जी को सौंपते हैं।

उधर लंका में श्री हनुमान जी के पराक्रम से रावण परेशान है और घबराया हुआ है। वह अपने सलाहकारों की बैठक बुलाता है। बैठक में विभीषण रावण को माता सीता को वापस करने तथा भगवान श्रीराम को चौदह भुवन का स्वामी बतलाते हुए सलाह देते हैं–

जो आपन चाहैं कल्याना।
सुजसु सुमति सुभ गति सुख नाना।
सो परनारि लिलार गोसाई।
तजउ चउथि के चंद कि नाई।।
चौदह भुवन एक पति होई।
भूतद्रोह तिष्ठई नहिं सोई।।
गुन सागर नागर नर जोऊ।
अलप लोभ भल कहइ न कोऊ।।
काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ।
सब परिहरि रघुवीरहि भजहु भजहि जेहि संत।।

(सुन्दरकांड–60)

फिर भी अनुज विभीषण के सुझाव को रावण ठुकराता ही नहीं बल्कि लात मारकर निकाल देता है। विभीषण प्रभु श्रीराम के शिविर में आ जाते हैं। सुग्रीव और हनुमान जी श्रीराम जी से उनको मिलाते हैं। श्रीराम जी उनका विस्तृत संज्ञान लेने के बाद लंका के भावी राजा के रूप में राजतिलक कर देते हैं। विभीषण को लंका से निष्कासन के पश्चात् रावण सशंकित तथा व्यग्र हो उठता है। अपने गुप्तचरों को वह श्रीराम के शिविर में भेजता है। यह जानकर की श्रीराम ने विभीषण का राजतिलक कर दिया है, वह आक्रोश में डूब जाता है।

दूसरी ओर राम और लक्ष्मण विभीषण, सुग्रीव व हनुमान जी वानरों की विशाल सेना लेकर लंका पर आक्रमण के लिए कूच करते हैं। लंका पहुँचने में महासागर अवरोधक रूप में प्रस्तुत है। भगवान श्रीराम लंका पहुँचने के लिए समुद्रदेव से मार्ग देने हेतु आग्रह करते हैं। समुद्र देव द्वारा श्रीराम के आग्रह पर संज्ञान नहीं लेने पर श्रीराम तीखे तेवर के साथ करते हैं–

बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीत।

(सुन्दरकाण्ड, दोहा–57)

(फिर काकभुशुण्डि जी कहते हैं– हे गरुड़जी सुनिये) –

काटेहि पर कदरी करई कोटि जतन कोउ सींच।
विनय न मान खगेश सुनु डाटेहिं पइ नव नीच।।

(सुन्दरकाण्ड, दोहा–58)

इस प्रकार श्रीराम के क्रोध से भयभीत होकर समुद्रदेव श्रीराम के सम्मुख आकर न केवल याचना करते हैं बल्कि समुद्र पर सेतु निर्माण हेतु नल–नील जैसे कुशल वैज्ञानिकों का संज्ञान भी देते हैं। इन तथ्यों के अतिरिक्त भी सुन्दरकाण्ड में अनेक ज्ञान और सफल जीवन के शुभ तत्वों का भण्डार भरा है। जैसे भक्त और भगवान तथा पति–पत्नी के संबंधों को अक्षय व अटूट बनाये रखने के लिए त्याग व समर्पण का जिस प्रकार प्रतिरोपण हुआ है वह अन्यत्र दुर्लभ है। सीता जी का पति–प्रेम और हनुमान जी का भक्त रूप पूरे विश्व के लिए अनुकरणीय है। सीता जी अशोक वाटिका में कहती हैं –

अहह नाथ मैं निपट बिसारी।

(सुन्दरकाण्ड)

तब हनुमान जी भगवान राम के प्रेम–भाव को सीता जी से कहते हैं–

मातु कुशल प्रभु अनुज समेता।
तब दुख दुखी सुकृपा निकेता।।
जनि जननी मानहु जियँ ऊना।
तुम से प्रेम राम कै दूना।।

(सुन्दरकाण्ड)

यहाँ यह भी ध्यान देने योग्य है कि सीता जी ने श्रीहनुमान जी के आग्रह पर चिह्न रूप में चूड़ामणि देते समय श्रीराम जी को पूर्णकाम कहा और आग्रह किया–

दीन दयाल बिरिदु संभारी।
हरहु नाथ मम संकट भारी।।

(सुन्दरकाण्ड)

माता सीता की यह विनती प्रत्येक श्रीरामभक्त के अंतस में प्रदीप्त होती रहती है। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सुन्दरकाण्ड सम्पूर्ण मानव समाज के लिए प्रेरणा का स्रोत है। इसमें सुर की असुर पर विजय, सत्य की असत्य पर विजय तथा आचार की अनाचार पर विजय का प्रतिपादन हुआ है। इसमें लोक–परलोक दोनों के ज्ञान का सुन्दर रूपांकन हुआ है। श्रीराम के सगुण–रूप में उनके ''सिया–राममय सब जगजानी। करहु प्रणाम जोरि युग पानी'' श्रीरामचरित मानस का पाठ करने में किसी कारणवश असमर्थता का अनुभव करते हैं तो मात्र सुन्दरकाण्ड का पाठ करके अपने लक्ष्य तथा कार्य–सिद्धि के प्रति आश्वस्त हो जाते हैं। निश्चय ही सुन्दर काण्ड सत्य–शिव से आप्लावित है तथा लंकाकाण्ड में होने वाले राम–रावण–महायुद्ध में श्रीराम की महाविजय का पूर्वाभास है। सुन्दरकाण्ड का समापन जिस दोहा संख्या साठ से गोस्वामी जी ने किया है, मैं भी भगवान श्रीराम के चरणों में अपना प्रणाम निवेदित करते हुए उसी दोहे से इस आलेख को विराम देकर स्वयं को धन्य करना चाहूँगा –

सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान।
सादर सुनहिं ते तरहिं भव सिंधु बिना जलजान।।

(दोहा–60)

'शिक्षा साहित्य' से साभार

'साहित्यांगन' 13–रेवती विहार, से.–14 इन्दिरा नगर, लखनऊ–226016
मो.: 08004750027

Jk)katfy

तुलसी मानस प्रतिष्ठान के दो आजीवन सदस्यों श्रीमती कृष्णा देवी वर्मा का स्वर्गवास दिनांक 21 दिसंबर 2018 को तथा श्री बाबूलाल शुक्ला का स्वर्गवास दिनांक 25 दिसंबर 2018 को हो गया।

श्रीमती कृष्णा देवी वर्मा भक्त प्रवृत्ति की सक्रिय समाजसेवी महिला थीं। महिला एवं बाल विकास के क्षेत्र में कृष्णा जी का योगदान महत्वपूर्ण था।

श्री बाबूलाल शुक्ल स्पेयर्स निर्माण कंपनी के अध्यक्ष थे तथा औद्योगिक क्षेत्र में सक्रिय थे। तुलसी मानस प्रतिष्ठान की ओर से इन दोनों दिवंगत आत्माओं को हार्दिक श्रद्धांजलि।

ys[k

ekul d lUnjdk.M dh lUnjrk

Mk- l'khy dekj ik.M; ^lkfgR;Un*

मानस–पीयूष[1] के अन्तर्गत श्रीरामचरितमानस पंचम सोपान–सुन्दर काण्ड के प्रारम्भ में सुन्दरकाण्ड के सुन्दर नामकरण पर समुचित विचार किया गया है और अनेक मनीषियों के संबंधित मतों का उल्लेख किया गया है। इनमें से कुछ की चर्चा समीचीन होगी। पं. रामकुमार का विचार है कि त्रिकूट पर्वत के एक शिखर का नाम "सुन्दर" है जिस पर अशोक वाटिका स्थित है। इसी शिखर के नाम पर इस काण्ड का नाम सुन्दरकाण्ड रक्खा गया है। मानस तत्व सुधार्णवी व्याख्या में कहा गया कि "सुन्दरकाण्ड में सब सुंदर ही तो है।" यहां सुन्दरी सीता, सुन्दर कवि और सुन्दरी वार्ता (कथानक) है।[2] अतएव सुन्दरकाण्ड नाम सर्वथा उचित है। रामदयाल मजूमदार ने एक श्लोक उद्धृत किया जिसका तात्पर्य है– सुन्दरकाण्ड में सुन्दर राम, सुन्दरी कथा तथा सुन्दरी सीता है। सुन्दरकाण्ड में क्या सुन्दर नहीं है।[3] अर्थात् सुन्दरकाण्ड में सब कुछ सुन्दर है। विजयानन्द ने सुन्दरकाण्ड के अनेक "सुन्दर" शब्द के प्रयोग को आधार मानकर इसे सुन्दरकाण्ड कहा है। मानस–पीयूष के सम्पादक ने एक बड़ा ही रोचक प्रकरण उठाया है। उनका विचार है कि "सुन्दरकाण्ड" नाम क्यों रखा गया ? यह प्रश्न उठाकर टीकाकारों तथा अन्य महानुभावों ने उसके उत्तर दिये हैं;" अतएव यहां कुछ उद्धरण दिये गये परंतु मेरी समझ में यह प्रश्न ही यहाँ नहीं उठता। क्योंकि "श्रीमद्रामचरितमानस" में काण्डों के नाम प्रथम सोपान, द्वितीय सोपान इत्यादि ही रखे गये हैं न कि बाल, अयोध्या इत्यादि; जब रामचरितामनस के इस काण्ड का नाम पंचम सोपान है, तब उपर्युक्त प्रश्न ही व्यर्थ हो जाता है। कुछ भी हो लोकमान्यता की प्रधानता होती है। लोक इस काण्ड को सुन्दरकाण्ड मानकर ही इसका पाठ करता है। सुन्दर वही है जिससे लोक का कष्ट दूर हो। हनुमान को संकट मोचक कहा गया है। सीता की विशाल विपत्ति का नाश हनुमान ने किया जो सर्वथा सुन्दर है। सुन्दरकाण्ड की लोकप्रियता और उसकी सुन्दरता का इससे बड़ा और क्या प्रमाण हो सकता है कि सम्पूर्ण रामचरितमानस से मात्र "सुन्दरकाण्ड" ही पृथक ग्रन्थ के रूप में पाठ हेतु ही सही– प्रकाशित होता है। मेरी समझ से गीता प्रेस से सम्पूर्ण रामचरित मानस जितने परिमाण में प्रकाशित होता है उतने ही या उससे कुछ कम– अधिक पृथक

रूप से सुन्दरकाण्ड प्रकाशित होता है।

सुन्दर शब्द की विवेचना यहाँ उचित होगी। शब्दकोश के अनुसार सुन्द्+अरः के संयोग से उत्पन्न इस शब्द का आशय है प्रिय, मनोज्ञ, मनोहर, आकर्षक और कामदेव। स्त्रीलिंग में सुन्दरी शब्द का प्रयोग आता है। अमरकोश में सुन्दर के लिए रुचिर, चारु, सुषम, साधु, शोभन, कान्त, मनोहर, रुच्य, मनोज्ञ, मंजु तथा मंजुल[5] तथा हलायुधकोश में मनोहर, रुचिर, चारु, सुषम, साधु, शोभन, कान्त, मनोरम, रुच्य, मनोज्ञ, मंजु, मंजुल, मनोहारि, सौम्य, भद्रक, रमणीय, रामणीयक, बन्धूर, बन्धुर, पेशल, पेसल, वाम, राम, अभिराम, नन्दित, सुमन, वल्गु, हारि, स्वरूप, अभिरूप, दिव्य आदि शब्द प्रयुक्त हुए हैं।[6]

गोस्वामी तुलसीदास नानापुराण, निगम, आगम, रामायण आदि के विज्ञाता थे। उनकी शब्द–सम्पदा तथा भाव–कोश इतना अधिक सुविस्तृत है कि उसे चार छः वाक्य में कह पाना कठिन है। रही बात "सुन्दर" की तो इस शब्द का जितना सुन्दर एवं सटीक वर्णन गोस्वामी जी ने किया है उतना शायद ही कोई कर पाए। जब वे सीता के लिए "सुंदरता कहुँ सुंदर करई। छवि गृह दीप सिखा जनु बरई" या पार्वती के लिए ***"सुंदरता मरजाद भवानी जाइ न कोटिहुँ बदन बखानी"*** बालकाण्ड में लिखते हैं तब पाठक विस्मित हो जाता है कि यहाँ सुंदरता की कितनी पराकाष्ठा है।

सुंदरकांड को सुंदरता की विवेचना के लिए 'सुंदरता' को कुछ शीर्षकों में बांटकर देखा जाना सभी चीन होगा। यद्यापि यह विभाजन अंतिम नहीं है। मनीषियों ने सुंदरता के अनेक भेद विभेद किये हैं। अलौकिक, प्राकृतिक, मानवीय तथा मनोवैज्ञानिक शीर्षकों के अंतर्गत सुंदरकांड की सुंदरता की समीक्षा यहां वांछित है।

अलौकिक सौन्दर्य

जैसा कि नाम से स्पष्ट है कि यहां असाधारण सौन्दर्य है जिसमें दिव्यता, भव्यता का समावेश होता है। इस प्रकरण में हनुमान का नाम सर्वप्रथम उल्लेखनीय है। श्लोक सं. तीन में हनुमान को "अतुलितबल धाम हेमशैलाभ देह" कहा गया है। बल का सौन्दर्य मुखपर तो चमकता ही है अंग–प्रत्यंगों से फूटता रहता है। अतुलित विशेषण बल की गरिमा–महिमा को अगणित कर देता है जिससे पाठक दर्शक विस्मय–विभोर हो जाता है। स्वर्ण–पहाड़ जैसी देह की चमक, दमक, कान्ति और मनोहरता से पाठक/दर्शक के मन और नेत्र आश्चर्यचकित हो जाते हैं। कंचन कितना सुन्दर होता है उसका मोह कितना दुर्निवार होता है किसी कंचन–लोभी से पूछिए। सच पूछिए तो कंचन लोभी कौन नहीं होता ? कंचन–काया की माया से कौन विमुग्ध नहीं हो जाता ? सन्यासी की बात छोड़िए। सीता ने हनुमान से कहा कि क्या सारे कपि तुम्हारे समान ही हैं जिनके बल पर रघुवीर मुझे लंका के बंदीगृह से छुड़ाएंगे ? अभी तक सीता ने हनुमान की अलौकिक सुन्दरता या रूप नही देखा था। फिर क्या?कंचन पर्वत सी देह हनुमान ने प्रकट कर दी जो समर में जीतने में पूर्णतः सक्षम है। क्षण में पहाड़ सी देह धारण करना और क्षणभर में लघु रूप हो जाना विस्मयकारी है। इसके पूर्व सुरक्षा के प्रकरण में भी हनुमान के अलौकिक सौन्दर्य का वर्णन मिलता है– जैसे–जैसे सुरसा ने मुख का आकार बढ़ाया हनुमान उससे दूने आकार के होते गये। जब उसने सौ योजन का मुख किया तो हनुमान ने लघु रूप धारण कर लिया। इस गुरुता और लघुता में जो रहस्यात्मक चमत्कारी सौन्दर्य छिपा है उसमें अलौकिकता भव्यता और दिव्यता झलक रही है। कल्पना करें हनुमान में कितना बल और साहस रहा होगा जिसके बल पर वे समुद्र के ऊपर उड़ चले–कूद चले। सागर तट पर जो पहाड़ है वह

सुंदर है जिसके ऊपर हनुमान कौतुक से (खेलकूद में जैसे) चढ़ जाते हैं। सुंदरकाण्ड का प्रारंभ हनुमान के अलौकिक सौन्दर्य से ही होता है। जहां "भूधर" भी सुंदर है।

ikd`frd lkUn;l

प्रकृति सौन्दर्य का कोश है। प्राकृतिक सौन्दर्य कितना मनोहारी होता है?कौन कह सकता है ? ऋग्वेद का ऋषि ब्रह्मकाल में उषा और सूर्य के मिलन को प्रेमिका और प्रेमी के मिलन के रूप में देखता है। "सुंदर भूधर" की ऊपर चर्चा हो चुकी है। वन की शोभा का क्या कहना ? हनुमान ने लंका में उस वन शोभा को देखा जहां फूलों पर मधुलोभी मधुप मंडरा रहे हैं। नाना प्रकार के वृक्ष, फल और फूल सुशोभित हैं। यह शब्द –चित्र पाठक के मनस पटल पर वन विषयक प्राकृतिक शोभा का मनोरम बिम्ब उपस्थित कर देता है। अशोक वन के "सुन्दर" फलदार वृक्षों को देखकर हनुमान की भूख और बढ़ जाती है। फलों का सौन्दर्य आकर्षण और तृप्ति का केन्द्र होता है। यदि कहीं फूलों की वर्षा हो रही हो तो वहां का वातावरण अत्यंत सुन्दर हो जाता है। हलायुधकोश में सुमन को सुंदर का पर्यायवाची कहा गया है। सुमन, पुष्प है जिससे मन प्रफुल्लित हो उठता है जो "सुन्दर" का हेतु है। राम ने ज्यों ही विभीषण को तिलक लगाया त्यों ही आकाश से सुमन–वर्षा होने लगी। कमल की सुंदरता मंत्र मुग्ध करने वाली होती है। विभीषण ने राम के चरण की उपमा शंकर के ह्रदय रूपी सरोवर के कमल से दी है। जब विभीषण उक्त "कमल" को देखेंगे तो उनका अहोभाग्य होगा। व्यक्ति उसी समय स्वयं को अहोभाग्य कहता या मानता है जब परिस्थितियाँ उसके अनुकूल होती है।

uxj lkUn;l

लंका नगरी कनक की नगरी थी। हनुमान ने पर्वत पर चढ़कर लंका नगरी देखी तो वे इस दुर्ग की विशेषता, भव्यता का वर्णन करने में असमर्थ हो गये या स्वयं गोस्वामीजी की लेखनी यथार्थ रूप में इस नगर शोभा को लिखने में अटकने लगी। फिर भी गोस्वामीजी ने लिखा कि अति विस्तृत सागर के तट पर कनक कोट का परम प्रकाश कितना सुंदर है– "सुंदरायतना घना" कहकर व्यक्त किया। इस शब्द की मीमांसा की जाय तो कई पृष्ठ लग जायँगे। "सुंदरता के आयतन के घनत्व" को बस समझा जा सकता है कहा नहीं जा सकता।

Hkou lkUn;l

दशानन का मंदिर–भवन कितना सुंदर/ विचित्र है कहा नहीं जा सकता। जब गोस्वामी जी कहें कि ***''कहि जात सो नाहीं''*** तब यह मानना पड़ता है कि भाव भारी है, शब्द हल्के हैं। स्थापत्य कला का सौन्दर्य निधान है– रावण का भवन। यहीं से कुछ दूरी पर एक और भवन है जहां हरि मंदिर बना हुआ है। उस हरिमंदिर पर रामायुध अंकित हैं। उस गृह की ***''सोभा बरनि न जाइ''***। गोस्वामी जी रावण तथा विभीषण के भवन की सुंदरता का वर्णन करने में असमर्थता प्रकट करते हैं। पर ध्यातव्य यह है कि रावण के भवन की भव्यता में तामसिकता, भौतिकता, अन्याय, शोषण का जबकि विभीषण के भवन में शान्ति, भक्ति, समर्पिति, निष्कामता आदि का समावेश है।

jke dk fn0; lkUn;l

गोस्वामी जी के रामचरित मानस में एक ही प्रमुख उद्देश्य है–राम की अभिरामता, दिव्यता, परदुःखकातरता तथा सदाशयता का विविध कोणीय उपस्थापन। विभीषण राम को देखते हैं– उन्हें राम कैसे लगे ? उन्हें राम "छवि धाम" लगे जिससे वे अपनी सुध–बुध खो बैठे। वे राम को एकटक निहार रहे हैं, अपलक नयनों से। राम के शरीर सौन्दर्य की सम्मिश्रित आभा के बाद उनकी दृष्टि राम के आंगिक सौन्दर्य पर पड़ती है– भुजाएँ

लम्बी हैं। आँख कमलवत/ लाल हैं। श्यामल देह कह रही है कि जो भी मेरे शरण में आयेगा उसका भय समाप्त हो जायेगा। कंधे सिंह के समान आयत उन्नत– विस्तृत हैं। छाती चौड़ी और सुहावनी (सोहा) है। मुख अनेक कामदेवों के मन को मुग्ध करने वाले हैं। काम स्वयं सौन्दर्य का प्रतिमान है। वह जिस सौन्दर्य पर मुग्ध होगा उसकी सुन्दरता कौन कह सकता है ?

ef.k&ekf.kD; dk lkSUn;Z

मणि से प्रकाश निकलता है ? मणिदीप की चर्चा कालिदास और प्रसाद भी करते हैं। मणि बहुमूल्यता के साथ विचित्र सौन्दर्य का अधिष्ठान होता है। समुद्र को रत्नाकर कहा जाता है– रत्न मणि ही हैं। समुद्र रत्नों का खजाना होता है अतः वह रत्नाकर है। श्रीराम के समक्ष समुद्र विप्र रूप धारण कर कनक थाल में नाना प्रकार की मणियों को भरकर उपस्थित होता है। स्वर्ण थाल में नाना प्रकार की मणियों से उत्पन्न प्रकाश, सौन्दर्य, आभा, माधुर्य तथा बहुमूल्यता के लावण्य का समाकलन अनुभावन साधारण व्यक्ति नहीं कर सकता। उसके लिए "पारखी दृष्टि" चाहिए।

oL= dk lkSUn;Z

वस्त्र व्यक्ति की लज्जा की रक्षा करता है। हनुमान ने रावण से कहा कि यदि स्त्री सारे आभूषणों को धारण कर ले पर वस्त्र न पहने रहे तो उसकी शोभा नहीं रहेगी। कथ्य यह है कि वस्त्र का सौन्दर्य सारे आभूषणों के सौन्दर्य पर भारी पड़ता है।

ok.kh dk lkSUn;Z

उक्त प्रकरण में ही हनुमान वाणी के सौन्दर्य की बात कहते हैं। उनके शब्दों में राम नाम के बिना वाणी का सौन्दर्य (सोहा) नहीं है। इस तथ्य को मद मोह त्याग कर सोचना चाहिए।

euksoSKkfud lkSUn;Z

बाह्य सौन्दर्य क्षण भर के लिए आँखों को चमत्कृत कर देता है पर मनोगत सौन्दर्य का प्रभाव जीवन भर रहता है। यहाँ पर मनोगत सौन्दर्य का आशय सदाशयता, सहयोगिता आदि मनोभावों से है। जब हनुमान सीता का समाचार लेकर लंका से लौटते हैं तब श्रीराम उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं– वे कहते हैं कि कपि हनुमान मेरे लिए तुम्हारे जैसा उपकारी कोई नहीं है। मैं तुम्हारे उपकार का मूल्य नहीं चुका सकता। पुत्र हनुमान मैं तुमसे ऋण रहित नहीं हो सकता– मैंने मन में बहुत विचार कर लिया। आज के भौतिकतावादी युग में यह मनोवैज्ञानिक सौन्दर्य दुर्लभ हो चला है। कृतज्ञों की संख्या नगण्य (अल्प) और कृतघ्नों की संख्या अगण्य (अगणित) होती जा रही है।

isze dk lkSUn;Z

प्रेम के सौन्दर्य का जितना चित्ताकर्षक रूप सुन्दरकाण्ड में हुआ है उतना कदाचित अन्यत्र नही। संयोग श्रृंगार का अपना अलग मनभावन विचित्र सौन्दर्य होता है पर वियोग श्रृंगार में प्रेम का सौन्दर्य सिर चढ़कर बोलता है। यदि सुन्दरकाण्ड के राम का सीता के प्रति और सीता का राम के प्रति प्रेमकथन की मीमांसा की जाय तो शायद यह कभी समाप्त न होनेवाली विवेचना होगी। सहृदय पाठक इसका सौन्दर्य बोध तथा रसानुभूति संबंधित स्थल पर ही करें तो उत्तम रहेगा। रामचरितमानस का कोई ऐसा प्रकरण नहीं है जहां विलक्षण वक्ता और समर्पित श्रोता, चिन्तक, लेखक और प्रबुद्ध पाठक विश्राम करना चाहें पर विराम लेना पड़ता है, अवसान करना पड़ता है अतः काल की गति दुर्निवार होती है। अतः यह प्रकरण इस संदर्भ के साथ समाप्त किया जा रहा है कि यहां अनेक सुन्दरताओं के साथ पीड़ा प्रशमन विषयक सुन्दरता का भव्य एवं दिव्य वर्णन है। गाँवों में वृद्धाएँ कहानी का समापन इस वाक्य से करती है कि जैसे उनके अच्छे दिन/ सुन्दर दिन आये वैसे ही सबके आयें। हनुमान सागर पार करने की यात्रा सफल रही

अतएव वह सुंदर है। खून की उलटी करती हुई लंकिनी ने हनुमान को लंका में राम को हृदय में रखकर प्रवेश करने को कहा— शत्रु मुख से निकला यह वाक्य भी सुंदरता का ही जनक है कि जब रावण का विनाश होगा तभी तो मानवता सुंदर होगी। हनुमान के माध्यम से विभीषण की चिर प्रतीक्षित आकांक्षा— राम से भेंट पूरी हुई। श्रीराम ने उनका राजतिलक कर दिया इससे अधिक सुंदर बात विभीषण के लिए क्या होगी ? जो सीता, रावण के त्रास से आत्मघात को तैयार हो गयीं वह हनुमान के कथन से अति प्रसन्न हो गयीं इससे अधिक सुन्दर बात क्या होगी ? सीता, श्रीराम का हालचाल जानने को व्याकुल थीं। उन्हें जब पता चला कि राम का मन सदैव उनके पास ही रहता है— इससे बढ़कर और सुंदर बात क्या होगी। सीता ने हनुमान को अजर, अमर गुणनिधि होने का आशीर्वाद दिया। हनुमान के लिए इससे सुंदर और बात क्या होगी ? हनुमान ने अनाथ लंका को जला दिया साधुओं के लिए इससे अधिक सुंदर बात क्या होगी ? सीता ने हनुमान के माध्यम से श्री राम को संदेश कहलवाया है वह प्रेम की पराकाष्ठा का प्रतीक है। दीनदयाल, कष्टापहारी श्रीराम से सीता ने अपना कष्ट दूर करने को कहा और हुआ भी, यह भी अति सुन्दर बात है। हनुमान का अपनी जाति—बिरादरी में जो सम्मान हुआ और स्वयं श्रीराम ने जो उनका यशोगान किया वह कितनी सुंदर बात है ? हनुमान ने श्रीराम से सीता की पीड़ा व्यक्त करते हुए यही कहा कि उनकी "पीड़ा न कहना ही ठीक है" क्योंकि उसके लिए उचित शब्द मिल नहीं पायेंगे। हनुमान ने न कहकर भी वह सब कह दिया जो कथनीय है— वाणी की मौन विषयक सुन्दरता का अनुभावन सहृदय ही कर सकते हैं। राम के पौरुष को देखकर समुद्र भी सुख का अनुभव करता है। सबसे अंत में सुन्दरकाण्ड "सकल सुमंगलदायक" हैं इससे और सुंदर बात क्या होगी ? जिसने कहा कि सुन्दरकाण्ड में क्या सुन्दर नहीं है अर्थात् सभी कुछ तो सुन्दर है उस मनीषी को सादर प्रणाम।

lUnHk&

1. मानष—पीयूष, सम्पादक श्री अंजनीनन्दन शरण, गीता प्रेस गोरखपुर, भाग छः, सुन्दरकाण्ड पृ. 4—6
2. सुन्दरे सुन्दरी सीता सुन्दरे सुन्दरः, कपिः।
   सुन्दरे सुन्दरी वार्ता अतः सुन्दर उच्यते।।
   उक्त— मा.पी. पृ.5
3. सुन्दरे सुन्दरो रामः सुन्दरे सुन्दरी कथा।
   सुन्दरे सुन्दरी सीता सुन्दरे किन्न सुन्दरम्।।
   उक्त मा.पी. 25
4. संस्कृत हिन्दी शब्दकोष— आप्टे पृ 1115
5. अमरकोश
6. हलायुध कोश
7. ऋग्वेद सूर्य सूक्त 1—115
8. संक्रीडन्ते मणिभिरमरप्रार्थिता यत्र कन्याः
   उत्तरमेघ 6
9. मणिदीप लिये निजकर में पथ दिखलाने को आये।
वह पावक पुंज हुआ अब, किरनों की लट बिखराये।।
मणिदीप विश्वमंदिर की पहने किरणों की माला।
   तुम एक अकेली तब भी
   जलती हो मेरी ज्वाला।। आँसू

पटेलनगर, कादीपुर, सुल्तानपुर 228145 मो. 9532006900

ys[k

tc ydkijh noijh cu xb

dfiyno ryx

बन्दौं तुलसी के चरण जिन्ह कीन्हों जग काज।
कलि समुद्र बूड़त लखो प्रकट्यो सप्त जहाज।।

सकल कलिमल विध्वंसक सप्त काण्डात्मक श्री रामचरित मानस का पंचम कांड श्री सुन्दर कांड है।

मानस के प्रत्येक कांड या तो घटना प्रधान हैं या स्थान प्रधान जैसे बालकांड, अयोध्या कांड, किष्किन्धाकांड, अरण्यकांड, लंकाकांड और उत्तरकांड। किंतु सुन्दरकांड नामकरण इन सबसे पृथक ही है। इस नामकरण के पीछे सन्तों एवं विद्वानों के दो मत हैं। कुछ विद्वान कहते हैं कि "इष्ट संप्राप्ति ही सुंदर है।" इस कांड में लंका यात्रा के प्रधान उद्देश्य माता सीता की खोज करना सर्वश्रेष्ठ इष्ट संप्राप्ति है। इसके पश्चात् विभीषण को अपने आराध्य श्रीराम की संप्राप्ति हुई। भगवान श्रीराम को भी अपनी परमप्रिया सीता के मिलन का मार्ग प्रशस्त हुआ।

अन्य संतों के कथनानुसार लंका त्रिकूट पर बसी हुई है। जो क्रमशः नीलशिखर, सुबेरशिखर और सुंदर शिखर पर विराजमान थी। सुंदर शिखर पर रावण का अत्यंत प्रिय प्रमोद उद्यान अशोक वाटिका निर्मित थी। माता सीता को राक्षसराज ने इसी अशोक वाटिका में रखा था, अतः सुंदर शिखर के कारण इस कांड का नामकरण सुंदर कांड रखा गया। यह वाल्मीकि रामायण से भी मेल खाता है। लंका पुरी राक्षसों की नगरी थी जहाँ राक्षसराज रावण की सत्ता चलती थी। जहाँ–

कहुं माल देह विशाल शैल समान अतिबल गर्जहीं।
नाना अखारन्ह भिरहिं बहु विधि एक एकन तर्जहीं।।

और

कहु महिष, मानुष, धेनु, अज, खर, खल, निशाचर भच्छहीं।

ऐसी नगरी तो दैत्य नगरी राक्षस नगरी ही कही जायगी किंतु इसके विपरीत जब हनुमंत लाल जी ने प्रातरबेला में विभीषण का गृह देखा जो इन सबके विपरीत था–

रामायुध अंकित गृह शोभा बरनि न जाय।
नव तुलसिका वृन्द तँह देखि हरष कपिराय।।

उनको यह देखकर परम हर्ष हुआ किंतु वे सोच में भी पड़ गए। सोचने लगे कि–

लंका निशिचर निकर निवासा
यहाँ कहाँ सज्जन कर वासा।।

इस दैत्य पुरी में कोई रामभक्त कैसे ?और एक क्षण में ही सही परिस्थिति स्पष्ट हो गयी जब विभीषण ने–

राम राम तेहि सुमिरन कीन्हा।
हृदय हरषि कपि सज्जन चीन्हा।।

और उन्होंने निश्चय कर लिया–

एहि सन हठ करिहौं पहिचानी।
साधु तें होय न कारज हानी।।

और इस प्रकार भक्त हनुमान का भक्त विभीषण से मिलना हुआ। जहाँ दो भक्त मिले वहाँ श्रीराम और श्रीरामकथा न हो यह संभव नहीं। जब हनुमान जी विभीषण से मिले तो विभीषण ने उन्हें हरिदास के रूप में देखा किंतु उन्हें कदाचित् श्री हनुमान जी में श्रीराम रूप के भी दर्शन हुए और वे कह उठे कि–

की तुम्ह राम, दीन अनुरागी।
आयहु मोहि करन बड़भागी।।

इस प्रकार दो भक्त मिले और हनुमान जी ने मानो रामकथा का प्रवचन ही कर डाला हो–

तब हनुमंत कही सब, रामकथा निज नाम।
सुनत जुगल तन पुलक मन, मगन सुमिरि गुन ग्राम।।

और इस प्रकार दोनों के ही तन रामभक्ति में लीन हो गए और मन पुलकित हो उठा। यहाँ 'सब रामकथा' शब्द से संकेत मिलता है कि हनुमान जी ने संपूर्ण रामकथा का श्रवण कराया था और दोनों ने पाया "अनिर्वाच्य विश्रामा"।

गोस्वामी जी ने अपनी विनयपत्रिका में भी सच्चे भक्त का लक्षण इस प्रकार वर्णन किया है–

सुन सीतापति सील सुभाउ
मोद न मन, तन पुलक,
नयन जल सो नर खेहर खाउ।।

मन में प्रसन्नता तन में रोमांच और नयनों से आनंदाश्रु धारा प्रवाहित होना ही भक्ति का सच्चा लक्षण है और यह बात श्री हनुमंतलाल जी व विभीषण दोनों पर घटित हुई। कैसा संयोग है कि लंका जैसी निशाचरी नगरी में भक्ति की धारा ही प्रवाहित होने लगी। जहाँ हनुमंत लाल और विभीषण जैसे दो–दो भक्तों का मिलन हो वह भक्तों की नगरी ही बन जाती है। दैत्य नगरी नहीं वह तो देवनगरी के समान हो जाती है।

श्री हनुमान जी अशोक वाटिका में जब सीता जी से मिले तो पुनः दूसरी बार रामकथा का प्रवचन होने लगा जिसके प्रवक्ता हनुमान जी और श्रोता भक्तिस्वरूपा श्रीसीता माता विराजमान थीं। हनुमान जी ने–

रामचंद्र गुण बरनै लागा।
सुनतहिं सीता कर दुख भागा।।
लागी सुनै श्रवण मन लाई।
आदिहु तैं सब कथा सुहाई।।

यहाँ "आदिहु तैं सब कथा" यह शब्दावली आरंभ से संपूर्ण रामकथा का गायन किया गया। इस प्रकार एक भक्त ने भक्तिस्वरूपा सीता माता को उन दोनों के आराध्य श्रीराम की कथा का श्रवण कराया जो श्रवणामृत बन गयी।

अशोक वाटिका में माता सीता को तर्जना देकर रावण के चले जाने पर दुखी सीतामाता के सामने एक अनोखी रामभक्त प्रकट हो गयी जो स्वयं तो राक्षसी थी किन्तु "राम चरण रत निपुन विवेका" थी त्रिजटा। त्रिजटा ने सीता माता को सान्त्वना देते हुए मानो राम रावण युद्ध, रावण का संहार, राम सीता का मिलन आदि की घटित होने वाली घटना

का पूर्वाभास ही प्रकट कर दिया। रावण वध और सीता राम मिलन की कथा का स्क्रिप्ट ही लिख डाला था। यही उसकी कही एक–एक घटना सत्य रूप में घटित हुई। इस प्रकार अब लंकापुरी में भक्तिस्वरूपा सीता माता के समक्ष श्री हनुमान जी और त्रिजटा जैसी रामभक्त दो प्रत्यक्ष हुए।

अब प्रश्न उठता है कि जहाँ राम के परमभक्त श्री विभीषण और रघुपति के वरदूत वायुपुत्र श्री हनुमान जी और रामचरण रत त्रिजटा जैसी भक्त हृदय विराजमान हों और उन सबके परमाराध्य श्रीराम विद्यमान न हों यह कैसे संभव था! इसका समुचित समाधान अस्पष्ट रूप से ही सही किन्तु मानस में वर्णन किया गया हैं। हनुमंत लाल जी जब लंकापुरी को प्रस्थित हुए तब वे अकेले नहीं गए थे, वे अपने हृदय में श्री रघुनाथ जी को भी धारण कर प्रस्थित हुए थे और हनुमान जी के हृदय में विराजमान पहले विभीषण जी को दर्शन दिये और सीता माता को संदेश सुनाते हुए श्रीराम जी ने ही अपनी व्यथा की कथा रहस्यात्मक ढंग से प्रकट की थी अन्यथा हनुमान जी यह कैसे कह सकते थे कि–

तत्व प्रेम करि मन अरु तोरा।
जानत प्रिया एक मन मोरा।।

हनुमान जी सीतामाता को प्रिया कह कर कैसे संबोधित कर सकते थे अतः भक्त हनुमान भक्तिस्वरूपा सीता के साथ अप्रत्यक्ष रूप में श्रीराम स्वयं उपस्थित हो गए हों तो कोई असंभव नहीं।

मेघनाद के ब्रह्मबाण से आहत श्री हनुमान जी को रावण के सम्मुख एक अपराधी की भाँति उपस्थित किया गया और रावण ने पूछा "कवन तें कीसा" तब श्री हनुमान जी ने राम के शौर्य और पराक्रम का ऐसा वर्णन किया मानो हनुमान जी ने रावण को कायरता का एक आइना ही दिखा दिया हो और एक–एक कर उसकी बखिया ही उधेड़ दी हो। निर्भय श्री हनुमान जी ने श्रीराम को समस्त ब्रह्माण्ड का नायक, उसका सर्जक और पालक तथा संहारकर्ता बताते हुए कहा कि रावण तुम जैसे शठों को सीख देने के लिए जो मनुष्य रूप में प्रकट हुए हैं मैं उन्हीं का दूत हूँ जिन्होंने अतुलित बलशाली खर, दूषण, त्रिशिरा और बाली का वध किया है। राजा जनक की सभा में शंकर जी के धनुष को तोड़ कर जनकनंदिनी सीता का वरण किया उस समय तेरा बल कहाँ चला गया था। तू याद कर रावण उन सहस्रबाहु और बाली को जिन्होंने अपने को वीर कहने वाले कायर को धूल चटा दी और छठी का दूध याद करा दिया था। इस प्रकार रावण जैसे लंकाधिपति के सामने खरी खोटी सुनाने वाला कोई निर्भीक रामभक्त ही हो सकता है। वह रावण जिसके सामने बड़े–बड़े देवता भी *"भृकुटि विलोकत सकल सभीता"*।

हनुमान जी द्वारा लंकादहन की घटना भी अभूतपूर्व थी मानो हनुमान जी ने रावण की लंका का ही नहीं उसके समस्त पापों, अत्याचारों और अन्याय को ही भस्मसात कर डाला हो और लंकापुरी को एक पुण्यपुरी के रूप में परिवर्तित कर दिया हो। लंकापुरी के समस्त राक्षसगण भी कहने लगे थे–

साधु अवग्या कर फलु ऐसा।
जरहि नगर अनाथ कर जैसा।

लंकादहन के पूर्व भक्त विभीषण के द्वारा रावण के सम्मुख राम की विजयपताका फहराने वाला वक्तव्य भी अनूठा था। भले ही विनम्र शब्दों में ही सही रावण को समझाने का प्रयत्न किया और उसको समझा दिया कि–

तात राम नहि नर भूपाला।
भुवनेश्वर कालहु कर काला।
ब्रह्म अनामय अज भगवंता।

व्यापक अजित अनादि अनंता।।

किन्तु वे कृपासिंधु भी हैं वे आप पर अवश्य ही कृपा करेंगे क्योंकि–

सरन गए प्रभु काहु न त्यागा।
बिस्व द्रोह कृत अघ जेहिं लागा।।

विभीषण के इन नीति भरे वचनों का सचिव माल्यवंत ने भी समर्थन किया और कहा कि "सो उर धरहुं जो कहत बिभीषण"। बार–बार समझाने पर भी रावण जैसा अहंकारी कब मानने वाला था ?और अपमानित कर उसे लात तक मार दी। फिर भी विभीषण ने यही कहा–

तुम पितु सरिस भलेहि मोहि मारा।
राम भजे हित नाथ तुम्हारा।।

इस प्रकार विभीषण श्रीराम की शरण में पहुंच गया।

राक्षसराज रावण को समझाने के लिए राजमहिषी मन्दोदरी ने भी राम का यश वर्णन किया और समझाया कि–

सुनहुं नाथ सीता बिनु दीन्हे।
हित न तुम्हार शंभु अज कीन्हे।।

और कहा कि तुम जैसे राक्षस तो मेढ़क के समान हैं और श्रीराम के बाण सर्पों के समान हैं जैसे सर्प मेंढक का भक्षण करता है उसी प्रकार श्रीराम के बाण सारे राक्षसों का भक्षण कर डालेंगे।

विभीषण को अपमानित कर श्रीराम की शरण पहुंचने की चर्चा सुनकर रावण भी कुछ सशंकित हो उठा और विभीषण की स्थिति को जानने के लिए *"पाछे रावन दूत पठाए"*। किंतु रावण के दूत श्रीराम की शरणागति के सम्मुख राम के प्रशंसक बन गए। श्रीराम के गुणग्राहक बन गए और–

प्रकट बखानहिं राम सुभाउ।
अति सप्रेम गा बिसरि दुराउ।।

और वे *"प्रभु गुन हृदय सराहहिं, शरनागत पर नेह"* और उन दूतों ने लंका लौटने पर रावण के सम्मुख श्रीराम के ही गुणों का बखान किया। इस प्रकार यदि संपूर्ण रूप से देखा जावे तो लंका जैसी नगरी दैत्यपुरी नहीं अपितु देव पुरी बन गयी थी। इस सुंदरकांड में जितना राम यशोगाथा का वर्णन हुआ है उतना रावण जैसे राक्षसों का वर्णन नहीं।

अतः हनुमान जी का विभीषण का निवास देखकर यह तर्क कि–

लंका निसिचर निकर निवासा।
यहाँ कहाँ सज्जन कर वासा।
मन महुं तरक करन कपि लागा।

यहाँ हनुमान जी का तर्क तर्क ही रहा। वास्तव में जहाँ रामभक्त हनुमान, विभीषन, भक्तिमति सीता, रामगुण गायिका त्रिजटा और श्री हनुमान जी का विभीषण और सीता के सम्मुख रामकथा का विषद वर्णन और प्रत्यक्षरूप में हनुमान के हृदय में विराजमान श्रीराम का लंका प्रवेश, उनकी मुद्रिका का पहुंचना, मंदोदरी तथा रावण के दूतों का राम का शौर्य और पराक्रम का विषद वर्णन यह सिद्ध करता है कि निशाचरी नगरी लंकापुरी एक देवपुरी ही बन गयी थी।

एस/11, मंदाकिनी कालोनी, कोलार रोड, भोपाल (म.प्र.) पिन–462042

lqnj dk.M dk dF;

dfork

lhrk&'kks/k

fxfjekgu x#

देख निराशा वानर दल की, बोले जामवन्त गुणवन्त।
राम काज लगि तब अवतारा, का चुप साध रहे हनुमन्त।।
सुनकर गर्जे सिंह समान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
जामवन्त की बातें सुनकर, बजरंगी ने की हुंकार।
लंका को उखाड़ सकता हूँ, जा सकता हूँ सागर पार।।
राम कृपा से सब तृण मान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
उठा शैल मैनाक सिन्धु से, हनुमत को देने विश्राम।
किन्तु पवन सुत छूकर बोले, बिना काम कैसा आराम।।
आभारी हूं पा सम्मान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
आगे फिर सुरसा ने रोका, फैलाया मुख का विस्तार।
होते गए बड़े बजरंगी, कर अपना द्विगुणित आकार।।
मुख सौ योजन, लघु हनुमान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
कर प्रवेश मुख बाहर आए, मांगी बिदा किया प्रणाम।
सुरसा ने आशीष दिया तब, होगा सफल राम का काम।।
आगे चले सुमर भगवान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
एक तामसी वृत्ति रूपणी, सिन्धु बीच सिंहका का वास।
छाया पकड़ गगनचर खाती, जो दिखते उड़ते आकाश।।
लिए पवन सुत उसके प्राण, जय बजरंगी जय हनुमान।।
करते विघ्न पार बजरंगी, जा पहुंचे सागर के पार।
देख शैल उछले और कूदे, लंका देखी पवनकुमार।।
लिया रूप कपि मशक समान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
बच न सके लंकिनी दृष्टि से, बोली छिपकर जाता कौन।
देर न की बजरंग बली ने, मारा घूंसा रहकर मौन।।
खाकर मार, गई पहचान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
घर घर जा अन्वेष किया, पर कहीं दिखी न सीता मात।
करते करते खोज कीश को, एक तिहाई बीती रात।।

राम भक्त का दिखा मकान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
राम–राम मृदु वचन सुना, कपि जान गए निश्चित यह संत
भक्त विभीषण से सीता का, पता मिला, हर्षित हनुमन्त।।
किया सिया मिलने प्रस्थान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
वन अशोक में तरु के नीचे, श्री राम का करते जाप।
बैठी हुई बिरहणी सीता, तरु से कपि देखा चुपचाप।।
बिना राम के व्याकुल प्राण, जय बजरंगी जय हनुमान।।
देखा दुखी जनक दुहिता को, कुसमय जान हृदय धर धीर।
राम कथा इतिवृत्त सुनायी, बिना सिया व्याकुल रघुवीर।।
खोज रहे वानर बलवान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
देख मुद्रिका श्री राम की, हुआ हृदय सिय को विश्वास।
अल्प समय को भूल गई दुख, जाग्रत हुई मिलन की आस।।
निर्भर प्रेम मगन हनुमान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
शीघ्र आयेंगे तुम्हें छुड़ाने, श्री राम वानर ले साथ।
अन्त समय आया रावण का, सुर मुनि गायेंगे गुणगाथ।।
फैलेगी जग कीर्ति महान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
बड़े–बड़े बलशाली निशिचर, इन्हें जीतना कठिन उपाय।
सभी तुम्हारे जैसे वानर, दल में कपि होंगे लघु काय।।
सोच–सोच होता मुख म्लान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
वज्र देह वाले बजरंगी ने, दिखलाया विकट स्वरूप।
बड़े–बड़े दिग्गज भी छोटे, लगने लगे देख यह रूप।।
सिय हिय शान्त हुआ तूफान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
सैन्य शक्ति संचालन क्षमता, जान सकूं सोचा शिव अंश।
रावण तक जा पाने का पथ, करूं वाटिका का विध्वंस।।
सोच यही बोले हनुमान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
मचल उठा मन देख मधुर फल, खाने की माँ! उर अभिलाष।
रखवारों की करें न चिन्ता, वध कर दूंगा बिना प्रयास।।
आज्ञा की सियमातु प्रदान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
आज्ञा लेकर जननि सिया से, उछल कूद कर दी प्रारंभ।
फल खाए तरु तोड़ गिराये, रखवारे मारे अविलम्ब।।
करने लगे कीश नुकसान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
उसी रात रावण ने देखा सपना, एक वानर विकराल।
चौपट लंका पूरी कर दी, डूबा सोच बुरा था हाल।।
प्रातः खबर आ दी दरबान, जय बजरंगी जय हनुमान।।

बड़े–बड़े योद्धा रखवारे, खेत रहे लड़कर सरकार।
बचे हुए कुछ भागे आए, द्वार आपके करें पुकार।।
वन अशोक का करिये त्राण, जय बजरंगी जय हनुमान।।
सुनकर रावण आग हो गया, मूर्ख कायरों नमकहराम।
पीठ दिखाकर भागे आये, निशिचर वंश किया बदनाम।।
कहकर भट भेजे बलवान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
फटा अक्ष का वक्ष, वीर बजरंगी ने यों मारी लात।
पकड़ पकड़कर घुमाघुमाकर, करने लगे वीर उत्पात।।
आया मेघनाद बलवान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
इन्द्र जीतने वाला आया, लिये पेड़ झपटे कपिवीर।
तोड़ा रथ सारथी संहारा, मेघनाद को किया अधीर।।
रक्खा ब्रह्म अस्त्र का मान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
रावण के दरबार आ गये, हनुमत वीर निशाचर साथ।
लेने श्रेय, पकड़ हम लाये, चलते साथ पकड़ कर हाथ।।
गाते इन्द्रजीत गुणगान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
रावण हँसा देख हनुमत को, अच्छा तू है वानर वीर।
धोखे से उत्पात मचाया, समझ रहा खुद को रणधीर।।
कौन कहां तेरा स्थान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
निर्भय होकर कहा पवनसुत, अवधपुरी के राजा राम।
जिनकी पत्नी तू हर लाया, उनका ही मैं परम गुलाम।।
कहते हैं मुझको हनुमान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
भक्त विभीषण ने समझाया, मान गया रावण मति मंद।
पूंछ विहीन करो वानर को, इतना ही काफी है दण्ड।।
बड़ा मृत्यु से है अपमान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
पूंछ बढ़ाई बजरंगी ने, मिला सभी को नूतन खेल।
लगे लिपटने वस्त्र अनेकों, डाला गया क्वंटलों तेल।।
प्रज्ज्वलित कर दी गई कृशान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
कंचन महल चढ़े मारुत सुत, चलने लगे मरुत उन्चास।
देख भयानक रूप अग्नि का निशिचर होने लगे अनाथ।।
भागो सभी बचाओ जान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
हाहाकार हुआ नगरी में, सिंहनाद करते बलवान।
हंसी उड़ाओ और हमारी, मानो बता रहे हनुमान।।
लंका जली अनाथ समान, जय बजरंगी जय हनुमान।।

राम भक्त था अतः बच गया साधु विभीषण का गृहधाम।
पूँछ बुझा लघु रूप बनाकर, खड़े सिया सम्मुख बलधाम।।
आज्ञा दो माँ करूं पयान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
चूड़ामणि दी रामदूत को, बोली लो बेटा पहचान।
कहना श्रीराम से जाकर, बिना राम के व्याकुल प्राण।।
शीघ्र मिलें प्रभु कृपानिधान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
लंका जला, उजाड़ वाटिका, लेकर सीता की सुधि कीश।
आकर किया प्रणाम वहां पर, जहां बिराजे थे जगदीश।।
हुआ राम को हर्ष महान, जय बजरंगी जय हनुमान।।
पाकर जनक नंदिनी की सुधि, रघुनंदन उर हर्ष अपार।
तुम समान नहीं कोउ उपकारी, कहा राम ने बारम्बार।।
दिया अनन्य भक्ति वरदान, जय बजरंगी जय हनुमान।।

तु.मा. भा. अप्रैल 2015

शिव संकल्प साहित्य परिषद, नर्मदापुरम, होशंगाबाद

Jk)katfy

अद्वितीय विद्वान और रामचरितमानस के प्रति समर्पित श्री गार्गीशरण मिश्र 'मराल' का माह दिसंबर में जबलपुर में स्वर्गवास हो गया।

मराल जी का अध्ययन उच्च कोटि का था तथा मानस पर उनके लेख अत्यंत उत्तम सामग्री युक्त एवं सारगर्भित होते थे।

मराल जी का संबंध मानस भवन से आरंभ से रहा और वह हमारे आजीवन सदस्य और सम्माननीय वरिष्ठ लेखक थे। अपने जीवन काल में उन्होंने वार्त्ताओं, परिसंवादों और सम्मेलनों तथा अपने लेखों के माध्यम से मानस का निष्ठा से वृहद् प्रचार किया।

तुलसी मानस भारती के वे नियमित लेखक थे एवं पाठकों में अत्यंत लोकप्रिय थे। वर्ष 2018 में उन्हें प्रतिष्ठान की ओर से तुलसी मानस भारती के सर्वश्रेष्ठ लेखक के रूप में ''श्री त्रिभुवन यादव सम्मान'' से अलंकृत किया गया था। उनके आकस्मिक स्वर्गवास से न केवल जबलपुर में बल्कि पूरे देश के संपूर्ण मानस परिवार को जो क्षति हुई है उसकी पूर्ति असंभव है। मानस भवन एवं समस्त राम अनुरागी परिवार की ओर से विनम्र श्रद्धांजलि।

ys[k

^lqUnjdk.M* dk lkSan;Z ck/k

Mk- f'koo'k ik.M;

"रामायण" सात काण्डों में विभक्त है– बालकाण्ड, अयोध्याकांड, अरण्यकाण्ड, किष्किंधा कांड, सुन्दर काण्ड, लंका काण्ड और उत्तरकाण्ड। इनमें से "सुन्दरकाण्ड" और उत्तरकाण्ड को छोड़कर शेष पाँचों काण्डों के नाम स्थान विशेष से जुड़े हुए हैं। बालकाण्ड भगवान राम की बाललीला का वर्णन है तथा उत्तर काण्ड में रामकथा का उत्तरपक्ष वर्णित है किन्तु "सुन्दरकाण्ड" का नाम न तो स्थानपरक है और न घटना विशेष से संबंधित है तो इस काण्ड का नाम सुन्दरकाण्ड रखने के पीछे अवश्य ही आदि कवि की अपनी सौन्दर्य दृष्टि रही होगी।

"सुन्दरकाण्ड" के सौन्दर्य बोध पर विचार करने के क्रम में हमें प्रथमतः सौन्दर्य शब्द के व्युत्पत्तिगत अर्थ एवं भाववाचक अर्थ पर विचार करना होगा। "सौन्दर्य" शब्द "सुन्दर" का भाववाचक रूप है। वाचस्पत्य कोश के अनुसार "सु" उपसर्ग पूर्वक "उन्द" में "अरन" प्रत्यय संयोजित करके "सुन्दर" शब्द की सिद्धि मिलती है जिसका अर्थ होता है आर्द्र करने वाला। "नन्द" धातु से भी "सुन्दर" शब्द की व्युत्पत्ति की गई है जिसके अनुसार "नन्दति" से अर्थ हुआ प्रसन्न करने वाला। आप्टे के संस्कृत हिन्दी कोश के अनुसार "सुन्दर" शब्द "सुन्द" + अर् के संयोग से निष्पन्न होता है। शब्द कल्पद्रुम कहता है– "सुष्ठु उनन्ति आद्री करोति चित्रमिति" अर्थात् दर्शक या पाठक के चित्र को भलीभाँति आर्द्र करने वाला वस्तु का धर्म। इन व्युत्पत्तिगत अर्थों से स्पष्ट होता है कि जो आकर्षक हो, मन को अपनी ओर खींच ले वही "सुन्दर" है।

"सौन्दर्य" शब्द की व्युत्पत्ति के अनुसार इसकी प्रकृति तथा स्वरूप का सही निर्धारण नहीं हो पाता। मूलतः व्यावहारिक जगत में "सौन्दर्य" से आकर्षण का बोध होता है। मानव मन जीवन जगत में सौन्दर्य की अनुभूति सार्वजनिक रूप से करता है। "सुन्दर" शब्द का प्रयोग मूलतः रूप, गुण के लिए होता है। "सुन्दर पदार्थों या प्राणियों का भाव, स्वभाव, तत्व," गुण, धर्म ही मूलतः "सौन्दर्य" है। ऐसा कहा जा सकता है कि आजकल आन्तरिक और बाह्य सभी पक्षों के आकर्षण–अर्थ में "सौन्दर्य" शब्द का प्रयोग होने लगा है। व्यावहारिक दृष्टि से सौन्दर्य का प्रयोग

निम्नलिखित अर्थों में विभिन्न संदर्भ के अनुसार होता है यथा— वस्तु के रूप की विशेषता के रूप में, प्राणी के रूप की विशेषता के रूप में, वस्तु के विशिष्ट मूल्य के अर्थ में, वस्तु की सौन्दर्यानुभूति के रूप में, कला या साहित्य में भाव और कर्म की संवेद्य अभिव्यक्ति के रूप मे, साहित्य और कलाओं में निहित अभिव्यक्ति की मार्मिकता के रूप में, प्रकृति की मनोहरता की अभिव्यक्ति के रूप में, दर्शन के क्षेत्र में ईश्वर की परिकल्पना के रूप में। हमारा अभीष्ट साहित्य (सुन्दरकाण्ड) में भाव और कर्म की संवेद्य अभिव्यक्ति और साहित्य (सुन्दरकाण्ड) में अभिव्यक्ति की मार्मिकता को ध्यान में रखते हुए "सुन्दरकाण्ड" के सौन्दर्य बोध का विश्लेषण करना है।

संस्कृत के उद्‌भट विद्वानों ने नामकरण के संबंध में कुछ सिद्धान्त निर्धारित किए हैं यथा— नाम यथा साध्य "संक्षिप्त" होना चाहिए। नाम आकर्षक और ध्यानाकर्षी होना चाहिए। "नाम" से "वर्ण्य" विषय का आभास मिल जाना चाहिए। नाम नायक या नायिका के नाम पर भी रखा जा सकता है। जिस पुस्तक कथा—कहानी, काव्यकृति, काव्यखंड, परिवर्त, अध्याय आदि के नाम में उपर्युक्त गुण होते हैं उसे साहित्यशास्त्री "सुन्दर और उदात्त" मानते हैं। उदात्त "सुन्दर" का ही भावान्तरित रूप है और सौन्दर्य का पर्याय सा है। "व्याकरण के अनुसार "सुन्दर" शब्द की व्युत्पत्ति— सु+द्रियते "दृङ् आदरे" (तु.आ. अनिट्) ग्रहबृह. (3—3—58) इत्यप। पृषोदरादिः (6—3—109) अर्थात् जिसका अच्छी तरह आदर किया जाता है वह "सुन्दर" कहा जाता है। इस काण्ड में वाल्मीकि ने श्री हनुमान जी का सम्पूर्ण वर्चस्व प्रस्तुत करने में आदर दिखाया है, अतः इस प्रकरण का नाम सुन्दरकाण्ड है। कुछ विद्वान "उन्दी क्लेदने" धातु से भी "सुन्दर" शब्द की व्युत्पत्ति करते हैं। जैसे— "सु + उनत्ति" चित्तं द्रवीकरोति। बाहुल कादरः। शकन्ध्वादिषु पररूपं वाच्यम् (वा. 6/1/94)। जो घटना पाठकों या भक्तों के चित्त को अत्यधिक व्यवस्थित रूप से द्रवित करे वही "सुन्दर" है।'' (श्री हनुमान चालीसा (चतुष्टयम्) पृ.159) "सुन्दर" शब्द की परिभाषा देते हुए राष्ट्रपति सम्मानित विद्वान पं. मोहनलाल शर्मा पाण्डेय लिखते हैं— "नष्टद्रव्यस्य लाभो हि सुन्दर परिकीर्तितः" अर्थात् खोई हुई (अपहृत की गई) वस्तु का पता लगाना और उसे प्राप्त करना ही "सुन्दर" है। गोस्वामी कपिलदेव गिरि ने सुन्दरकाण्ड के सम्पादन की भूमिका में नानार्थक कोशों के आधार पर "सुन्दर" का पर्यायवाची "वानर" अर्थ का संकेत दिया है।

सुन्दरता (सौन्दर्य) की इन परिभाषाओं के आधार पर सुन्दरकाण्ड के सौन्दर्य बोध का निरूपण इस प्रकार किया जा सकता है—

d½ Hkko vkj del dh lon; vfHk0;fDr %

वस्तुतः सौन्दर्य के दो पक्ष होते हैं— एक बाह्य और दूसरा आन्तरिक। बाह्य सौन्दर्य इन्द्रियों को प्रभावित करता है और आन्तरिक सौन्दर्य मन को, चेतना और आत्मा को। भाव और कर्म की संवेद्य अभिव्यक्ति से ही आंतरिक सौन्दर्य का जन्म होता है जो कला एवं साहित्य का सौन्दर्य होता है। "सौन्दर्य" से भावक प्रसन्न चित्त होता है। जिस कार्य या भाव से भोक्ता की आंतरिक वृत्तियाँ हर्षोत्फुल हो जाती हैं वह सौन्दर्य का गुण—वाहक कहा जायेगा। "सुन्दरकाण्ड" में रावण माता सीता को अपहृत कर लंका ले गया था और अशोक वाटिका में रखा था, इसकी जानकारी प्रभु राम को "सुन्दरकाण्ड" में ही होती है और वहीं उन्हें सीता की वास्तविक स्थिति का ज्ञान होता है और सीता

का स्मरण कर वे भाव विह्वल हो जाते हैं। उस भाव विह्वलता में जो भावोद्रक होता है उसका आधार वही सौन्दर्य है जो सीता वियोग की घड़ी की देन है–

"सुन" कपि तोहि समान उपकारी।
नहि कोउ सुर नर मुनि तनधारी।।
प्रति उपकार करौं का तोरा।
सन्मुख होई न सकत मन मोरा।।
सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं।
देखऊँ करि विचार मन माहीं।।
पुनि पुनि कपिहि चितव सुरत्राता।
लोचन नीर पुलक अति गाता।।
सुनि प्रभु बचन बिलोकि मुख गात हरषि हनुमंत।
चरन परेऊ प्रेमाकुल त्राहि त्राहि भगवंत।।

सौन्दर्य ऐसा कि उसके प्रभाव से भक्त और भगवान, आराध्य और आराधक, स्वामी और सेवक दोनों हर्षित और प्रफुल्लित हो जाएँ। शत्रुता की कुरूपता में भी सौन्दर्य की छवि दिखलाई पड़ने लगे–

कह सुक नाथ सत्य सब बानी।
समुझहु छाड़ि प्रकृति अभिमानी।।
सुनहु बचन मम परिहरि क्रोधा।
नाथ राम सन तजहुँ बिरोधा।।
अति कोमल रघुबीर सुभाऊ।
जद्यपि अखिल लोक कर राऊ।।
मिलत कृपा तुम्ह पर प्रभु करिही।
उर अपराध न एकउ धरिही।।

(रामचरित मानस 5/56–3–6)

[k½ dFkkud vkj dFkkuk;d dh thou dh lqUnjre ?kVuk dk o.kZu

रामचरित मानस अथवा वाल्मीकि रामायण के नायक श्रीराम के जीवन की सुन्दरतम घटना का उल्लेख सुन्दरकाण्ड में ही हुआ है। खोयी पत्नी के पाने की सूचना इसी काण्ड में मिलती है। माता सीता की खोज में गए हनुमान की खोज–यात्रा सफल होती है और प्रभु श्रीराम प्रसन्न हो हनुमान को गले लगा लेते हैं–

सुनि सीता दुख प्रभु सुख अयना।
भर भरि आए जल राजीव नयना।।
पुनि पुनि कपिहि चितव सुरत्राता।
लोचन नीर पुलक अति गाता।।
कपि उठाइ प्रभु हृदयँ लगावा।
कर गहि परम निकट बैठावा।।

(रामचरितमानस 5/32)

x½ okYehfdd`r jkek;.k के सुन्दरकाण्ड 68 तथा तुलसीकृत रामचरितमानस के पूरे "सुन्दरकाण्ड" में वानर हनुमान द्वारा किए गए अलौकिक अर्थात् अतिमानुष कार्यों के आधार पर ही यह प्रकरण "सुन्दरकाण्ड" के नाम से महत्वपूर्ण स्थान रखता है–

''सुन्दरे सुन्दरं दृश्यं सुन्दरे सुन्दरी कथा।
सुन्दरे सुन्दरी सीता सुन्दरे किन्न सुन्दरम्।।''

ऐसे अलौकिक या अतिमानुष कार्य हैं– शत योजन समुद्र लंघन, सेतु बंधन, अभेद्य लंका प्रवेश, सीतान्वेषण, सीता प्रत्ययीकरण, सीता–संभाषण, लंका दहन, अशोक वाटिका–विध्वंस तथा ब्रह्मास्त्र का आदर। अपने स्वामी (इष्ट देव) प्रभु राम की कृपा से उनके सेवक (भृत्य) वानर हनुमान द्वारा इनके अलौकिक कार्यों का किया जाना भक्ति सौन्दर्य का चरम उत्कर्ष ही है।

?k½ okYehfd jkek;.k ,oa jkepfjr ekul के सुन्दरकाण्ड में नष्ट द्रव्य की प्राप्ति का मार्ग खुला है, अभियान में सर्वत्र सफलता मिली है, मंगललाभ हुआ है। भक्तिभाव की वृद्धि हुई है, भगवद्भक्त अपने भगवान को प्रसन्न करने में सफल हुआ है। ये सब फल भक्ति भावना के

उज्जवल (उच्चतम सौन्दर्य) के प्रकाशक हैं। एतद् संबंधी कतिपय उद्धरण देखें–

u"Vn0; dh ikfIr dh lipuk&

"जाइ पुकारे ते सब बन उजार जुवराज।
सुनि सुग्रीव हरष कपि करि आए प्रभु काज।।"

(रामचरित मानस 5/28)

vfHk;ku eI lQyrk&

नाथ काजु कीन्हें हनुमाना।
राखे सकल कपिन्ह के प्राना।।
राम कपिन्ह जब आवत देखा।
किएँ काजु मन हरष बिसेषा।।

(रामचरितमानस 5–दो. 28 के आगे)

eIxy ykHk&

देखि राम बल पौरुष भारी।
हरषि पयोनिधि भयउ सुखारी।।
सकल चरित कहि प्रभुहि सुनावा।
चरन बंदि पाथोधि सिधावा।।

(रामचरित मानस 5–60)

HkfDr Hkko dh o'f)&

नाथ दसानन कर मैं भ्राता।
निसिचर बंस जनम सुर त्राता।।
सहज पाप प्रिय तामस देहा।
जथा उलूकहिं तम पर नेहा।।
श्रवन सुजसु सुनि आयउँ प्रभु भंजन भवभीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुबीर।।
अस कहि करत दंडवत देखा।
तुरत उठे प्रभु हरस बिसेषा।।
दीन बचन सुनि प्रभु मन भावा।
भुज बिसाल गहि हृदयँ लगावा।।

(रामचरित मानस – 5/45–आगे–पीछे)

lkfgR; eI vfHk0;fDr dh ekfeIdrk&

अभिव्यक्ति की मार्मिकता के अंतर्गत दो महत्वपूर्ण बिन्दु उभरते हैं– अनुभूति (भाव) को जगाने वाली कल्पना और 2. उक्ति वैचित्र्य (उक्ति चमत्कार)– भाव को धारदार और हृदयावर्जक बनाना। साधारण से साधारण वस्तु जैसे सजावट और अलंकरण से आकर्षक और प्यारी लगने लगती है उसी प्रकार साधारण वर्णन भी कल्पना और मार्मिकता के संयोग से "सुन्दर" (आकर्षक या हृदयग्राही) बन जाते हैं। भाव के साथ अभिव्यक्ति का सौन्दर्य–कौशल रचना को मनोहारी बना देता है। सुन्दरकाण्ड के भाव और भाषा दोनों के विन्यास में सह–अस्तित्व का स्वतः स्थापित हो जाना उसके सौन्दर्य–मेरुदंड का आधार बन जाता है। अनुभूति (भाव) और अभिव्यक्ति पक्ष के कुछ आधार–बिन्दुओं को सामने रखकर उसकी परख की जा सकती है।

सुन्दरकाण्ड में असाधारण पराक्रम के साथ असाधारण विनम्रता, शालीनता, क्षमाशीलता और अनुग्रहशीलता का बड़ा ही सुन्दर प्रदर्शन हुआ है। व्यक्ति की इन उदात्त वृत्तियों का अति सहज प्रयोग इस काण्ड के भाव–सौन्दर्य को द्विगुणित आभा प्रदान करता है। कतिपय स्थल वानगी तौर पर प्रस्तुत हैं –

vlk/kkj.k foueIrk&

विनम्रता व्यक्तित्व का सर्वाधिक आकर्षक पक्ष है जिसके संयोग से व्यक्ति के व्यक्तित्व का सौन्दर्य दयुतिमान हो उठता है। विद्या के साथ विनय (विनम्रता) को व्यक्तित्व का अनिवार्य आभूषण बताया गया है– विद्यैव सर्वम्। सुन्दर काण्ड में अभिदर्शित विनम्रता का एक स्थल स्थाली पुलाक न्यायवत् प्रस्तुत है–

अस कहि प्रभु अनुजहिं समुझाई।
सिंधु समीप गए रघुराई।।
प्रथम प्रनाम कीन्ह सिरु नाई।
बैठे पुनि तट दर्भ डसाई।।

'kj.kkxr ij uig ¼{kek'khyrk½ & शरण में आए शत्रुओं को भी क्षमादान कर भगवान राम ने

असाधारण क्षमाशीलता का परिचय दिया है–

जबहि बिभीषन प्रभु पहि आए।
पाछे रावन दूत पठाये।।
सकल चरित तिन्ह देखे धरें कपट कपि देह।
प्रभु गुन हृदय सराहहिं सरनागत पर नेह।

vuqxg'khyrk&

अनुग्रह भाव मानव की वह सद्वृत्ति है जो सब पर समान प्रेम भाव रखती है। शत्रु–मित्र सब उसकी कृपा के आलम्ब बने रहते हैं। सुन्दरकाण्ड में ऐसे सद्भाव का नारिकेल पाक संवर्द्धन देखते हैं। स्थाली पुलाक न्यायवत् मात्र एक स्थल निदर्शनार्थ –

सुनहु सखा निज कहऊँ सुभाऊ।
जान भुसुंडि संभु गिरिजाऊ।।
जो नर होइ चराचर द्रोही।
आवै सभय सरन तकि मोही।।
तजि मदमोह कपट छलमाना।
करऊँ सद्य तेहु साधु समाना।।

x x x x

अस सज्जन मम उर बस कैसे।
लोभी हृदय बसइ धनु जैसे।।

(सुन्दरकाण्ड दोहा 47 से आगे)

अभीष्ट कार्य की सिद्धि के सत्प्रयास और उसकी सफलता की प्रत्याशा भी काव्य–सौन्दर्य के आधार कारकों में प्रमुख रूप से परिगण्य हैं। माता सीता के अन्वेषण में तत्पर वानर–यूथ को लंका के अशोक–वन में रहने की सूचना प्राप्त हो जाती है। काण्ड का प्रारंभ ही शुभ सूचना की प्रसन्नता से होता है–

जामवंत के बचन सुनाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।।

और अंत में सेतुबन्ध जैसी दुर्गम बाधा के सफल निराकरण से इसका अन्त होता है–

देखि राम बल पौरुष भारी।
हरषि पयोनिधि भयउ सुखारी।।
सकल चरित कहि प्रभुहि सुनावा।
चरन बंदि पाथोधि सिधावा।।

e;kZnk] ikyu vkj e;kZnk&j{k.k भी मानवीय आचार–व्यवहार के भूषण माने जाते हैं और इनसे भावों को कलात्मक सौन्दर्य प्राप्त होता है। "सुन्दरकाण्ड" में नायक हनुमान और प्रतिनायक रावण दोनों अपने–अपने ढंग से मर्यादा–पालन और मर्यादा रक्षण करते दिखाई देते हैं–

नायक हनुमान के पक्ष से– ब्रह्म अस्त्र साधने में समर्थ हनुमान मर्यादा (महिमा) की रक्षा के लिए "ब्रह्मसर" में बँध जाते हैं–

ब्रह्म अस्त्र तेहिं साधा कपि मन कीन्ह विचार।
जौ न ब्रह्म सर मानउँ महिमा मिटई अपार।।
ब्रह्मबान कपि कहुँ तेहि मारा।
परतिहुँ बार कटकु संघारा।।
तेहि देखा कपि मुरुछित भयऊ।
नागपास बाँधेसि लै गयउ।।

(मानस 5–दोहा 19 के आगे)

शब्द शक्तियों के चमत्कार के साथ काव्य में सूक्तियों, सुभाषितों, मुहावरों, कहावतों के सुष्ठु प्रयोग से कथ्योक्ति में सौन्दर्य का लेप चढ़ाने की स्वस्थ परम्परा रही है। ऐसे बहुशः प्रयोग से सुन्दरकाण्ड की भावभूमि सुन्दर से सुन्दरतम तक पहुँच गई है। कुछ स्थल नमूने के तौर पर प्रस्तुत हैं–

¼d½

बिनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति।।

(मानव 5–57)

¼[k½

सचिव वैद गुरु तीन जौं प्रिय बोलहिं भयत्रास।
राजधर्म तन तीनि कर होइ बेगिहिं नास।।
(मानस–5–37)

¼x½

जहाँ सुमति तहँ सम्पति नाना।
जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना।।
(मानस 5–39/6)

¼?k½

कादर मन कहुँ एक अधारा।
दैव दैव आलसी पुकारा।।
(मानस 5–50/4)

¼³½

करत राज लंका सठ त्यागी।
होइहि जव कर कीट अभागी।।
(मानस 5/52–5)

¼p½

क्रोधिहि सम कामिहि हरिकथा।
ऊसर बीज बएँ फल जथा।।
(मानस 5/57–4)

¼N½

काटेहिं पर कदरी फरइ कोटि जतन कोउ सींच।
बिनय न मान खगेस सुनु डाटेहि पइ नव नीच।।
(मानस– 5/58)

एवं विध सुन्दरकाण्ड की विषयवस्तु और अभिव्यक्ति विदग्धता के अवलोकन पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यह आद्यंत सौन्दर्य तत्व से अभिप्रेरित और प्रणोदित है ओर इसका मूल प्रेरक तत्व सौन्दर्य है जिसका बोध हमें पगे–पगे होते रहता है। यह सौन्दर्य जहाँ एक ओर कवि और कलाकार को रचना की प्रेरणा देता है और प्रेरणा में दीर्घ काल तक ऊर्जा बनाये रखता है वहीं वह सौन्दर्यमयी कलाकृति के देखने और पढ़ने वाले दर्शकों और पाठकों के मन को भी प्रसन्न, उल्लसित और आनन्दमय बना देता है। सुन्दर काण्ड का यही सौन्दर्य है जो सामान्य पाठकों, भक्तों, साधकों, आर्तजनों के बीच उसे ऐसा लोकप्रिय बना देता है कि वह आज सबों की गले का कंठहार बना हुआ है।

लीलाधाम 3/307 पू पाटलिपुत्र कालोनी,पटना–800013 मो.: 9430253666

''सुंदरकांड में असाधारण पराक्रम के साथ असाधारण विनम्रता, शालीनता, क्षमाशीलता और अनुग्रहशीलता का बड़ा ही सुंदर प्रदर्शन हुआ है।''

ys[k

Jkh guqekuth dk lEizs"k.k& dkS'ky ,oa nkf;Ro&foLrkj

izk- cky d".k dqekor

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण में श्रीरामजी ने महर्षि अगस्त्यजी से कहा है कि रावण और बाली दोनों का बल भी हनुमानजी के बल की बराबरी नहीं कर सकता था। शूरता, दक्षता, बल, धैर्य, बुद्धिमत्ता, नीति, पराक्रम और प्रभाव–इन सभी सद्‌गुणों ने हनुमानजी के भीतर घर कर रखा है। युद्ध में हनुमानजी के जो पराक्रम देखे गये हैं वैसे वीरतापूर्ण कर्म न तो काल के, न इन्द्र के, न भगवान विष्णु के और न वरुण के ही सुने गये हैं। मुनीश्वर! यदि मुझे वानरराज सुग्रीव के सखा हनुमान न मिलते तो जानकी का पता लगाने में भी कौन समर्थ हो सकता था ?

प्रस्तुत आलेख में हम श्रीहनुमान्‌जी के दो सद्‌गुणों की विशद चर्चा करेंगे–

1. श्रीहनुमान्‌जी का सम्प्रेषण कौशल तथा
2. श्रीहनुमान्‌जी का दायित्व–विस्तार विवेक।

Jkhguqekuth dk lEizs"k.k dkS'ky

सम्प्रेषण का तात्पर्य किसी विषय–वस्तु का तथ्य के विषय में दो या अधिक व्यक्तियों के मध्य परस्पर समझ है। प्रभावी सम्प्रेषण एक सेतु का कार्य करता है अर्थात् दो पक्षों को जोड़ता है। सकारात्मक तथा रचनात्मक सम्प्रेषण जहाँ उचित समन्वय स्थापित करता है वहाँ नकारात्मक एवं विध्वंसक संप्रेषण विरोध को जन्म देता है। श्रीहनुमान्‌जी ने अपने सम्प्रेषण कौशल द्वारा रामजी से सुग्रीव को जोड़ा, रामजी से विभीषण को जोड़ा, तथा सेनानायकों से सेना को जोड़ा। श्रीहनुमान्‌जी की भूमिका किष्किन्धाकाण्ड, सुन्दरकाण्ड, लंकाकाण्ड तथा उत्तरकाण्ड में दर्शायी गयी है। किन्तु सुन्दर काण्ड में विशेष रूप से।

कथा आती है कि बालि और सुग्रीव दोनों भाई थे। अर्धरात्रि को मय दानव के पुत्र मायावी ने बालि को युद्ध के लिये ललकारा। मायावी के पीछे दोनों भागे। मायावी पर्वत की गुफा में जा घुसा। तब बालि ने सुग्रीव से कहा कि पंद्रह दिन तक यहाँ मेरी प्रतीक्षा करना। यदि मैं न आऊँ तो जान लेना कि मैं मारा गया। सुग्रीव उस गुफा के द्वार पर एक माह तक रहा। वहाँ गुफा में से रक्त की धारा निकली। तब सुग्रीव ने समझा कि मायावी ने बालि को मार डाला, अब आकर मुझे मारेगा।

इसलिये वह गुफा के द्वार पर एक शिला रखकर भाग आया। नगर को बिना राजा के देखकर मन्त्रियों ने जबर्दस्ती उसे राज्य दे दिया। जब बालि मायावी को मारकर घर आ गया तब राजसिंहासन पर सुग्रीव को देखकर शत्रु के समान समझा और उसे बहुत मारा। सुग्रीव का सर्वस्व तथा स्त्री को भी छीन लिया। ऋष्यमूक पर्वत पर सुग्रीव अपने मन्त्रियों के साथ रहने लगा क्योंकि इस पर्वत पर शापवश बालि नहीं आ सकता था। फिर भी मन में सुग्रीव भयभीत रहता था।

श्रीरामजी तथा लक्ष्मणजी को जानकीजी की खोज में ऋष्यमूक पर्वत की ओर जाते देख श्रीहनुमान्‌जी से सुग्रीव ने भयभीत अवस्था में कहा– "हे हनुमान! सुनो! ये दोनों पुरुष बल और रूप के निधान हैं। तुम ब्रह्मचारी का रूप धारण करके जाकर देखो। अपने हृदय में उनकी यथार्थ बात जानकर मुझे इशारे से समझा कर कह देना। यदि वे बालि के भेजे हुए हों तो मैं तुरन्त ही इस पर्वत को छोड़कर भाग जाउँगा।" पवनकुमार वानरवीर हनुमान ने यह सोचकर कि मेरे इस कपिरूप पर किसी का विश्वास नहीं जम सकता, अपने उस रूप का परित्याग करके भिक्षु का रूप धारण कर लिया। तदनन्तर हनुमान ने विनीत भाव से उन दोनों रघुवंशी वीरों के पास जाकर उन्हें प्रणाम करके मन को अत्यंत प्रिय लगने वाली मधुर वाणी में उनके साथ वार्तालाप आरंभ किया।

वानर–शिरोमणि हनुमान ने पहले तो उन दोनों वीरों की यथोचित प्रशंसा की। फिर विधिवत् उनका पूजन (आदर) करके स्वच्छन्द रूप से मधुर वाणी में कहा– "वीरों! आप दोनों सत्यपराक्रमी, राजर्षियों और देवताओं के समान प्रभावशाली, तपस्वी तथा कठोर व्रत का पालन करने वाले जान पड़ते हैं। आप दोनों इस वन्य प्रदेश में किसलिये आये हैं ? यहाँ सुग्रीव नामक एक श्रेष्ठ वानर रहते हैं जो बड़े धर्मात्मा और वीर हैं। उनके भाई बालि ने उन्हें घर से निकाल दिया है इसलिये वे अत्यन्त दुखी होकर सारे जगत् में मारे–मारे फिरते हैं। धर्मात्मा सुग्रीव आप दोनों से मित्रता करना चाहते हैं। मुझे आप लोग उन्हीं का मन्त्री समझो। मैं वायुदेवता का वानरजातीय पुत्र हूँ। इस समय सुग्रीव का प्रिय करने के लिये भिक्षु के रूप में अपने को छिपाकर मैं ऋष्यमूक पर्वत से यहाँ पर आया हूँ।'' उन दोनों भाई श्रीराम और लक्ष्मण से ऐसा कहकर बातचीत करने में कुशल तथा बात का मर्म समझने में निपुण हनुमान चुप हो गये।

उनकी यह बात सुनकर श्रीरामचन्द्रजी का मुख प्रसन्नता से खिल उठा। वे अपने बगल में खड़े हुए छोटे भाई लक्ष्मण से इस प्रकार कहने लगे–

"सुमित्रानन्दन! ये महामनस्वी वानरराज सुग्रीव के सचिव हैं और उन्हीं के हित की इच्छा से यहाँ मेरे पास आये हैं। लक्ष्मण! जिसे ऋग्वेद की शिक्षा नहीं मिली, जिसने यजुर्वेद का अभ्यास नहीं किया तथा जो समावेद का विद्वान नहीं है, वह इस प्रकार सुन्दर भाषा में वार्तालाप नहीं कर सकता। निश्चय ही इन्होंने समूचे व्याकरण का कई बार स्वध्याय किया है, क्योंकि बहुत–सी बातें बोल जाने पर भी इनके मुँह से कोई अशुद्धि नहीं निकली। सम्भाषण के समय इनके मुख, नेत्र, ललाट, भौंह तथा अन्य सब अंगों से भी कोई दोष प्रकट हुआ हो, ऐसा ज्ञात नहीं हुआ। इन्होंने थोड़े में ही बड़ी स्पष्टता के साथ अपना अभिप्राय निवेदन किया है।"

श्री रामचंद्र जी के ऐसा कहने पर सुमित्रानन्दन लक्ष्मण कपिवर हनुमान से इस प्रकार बोले– "विद्वन! महामना सुग्रीव के गुण हमें ज्ञात हो चुके हैं। हम दोनों भाई वानरराज सुग्रीव की ही खोज में यहाँ आये हैं। साधुशिरोमणि हनुमान्‌जी! आप सुग्रीव के कथनानुसार यहाँ आकर जो मैत्री की बात चला रहे हैं वह हमें स्वीकार है।'' लक्ष्मण के

यह स्वीकृति सूचक निपुणतायुक्त वचन सुनकर पवनकुमार कपिवर हनुमान बड़े प्रसन्न हुए। इस प्रकार हनुमान जी का सम्प्रेषण–कौशल वानरराज सुग्रीव की श्रीराम जी से मित्रता कराने में सहायक सिद्ध हुआ जिससे जानकीजी की खोज का मार्ग प्रशस्त हुआ। हनुमानजी ने दोनों ओर की सब कथा सुनाकर अग्नि को साक्षी देकर परस्पर दृढ़ करके प्रीति जोड़ दी–

तब हनुमंत उभय दिसि की सब कथा सुनाइ।
पावक साखी देइ करि जोरी प्रीति दृढ़ाइ।।
(श्री रा.च.म. 5/4)

जब सब वानर–भालू सीताजी की खोज में प्रस्थान के पूर्व प्रभु श्रीरामजी को प्रणाम करने गये तो श्रीरामजी को सबके पीछे पवनसुत हनुमानजी ने सिर नवाया। प्रभु तो अन्तर्यामी हैं, वे जानते हैं कि कार्य सम्पन्न करने में कौन सक्षम और निपुण है। उन्होंने श्रीहनुमान्जी को अपने पास बुलाया और–

परसा सीस सरोरुह पानी।
करमुद्रिका दीन्हि जन जानी।।
बहु प्रकार सीतहि समुझाएहु।
कहि बल बिरह बैंगि तुम्ह आयहु।।
(श्री रा.च.म. 5/23)

गीतावली में वर्णन है कि प्रभु श्रीराम जी ने श्रीहनुमानजी से तीन कार्य करने का कहा–

''दई हौं संकेत कहि कुसलात सियहि सुनाउ।
देखि दुर्ग, बिसेषि जानकि, जानि रिपु–गति आउ।।''
(गीतावली सुन्दरकाण्ड पद क्र4)

इस प्रकार आठों सिद्धियों (अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्रकाम्य, ईशित्व, वाशीत्व) के स्वामी, विद्यावान गुणी, अतिचातुर, रामकाज (राष्ट्रकाज) करने में आतुर, बल व बुद्धि की खान, ज्ञनियों में अग्रण्य तथा श्रीरामजी के परम प्रियभक्त श्रीहनुमान्जी सारी बाधाओं सात्विक बाधा (सुरसा) राजसी बाधा (सिंहिका) एवं तामसी बाधा (लंकिनी) और सारी कठिन परीक्षाओं पर विजय प्राप्त कर लंका में प्रवेश करने में सफल हो गये जो कि असंभव–सा था। मैनाक पर्वत को समुद्र ने श्रीहनुमान जी की थकावट दूर करने को कहा। श्रीहनुमान्जी ने उसे हाथ से छूकर प्रणाम करके बोला कि, श्रीरामजी का काम किये बिना मुझे विश्राम कहाँ ?

श्रीहनुमान्जी ने लंका नगरी का चप्पा–चप्पा छान डाला, रावण के सब अय्याशी के ठिकाने, सैन्य ठिकाने, दुर्गम स्थल, लंका प्रवेश में बाधक तंत्र, गोपनीय स्थल आदि देख लिये। रावण के महल तथा राक्षसों के घरों को देख लिया। परंतु कहीं भी जनक किशोरी सीता को नहीं देखा। फिर, एक सुन्दर महल दिखाई दिया जिसमें भगवान का एक अलग मन्दिर बना हुआ था। वह महल श्रीरामजी के आयुध (धनुष–बाण) के चिह्नों से अंकित था। वहाँ तुलसी के वृक्ष–समूहों को देखकर कपिराज हनुमानजी हर्षित हुए। लंका तो राक्षसों के समूह का निवास स्थान है। यहाँ सज्जन का निवास कहाँ ? हनुमान्जी मन–ही–मन इस प्रकार तर्क करने लगे। उसी समय विभीषणजी जागे। उन्होंने राम–नाम का स्मरण किया हनुमान्जी ने उन्हें सज्जन जाना तथा ह्रदय में हर्षित होकर विचार किया कि, इनसे अपनी ओर से ही परिचय करूँगा, क्योंकि साधु से कार्य की हानि नहीं होती प्रत्युत लाभ ही होता है। ब्राह्मण का रूप धारण कर हनुमान्जी ने उन्हें पुकारा। विभीषणजी सुनते ही उठकर वहाँ आए। प्रणाम करके कुशल पूछी और कहा कि हे ब्राह्मण देव! आपकी कथा समझाकर कहिये। क्या आप हरिभक्त हैं ? क्योंकि आपको देखकर मेरे ह्रदय में अत्यंत प्रेम उमड़ रहा है। क्या आप दीनों पर प्रेम करने वाले स्वयं श्रीरामजी ही हैं

जो घर बैठे दर्शन देकर कृतार्थ करने आये हैं ?विभीषण जी के पूछने पर हनुमान जी ने श्रीरामचन्द्र जी की सारी कथा कहकर अपना नाम बताया। सुनते ही दोनों के शरीर पुलकित हो गये और श्रीरामजी के गुण समूहों का स्मरण करके दोनों प्रेम और आनन्द में मग्न हो गये।

राक्षसराज रावण के भ्राता विभीषण से मिलना हनुमान्जी की राजनीति, कूटनीति तथा दौत्य–कौशल का द्योतक है क्योंकि विभीषण लंका के सारे सैन्य ठिकानों, दुर्गम स्थलों तथा राक्षसराज रावण की कूटनीति आदि से भली–भांति परिचित थे।

अब श्रीहनुमान्जी और विभीषणजी में परस्पर, चर्चा होने लगी। विभीषण बोले– हे पवनपुत्र! मेरी रहनी सुनो। मैं यहाँ वैसे ही रहता हूँ, जैसे दाँतों के बीच में बेचारी जीभ। हे तात्! मुझे अनाथ जानकर श्रीरामचन्द्रजी क्या कभी मुझ पर कृपा करेंगे ? मेरा तामसी (राक्षस) शरीर होने से साधन तो कुछ बनता नहीं और न मन में श्रीरामचन्द्रजी के चरणकमलों में प्रेम ही है। जब श्री रघुवीर ने कृपा की है, तभी तो आपने मुझे अपनी ओर से दर्शन दिए हैं। हनुमान्जी बोले– हे विभीषणजी! सुनिये, प्रभु की यही रीति है कि वे सेवक पर सदा ही प्रेम किया करते हैं।

भगवान के गुणों का स्मरण करके हनुमान्जी के दोनों नेत्रों में जलभर आया। इसी चर्चा के दौरान फिर विभीषण ने जानकीजी जिस प्रकार लंका में रहती थीं, वह सब कथा कही। तब हनुमान्जी ने कहा– हे भाई! सुनो, मैं माता को देखना चाहता हूँ। विभीषण जी ने सब युक्तियाँ कह सुनायीं। तब हनुमान्जी विदा लेकर चले।

सीताजी को देखकर हनुमान्जी ने उन्हें मन में ही प्रणाम किया। उनका शरीर दुबला हो गया है। सिर पर जटाओं की एक वेणी है। ह्रदय में रघुनाथ जी के गुण–समूहों का स्मरण करती रहती है। श्रीजानकीजी नेत्रों को अपने चरणों में लगाए हुए हैं– नीचे की ओर देख रही हैं और मन श्रीरामजी के चरणकमलों में लीन है। जानकीजी को दुःखी देखकर हनुमानजी बहुत ही दुःखी हुए।

उसी समय बहुत–सी स्त्रियों (अपनी रानियों) को साथ लिये सजधज कर रावण वहाँ आया। उस दुष्ट ने सीताजी को बहुत प्रकार से समझाया। वह बोला– हे सुमुखि! हे सयानी! सुनो, मंदोदरी आदि सब नारियों को मैं तुम्हारी दासी बना दूँगा, यह मेरा प्रण है। तुम एक बार मेरी ओर देखो तो सही। अपने परम स्नेही कोसलाधीश श्रीरामचन्द्र जी का स्मरण करके जानकीजी तिनके की आड़ में (परदा) करके कहने लगी– हे दशमुख! सुन, जुगनू के प्रकाश से कभी कमलिनी खिल सकती है ? रे दुष्ट! तुझे श्री रघुवीर के बाण की खबर नहीं है। रे पापी! तू मुझे सूने में हर लाया है। रे अधम! निर्लज्ज! तुझे लज्जा नहीं आती ?

रावण तलवार निकाल कर बड़े गुस्से में आकर बोला– सीता! तूने मेरा अपमान किया है। मैं तेरा सिर इस कठोर कृपाण से काट डालूँगा। जल्दी मेरी बात मान ले। हे सुमुखि! नहीं तो जीवन से हाथ धोना पड़ेगा।

सीताजी ने कहा– हे दशग्रीव! प्रभु की भुजा जो श्यामकमल की माला के समान सुन्दर और हाथी की सूँड के समान पुष्ट एवं विशाल है, या तो वह भुजा ही मेरे कण्ठ में पड़ेगी या तेरी भयानक तलवार। रे शठ! सुन, यही मेरा सच्चा प्रण है। ये वचन सुनकर रावण सीताजी को मारने दौड़ा। तब मन्दोदरी ने नीति कहकर उसे समझाया। इसके बाद रावण ने सब राक्षसियों को बुलाकर कहा कि जाकर सीता को बहुत प्रकार से भय दिखलाओ। यदि महीने भर में यह कहा न माने तो मैं इसे तलवार निकालकर मार डालूँगा। ऐसा कहकर रावण घर चला गया। यहाँ राक्षसियों के समूह बहुत से बुरे रूप धरकर सीताजी को भय दिखलाने लगे।

एक राक्षसी त्रिजटा नाम की थी जिसकी श्रीरामजी के चरणों में प्रीति थी और जो विवेकपूर्ण थी। उसने सबों को बुलाकर अपना स्वप्न सुनाया। स्वप्न में त्रिजटा ने देखा कि एक वानर ने लंका जला डाली। राक्षसों की सारी सेना मार डाली गई। रावण नंगा है और गधे पर सवार है। उसके सिर मुड़े हुए हैं। बीसों भुजाएँ कटी हुई हैं। वह यमपुरी की दिशा में जा रहा है और मानो लंका विभीषण ने पाई है। नगर में श्रीरामचन्द्रजी की दुहाई फिर गयी। तब प्रभु ने सीताजी को बुला भेजा। मैं निश्चय के साथ कहती हूँ कि, यह स्वप्न चार (कुछ ही) दिनों के बाद सत्य होकर रहेगा। उसके वचन सुनकर वे सब राक्षसियाँ डर गईं और जानकीजी के चरणों पर गिर पड़ीं।

विरह व्यथित श्रीसीताजी को तो यह डर था कि राक्षसराज रावण एक महीना बीत जाने पर मार डालेगा, अतः वह हाथ जोड़कर त्रिजटा से बोली– हे माता! तू मेरी विपत्ति की संगिनी है। जल्दी कोई ऐसा उपाय कर जिससे मैं शरीर छोड़ सकूँ। विरह असह्य हो चला है, अब यह सहा नहीं जाता। काठ लाकर चिता बनाकर सजा दे। हे माता! फिर उसे आग लगा दे। हे सयानी! तू मेरी प्रीति को सत्य कर दे। रावण की शूल समान दुख देने वाली वाणी कानों से कौन सुने ?

सीताजी के वचन सुनकर त्रिजटा ने चरण पकड़कर उन्हें समझाया और प्रभु का प्रताप, बल और सुयश सुनाया। उसने कहा– हे सुकुमारी! रात्रि के समय आग नहीं मिलेगी। ऐसा कह कर वह अपने घर चली गई। उस अशोक वृक्ष पर छिपे बैठे हनुमान्जी यह सब सुन रहे थे। सीताजी को विरह से परम व्याकुल देखकर वह क्षण हनुमान्जी को कल्प के समान बीता। तब हनुमान्जी ने ह्वदय में विचार कर सीताजी के सामने अँगूठी डाल दी। सीताजी ने हर्षित होकर उठाकर उसे हाथ में ले लिया तब उन्होंने राम–नाम में अंकित अत्यन्त सुन्दर एवं मनोहर अँगूठी देखी। सीताजी आश्चर्यचकित होकर देख रही हैं। यह तो पहचानी हुई है। कभी हर्ष होता है कि श्रीरामचन्द्रजी ने भेज दी हमारे पास, कभी विषाद होता है कि उनके हाथ से किसी निशाचर ने प्राप्त कर ली, ह्वदय में बड़ी व्याकुलता है। फिर सोचती हैं कि श्रीरामचन्द्रजी तो अजेय हैं उनको कोई जीत नहीं सकता और माया से ऐसी अंगूठी बन नहीं सकती, नकली नहीं है। इस प्रकार सीताजी अपने मन में नाना विचार कर रही हैं। इसी समय हनुमान्जी मधुर वचन बोले! वे श्रीरामचन्द्रजी का गुण वर्णन करने लगे। सुनते ही सीताजी का दुख भाग गया कि यहाँ कोई श्रीरामचन्द्रजी के गुण का वर्णन करने वाला है। सुनकर वे बोलीं कि जिन्होंने यह बड़ी सुन्दर और कानों के लिये अमृत समान कथा सुनायी है, वे प्रकट क्यों नहीं होते हैं ? तब हनुमान्जी निकट आ गये और उन्होंने पहला सम्बोधन किया माता जानकी! तुम मेरी माँ हो और जानकी, मैं तुम्हारे पिता को भी जानता हूँ। मैं श्रीरामचन्द्रजी का दूत हूँ। करुणानिधान की सत्य सौगन्ध है। "करुणानिधान" श्रीरामचन्द्रजी का विशेष संकेत है। हनुमान्जी बोले– माता! मैं लेकर आया हूँ यह मुद्रिका, प्रभु श्रीरामचन्द्रजी ने यह तुम्हारे लिये दी है, सहिदानी (निशानी या पहिचान) के रूप में, जिससे तुम हमको ठीक–ठीक पहचान सको। सीताजी ने पूछा– नर और वानर संग कहो कैसे हुआ ?तब हनुमान्जी ने सुग्रीव से मित्रता सहित सारी कथा कही। हनुमान्जी के प्रेमयुक्त वचन सुनकर सीताजी के मन में विश्वास उत्पन्न हो गया। उन्होंने कहा हे हनुमान्! मैं तो विरह के समुद्र में डूब रही थी लेकिन तुम मेरे लिये जलयान

(जहाज) के समान आ गये–

बूडत बिरह जलधि हनुमाना।
भयहु तात मो कहुँ जलजाना।

(श्री रा.च.मा. 5/14)

सीताजी बोली– मैं बलिहारी जाती हूँ हे तात! अब छोटे भाई लक्ष्मणजी सहित सुखधाम प्रभु का कुशल–मंगल कहो। श्री रघुनाथजी तो कोमल हृदय और कृपालु हैं। फिर हे हनमान! उन्होंने किस कारण यह निष्ठुरता धारण कर ली है ? वे श्रीरघुनाथजी क्या कभी मेरी याद करते हैं ? हे तात! क्या कभी उनके कोमल अंगों को देखकर मेरे नेत्र शीतल होंगे ?सीताजी को विरह से परम व्याकुल देखकर हनुमानजी कोमल और विनीत भाव से बोले– "हे माता! सुन्दर कृपा के परम प्रभु भाई लक्ष्मणजी सहित (शरीर से) कुशल हैं, परंतु आपके दुःख से दुःखी हैं। हे माता मन छोटा करके दुःख न कीजिए। श्रीरामचन्द्रजी के हृदय में आप से दूना प्रेम है। हे माता! धीरज धरकर श्रीरघुनाथजी का संदेश सुनिये। श्रीरामचन्द्रजी ने कहा हे– "हे सीते! तुम्हारे वियोग में मेरे लिये सभी पदार्थ प्रतिकूल हो गये हैं।"

श्रीरामचन्द्रजी का संदेश सुनते ही जानकी प्रेम में मग्न हो गईं। उन्हें शरीर की सुध न रही। तब हनुमान्जी ने कहा हे माता! हृदय में धैर्य धारण करो, श्रीरामचन्द्रजी का स्मरण करो। राक्षसों के समूह पतंगों के समान हैं तथा श्रीरघुनाथजी के बाण अग्नि के समान हैं। यह सुनकर सीताजी ने कहा हे पुत्र! सब वानर तुम्हारे ही समान (नन्हें–नन्हें से) होंगे, राक्षस तो बड़े बलवान् योद्धा हैं अतः मेरे हृदय में बड़ा भारी संदेह होता है कि तुम जैसे वानर राक्षसों को कैसे जीतेंगे ?यह सुनकर हनुमान्जी ने अपना शरीर प्रकट किया। सोने के पर्वत (सुमेरु) के आकार का अत्यंत विशाल शरीर था। तब उसे देखकर सीता जी को विश्वाास हुआ। हनुमान्जी ने फिर छोटा रूप धारण कर लिया। वे बोले– हे माता! सुनो, वानरों में बहुत बल–बुद्धि नहीं होती। परंतु प्रभु के प्रताप से बहुत छोटा सर्प भी गरुड़ को खा सकता है। भक्ति, प्रताप, तेज और बल से सनी हुई हनुमान्जी की वाणी सुनकर सीताजी के मन में संतोष हुआ उन्होंने आशीर्वाद दिया– हे तात्! तुम बल और शील के निधान होओ, तुम अजर अमर और गुणों के खजाने होओ। श्रीरघुनाथ जी तुम पर बहुत कृपा करें।

Jkh gu|eku th }kjk viu nkf;Ro dk foLrkj djuk

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण में उल्लेख है कि सेवक उत्तम, मध्यम और अधम तीन कोटि के होते हैं। उत्तम सेवक वह होता है जो स्वामी के द्वारा किसी दुष्कर कार्य में नियुक्त होने पर उसे पूरा करके तद्नुरूप दूसरे कार्य को भी (यदि वह मुख्य कार्य का विरोधी न हो) सम्पन्न करता है। श्री हनुमान्जी उत्तम सेवक तो हैं ही, साथ ही उनकी यह अद्भुत विशेषता है कि वे परिस्थितियों के परिवर्तन के अनुसार अपने दायित्व का परिवर्तन, परिमार्जन एवं विस्तार करते हैं। प्रस्थान करते समय खोजी दल का दायित्व बहुत सीमित था। अर्थात् सीताजी को खोजना और इसका समाचार श्रीरामजी को देना। सीताजी को खोज लेने के बाद ही हनुमान्जी का कार्य पूर्ण हो गया था। आदेश का पालन हो गया था। सीताजी अशोकवाटिका में हैं और प्राणोत्सर्ग करने की तैयारी कर रही हैं, क्या इतना ही श्रीरामजी को बताना उचित और प्रशंसनीय होगा ?यदि सीताजी इसी बीच प्राणोत्सर्ग कर देतीं तो सम्पूर्ण खोज व्यर्थ हो जाती। हनुमान्जी तत्काल अपने दायित्व का विस्तार करते हैं। सीताजी को प्राणोत्सर्ग करने से रोकना होगा तथा उनमें आत्मविश्वास पैदा करना होगा कि धैर्यपूर्वक श्रीरामजी के आने और बंधन

मुक्ति की प्रतीक्षा करें।

हनुमान्‌जी ने सीताजी से कहा– हे माता! सुनो, सुन्दर फल वाले वृक्षों को देखकर, मुझे भूख लग आयी है। सीताजी ने कहा बेटा! सुनो, बड़े भारी योद्धा राक्षस इस वन की रखवाली करते हैं। हनुमान्‌जी ने कहा, मुझे उनका डर बिल्कुल नहीं है। आप प्रसन्न होकर आज्ञा दें। सीताजी ने कहा हे तात्, श्रीरघुनाथजी के चरणों को हृदय में धारण करके मीठे फल खाओ। वे सीताजी को सिर नवाकर चले और बाग में घुस गये। फल खाये और वृक्षों को तोड़ने लगे। वहाँ बहुत से योद्धा रखवाले थे। उनमें से कुछ को मार डाला और कुछ ने जाकर रावण से पुकार की और कहा– हे नाथ! एक बड़ा भारी बन्दर आया है। उसने अशोक वाटिका उजाड़ डाली, फल खाये, वृक्ष उखाड़ डाले और रखवालों को मसल–मसल कर जमीन पर डाल दिया। सुनकर रावण ने बहुत से योद्धा भेजे। श्री हनुमान्‌जी सर्वप्रथम चैत्यप्रासाद (राक्षसों के कुल देवता का स्थान) को नष्ट करने गये। वहाँ चारों ओर से राक्षसों ने उन्हें घेर लिया था। वे हनुमान्‌जी पर आक्रमण करने लगे। हनुमान्‌जी ने कुपित हो बड़ा भयंकर रूप धारण किया। उस प्रासाद से एक सुवर्ण भूषित खंभे को बड़े वेग से उखाड़ लिया जिसमें सौ धारें थीं। उस खंभे को हनुमान्‌जी ने घुमाना आरंभ किया। घुमाने पर उससे आग प्रकट हो गई जिससे वह प्रासाद जलने लगा। हनुमान्‌जी ने सैकड़ों राक्षसों को उस खंभे से ही मार डाला। राक्षसराज रावण की आज्ञा पाकर प्रहस्त के बलवान पुत्र जम्बुमाली को भेजा गया। हनुमान्‌जी ने महाबली जम्बुमाली और उसके किंकरों को भी मार डाला। फिर रावण की आज्ञा पाकर मन्त्री के सात बेटे बहुत बड़ी सेना के साथ आये। हनुमान्‌जी ने मन्त्री के सारे पुत्रों तथा सेना का संहार कर दिया। रावण ने महान् बली अपने पाँच सेनापतियों–विरूपाक्ष, यूपाक्ष, दुर्धर, प्रघस और भास्कर्ण को हनुमान्‌जी को पकड़ने के लिये बड़ी सेना के साथ भेजा। सेना सहित उन पाँचों और सेनापतियों को रणभूमि में हनुमान्‌जी ने मौत के घाट उतार दिया। तत्पश्चात् रावण ने अपने पुत्र अक्षय कुमार को बड़ी भारी सेना के साथ वाटिका के द्वार पर भेजा जहाँ हनुमान्‌जी खड़े थे। हनुमान्‌जी ने अक्षय कुमार को पृथ्वी पर पटककर उसका काम तमाम कर दिया और फिर वाटिका के द्वार पर खड़े हो गये। अपने पुत्र का वध सुनकर रावण क्रोधित हो उठा। उसने अपने ज्येष्ठ पुत्र बलवान् मेघनाद को भेजा और कहा कि मारना नहीं वानर को बाँध लाना। हनुमानजी तथा मेघनाद का भयंकर युद्ध हुआ। हनुमान्‌जी ने बड़ा वृक्ष उखाड़कर मेघनाद का रथ तोड़कर नीचे पटक दिया। उसके बड़े–बड़े योद्धाओं को मसल डाला तथा मार डाला। मेघनाद को हनुमान्‌जी ने एक घूँसा मारा और वृक्ष पर चढ़ गये। मेघनाद को क्षण भर के लिये मूर्च्छा आ गयी। फिर उठकर बहुत माया रची किन्तु हनुमानजी उससे जीते नहीं जाते। अन्त में उसने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। हनुमान्‌जी ने मन में विचार किया कि यदि ब्रह्मास्त्र को नहीं मानता हूँ तो उसकी महिमा मिट जाएगी। ब्रह्मबाण लगने से हनुमान्‌जी वृक्ष के नीचे गिर पड़े परन्तु गिरते समय भी उन्होंने बहुत सी सेना मार डाली। जब मेघनाद ने देखा कि हनमान्‌जी मूर्छित हो गये हैं तब वह उनको नाग–पाश में बाँधकर ले गया।

jko.k&guqeku laokn

बंदर का बाँधा जाना सुनकर राक्षस दौड़े आये और तमाशा देखने के लिये सब सभा में आये। हनुमान्‌जी ने भी रावण की सभा देखी जो अत्यन्त ऐश्वर्य वाली थी। देवता और दिकपाल हाथ जोड़े बड़ी नम्रता के साथ भयभीत हुए सब रावण की भौं ताक रहे हैं। उसका ऐसा प्रताप देखकर भी

हनुमान्जी के मन में जरा भी डर नहीं हुआ। वे ऐसे निःशंक खड़े रहे जैसे सर्पों के समूह में गरुड़ निर्भय रहता है। हनुमान्जी को देखकर रावण दुर्वचन कहता हुआ खूब हँसा। फिर पुत्र–वध का स्मरण किया तो उसके हृदय में विषाद उत्पन्न हो गया। रावण ने प्रश्नों की झड़ी लगा दी–

1. रे वानर! तू कौन है ?
2. किसके बल पर तूने वन को उखाड़ डाला ?
3. क्या तूने कभी मेरा नाम और यश कानों में नहीं सुना ?
4. रे शठ! मैं तुझे अत्यन्त निःशंक देख रहा हूँ ।
5. तूने किस अपराध से राक्षसों को मारा ?
6. रे मूर्ख! बता, क्या तू प्राण जाने का भय नहीं है?

सर्वप्रथम श्रीहनुमान्जी ने इस प्रश्न का उत्तर दिया कि वे कौन हैं ? "ज्ञानिनामग्रगण्यम्" होने के नाते उन्होंने अपने स्वामी श्रीरामजी का विस्तृत परिचय देकर कहा कि–

"हे दशशीश! जिनके बल से ब्रह्मा, विष्णु, महेश क्रमशः सृष्टि का सृजन, पालन और संहार करते हैं, जिनके बल से सहस्रमुख वाले शेषजी पर्वत और वन सहित समस्त ब्रह्माण्ड को सिर पर धारण करते हैं, जो देवताओं की रक्षा के लिये नाना प्रकार की देह धारण करते हैं और जो तुम्हारे जैसे मूर्खों को शिक्षा देने वाले हैं, जिन्होंने शिवजी के कठोर धनुष को तोड़ डाला और उसी के साथ राजाओं के समूह का गर्व चूर्ण कर दिया, जिन्होंने खर–दूषण, त्रिशिरा और बालि को मार डाला, जिनके लेशमात्र बल से तुमने समस्त चराचर जगत को जीत लिया और जिनकी प्रिय पत्नी को तुम चोरी से हर लाये हो, मैं उन्हीं का दूत हूँ।"

इसके बाद दूसरे सारे प्रश्नों का सटीक उत्तर व्यंग्यात्मक रूप में दिया। वे कहने लगे कि हे रावण! तुम्हारी प्रभुता को खूब जानता हूँ। सहस्रबाहु से तुम्हारी लड़ाई हुई थी और बालि से युद्ध करके तुमने यश प्राप्त किया। फिर हनुमान्जी बोले– हे राक्षसों के स्वामी! मुझे भूख लगी थी इसलिये मैंने फल खाये और वानर स्वभाव के कारण वृक्ष तोड़े। कुमार्ग पर चलने वाले दुष्ट राक्षस जब मुझे मारने लगे, तब जिन्होंने मुझे मारा, उनको मैंने भी मारा। उस पर तुम्हारे पुत्र ने मुझको बाँध लिया। किन्तु मुझे अपने बाँधे जाने की कुछ भी लज्जा नहीं है। मैं तो अपने प्रभु का (अपने राष्ट्र का) कार्य किया चाहता हूँ। श्रीहनुमान्जी राक्षसराज रावण को शिक्षा देते हुए बोले– हे रावण! मैं हाथ जोड़कर तुमसे विनती करता हूँ, तुम अभिमान छोड़कर मेरी सीख सुनो। तुम अपने पवित्र कुल का विचार करके देखो और भ्रम को छोड़कर भक्त भयहारी भगवान को भजो। जो देवता, राक्षस और समस्त चराचर को खा जाता है, वह काल भी जिनके डर से अत्यंत डरता है, उनसे कदापि बैर न करो और मेरे कहने से जानकीजी को दे दो। हे रावण! सुनो, मैं प्रतिज्ञा करके कहता हूँ कि राम विमुख की रक्षा करने वाला कोई भी नहीं है। हजारों शंकर, विष्णु और ब्रह्मा भी श्रीरामजी के साथ द्रोह करने वाले तुमको नहीं बचा सकते। यद्यपि हनुमान्जी ने भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और नीति से सनी हुई बहुत सी हित की वाणी कही तो भी वह महान् अभिमानी रावण हँसकर व्यंग्य से बोला कि हमें यह बन्दर बड़ा ज्ञानी गुरु मिला। रे दुष्ट! तेरी मृत्यु निकट आ गई। अधम! मुझे शिक्षा देने चला है। हनुमान्जी ने कहा– इससे उल्टा ही होगा अर्थात् मृत्यु तेरी निकट आई है, मेरी नहीं। हनुमानजी की बात सुनकर रावण बहुत कुपित हो गया और बोला– "अरे! इस मुर्ख का प्राण शीघ्र ही क्यों नहीं हर लेते!" सुनते ही राक्षस उन्हें मारने दौड़े। उसी समय मन्त्रियों के साथ विभीषणजी वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने सिर झुकाकर और बहुत विनय करके रावण से कहा कि दूत को मारना नहीं

चाहिये, यह नीति के विरुद्ध है। हे गोसाई! कोई दूसरा दण्ड दिया जाये। सबने कहा– भाई! यह सलाह उत्तम है। यह सुनते ही रावण हँसकर बोला– अच्छा तो बन्दर को अंग–भंग करके भेज दिया जाये। मैं सबको समझाकर कहता हूँ कि बन्दर की ममता पूँछ पर होती है। अतः तेल में कपड़ा डुबोकर उसे इसकी पूँछ में बाँधकर फिर आग लगा दो। रावण के वचन सुनकर मूर्ख राक्षस पूँछ में आग लगाने की तैयारी करने लगे। पूँछ के लपेटने में इतना कपड़ा और घी–तेल लगा कि नगर में कपड़ा, घी और तेल नहीं रह गया। हनुमान्जी ने ऐसा खेल किया कि पूँछ लम्बी हो गई। नगरवासी लोग तमाशा देखने आये। वे हनुमान्जी को पैर से ठोकर मारते हैं और उनकी बहुत हँसी करते हैं। ढोल बजाते हैं सब लोग तालियाँ पीटते हैं। हनुमान्जी को नगर में फिराकर फिर पूँछ में आग लगा दी। अग्नि को जलते हुए देखकर हनुमान्जी तुरंत छोटे रूप में हो गये। बंधन से निकलकर वे सोने की अटारियों पर जा चढ़े। उनको देखकर राक्षसों की स्त्रियाँ भयभीत हो गईं। हनुमान्जी अट्टहास करके गर्जे और बढ़कर आकाश से जा लगे। यहाँ हनुमान्जी की ईशित्व सिद्धि प्रकट हो गई। उस समय महातेजस्वी कपिश्रेष्ठ हनुमान्जी ने केवल विभीषण का घर छोड़कर अन्य सब घरों में पहुंचकर आग लगा दी। सारी लंका के लोग त्राहि–त्राहि करने लगे और भयभीत हो गये। तब रावण ने क्रोधित होकर प्रलयकाल के मेघों को बुलाया और वे रावण की आज्ञा से सब अपना दल बटोर आये। उनसे रावण ने कहा– "अरे मेघों! जलती हुई लंकापुरी को शीघ्र बुझाओ और बन्दर को बहाकर गंभीर जल में डुबोकर मार डालो।" तब मेघ बार–बार गरज–गरज कर मूसलाधार पानी बरसाने लगे। किन्तु जल से अग्नि और भी प्रज्जवलित हो गयी और चपलतापूर्वक चौगुनी बढ़ गई। तुलसीदासजी कहते हैं– तब सब मेघ घबराकर मुँह मोड़कर भागे।

lhrkth ls pMkef.k ikIr dj guqeku th dk ykSV vkuk& लंकादहन के बाद पूँछ बुझाकर, थकावट दूर करके और फिर छोटा–सा रूप धारण कर हनुमान्जी श्रीजानकीजी के सामने हाथ जोड़कर जा खड़े हुए। हनुमान्जी ने कहा– हे माता! मुझे कोई चिह्न (पहचान) दीजिए, जैसे श्रीरघुनाथ जी ने मुझे दिया था। तब सीताजी ने चूड़ामणि उतार कर दी। हनुमान्जी ने उसको हर्षपूर्वक ले लिया। जानकीजी ने उनसे कहा– "हे तात्! मेरा प्रणाम निवेदन करना और इस प्रकार कहना कि प्रभु! यद्यपि आप सब प्रकार से पूर्णकाम हैं तथापि दुःखियों पर दया करना आपका विरुद है। अतः उस विरुद को याद कर, हे नाथ! मेरे भारी संकट को दूर कीजिए। यदि महीनेभर में नाथ न आये तो फिर मुझे जीती न पायेंगे।"

हनुमान्जी ने जानकीजी को समझाकर बहुत प्रकार से धीरज दिया और उनके चरणकमलों में सिर नवाकर श्रीरामजी के पास गमन किया।

श्रीहनुमान्जी के लौटते ही, श्रीजाम्बवान जी ने श्रीहनुमानजी द्वारा किये गये कार्य का वर्णन प्रभु श्रीरामजी के सामने किया। श्रीरघुनाथजी ने हर्षित होकर हनुमान्जी को फिर ह्रदय से लगा लिया।

9 आजाद, नगर, उज्जैन

ys[k

lUnjdk.M dk lkUn;Z

Mk- jekukFk f=ikBh

सुन्दरकाण्ड के नायक हनुमान् हैं। गोस्वामीजी ने मंगलाचरण में बताया है कि वे अतुलित बलधाम हैं, साथ ही वे श्रेष्ठ ज्ञानी भी हैं। वे राम के परम भक्त हैं। उनके व्यक्तित्व में शक्ति, बुद्धि और भक्ति का संगम है। उनके सामने एक ही लक्ष्य था– रामकाज, अर्थात् सीता की खोज। इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए उनके मार्ग में जो भी बाधाएँ आयीं उनका निवारण उन्होंने साम–दाम–दण्ड–भेद की नीति से किया। सबसे पहली बाधा मैनाक पर्वत द्वारा प्रस्तुत की गयी। उसने समुद्र के भीतर से उठकर उन्हें विश्राम देना चाहा। हनुमान ने अपने इस शुभचिन्तक का निरादर नहीं किया। केवल उसका स्पर्श कर आगे बढ़ गये। सर्पों की माता सुरसा ने उनके बल–बुद्धि की परीक्षा करने के लिए उन्हें रोका। हनुमान ने शक्ति का प्रदर्शन किया और युक्ति निकालकर उसे भी संतुष्ट कर दिया। छायाग्राहिणी राक्षसी ने उन्हें खाना चाहा। लंका की रक्षिणी लंकिनी ने भी उन्हें मारना चाहा। उन्होंने दोनों को दण्डित किया। वे विशाल लंकापुरी की विशाल अट्टालिकाओं के मध्य सीता को खोज नहीं पा रहे थे, तभी उन्हें एक ऐसा भवन दिखाई पड़ा जो तुलसी के बिरवे और रामायुध के अंकन से शोभित था। उसके गृहस्वामी विभीषण से भेंटकर राम की अलौकिक शक्ति का परिचय देकर उसे अपने पक्ष में लाने का सफल प्रयास किया। जिसका लाभ उन्हें आगे चलकर मिला। रावण से सन्तप्त सीता को बलशाली रूप दिखाकर आश्वस्त किया। रावण से टक्कर लेने के लिए उसकी प्रिय वाटिका को उजाड़ा और रक्षकों तथा रावण–पुत्र अक्षय का वध किया। मेघनाद द्वारा प्रक्षिप्त ब्रह्मास्त्र का अनादर न करते बँधना स्वीकार किया। राजसभा के मध्य उन्होंने रावण को फटकार लगायी। उसके द्वारा लगवायी गयी पूँछ की आग से उन्होंने दम्भी रावण की लंका जला डाली। हनुमान के उपकार से कृतज्ञ राम ने जब बार–बार उनकी प्रशंसा की तो उन्होंने अहंकार रहित होकर कहा, यह सब तो आपके प्रताप और अनुग्रह के कारण हुआ। उन्होंने कोई व्यक्तिगत लाभ न माँगकर केवल निर्भर भक्ति माँगी।

इस काण्ड में राम के सम्पूर्ण व्यक्तित्व की झलक भी मिल जाएगी। "वाल्मीकि रामायण" के महामानव राम को अध्यात्म रामायण में ब्रह्म मानकर रामकथा को आध्यात्मिक रंग देकर प्रस्तुत किया गया था। तुलसी ने महामानव राम और ब्रह्म राम के मध्य समन्वय स्थापित किया। उनके राम सहृदय ब्रह्म हैं। "अध्यात्म–रामायण" के राम विष्णु के अवतार हैं। "मानस" के राम ब्रह्मा, विष्णु और शिव तीनों देवताओं से ऊपर हैं– (दोहा सं.21)।

पृथ्वी, ब्राह्मण, धेनु और देवताओं (अर्थात् समस्त जनता, कृषक जन, बुद्धिजीवी वर्ग और श्रद्धेय व्यक्तियों) की रक्षा के लिए अवतार ग्रहण करते हैं (दोहा सं. 39)। वे ऐसे शील–सम्पन्न हैं कि किसी का दिल नहीं दुखाते। विभीषण राम की शरण में आया तो सुग्रीव ने उसकी मंशा पर संदेह प्रकट किया। उन्होंने कहा, सखा, तुमने नीति की बात कही है किन्तु शरण में आये व्यक्ति को भय–मुक्त करना मेरा प्रण है–

सखा नीति तुम्ह नीकि बिचारी।
मम पन सरनागत भयहारी।

दोहा 43–4

उन्होंने विभीषण का राजतिलक कर दिया। जो सम्पत्ति शिव ने रावण के दस सिर चढ़ाने से प्रसन्न होकर दी उसे राम ने बहुत ही सकुचाते हुए विभीषण को ऐसे दिया मानो कुछ दिया ही न हो–

जो संपति सिव रावनहि दीन्हि दिएँ दस माथ।
सोइ संपदा विभीषनहिं सकुचि दीन्हि रघुनाथ।।

–दोहा 42 ख,

राम को वही व्यक्ति पसंद है, जो स्वच्छ मन वाला हो और जिसमें कपट–छल छिद्र न हों–

निर्मल मन जन सो मोहिं पावा।
मोहि कपट छल छिद्र न भावा।।

(दो. 44–3)

हिन्दी भाषी जनता को गहराई से प्रभावित करने वाले तो तुलसी के मर्यादावादी, भक्त वत्सल और सुशील राम ही हैं।

पूरे मानस की दर्जनों अर्धालियाँ सूक्तियाँ बन गयी हैं। सुख–दुख के क्षणों में जिनका प्रयोग अनायास ही हो जाता है। इस काण्ड में भी ऐसी सूक्तियाँ हैं। जैसे कि "*भय बिनु होइ न प्रीति।*" "*दुष्ट संग जनि देइ विधाता।*" इस काण्ड में दो ऐसी अर्धालियाँ भी हैं जिनके पक्ष–विपक्ष में सही तर्क नहीं दिये जाते...। "*ढोल गंवार सूद्र पसु नारी*"। "*बसन हीन नहिं सोहं सुरारी। सब भूषन भूषित बरनारी।*" इस विषय पर चर्चा यहां प्रसंगानुकूल नहीं है।

भक्ति, शौर्य और काव्य–सौन्दर्य से भरपूर इस काण्ड में राम–सीता की विरह पीड़ा और परस्पर लगाव, पराक्रमी लक्ष्मण की नीति, मन्दोदरी की चिंता आदि का भी चित्रण है। सभी दृष्टियों से काण्ड अनूठा बन पड़ा है।

26, वैशाली पीतमपुरा, दिल्ली 110034 फोन 011–27311225

ys[k

nf[k i je fojgkdy lhrk

Mk- i e- Hkkjrh

सुन्दरकांड के विषय में कहा गया है–

सुन्दरे सुन्दरो रामो, सुन्दरे सुन्दरी कथा।
सुन्दरे सुन्दरी सीता, सुन्दरे किं न सुन्दरम्।।

अर्थात् इसमें राम सुन्दर हैं, कथा सुन्दर है सीता सुन्दर हैं और ऐसी कोई बात नहीं है जो सुन्दर नहीं हो किन्तु जब मैं सुन्दरकांड के दोहा क्रमांक–13 की एक अर्द्धाली को पढ़ता हूँ– ***"देखि परम विरहाकुल सीता"*** तो इस कथन पर सहसा विश्वास नहीं होता कि विरह की परम् अवस्था सुन्दर कैसे हो सकती है ?यही बात मैंने रामचरित मानस के अद्येताओं से पूछी, तो वे सहसा मौन हो जाते हैं। इतना ही नहीं, बात यहीं समाप्त हो जाती तो भी ठीक किन्तु तुलसी ने सुंदरकांड के दोहा क्रमांक– 14 के अंतर्गत एक चौपाई में पुनः इस अर्द्धाली को दोहराया, तो ऐसा क्यों? तो वे आश्चर्य से कहते हैं हमें पता नहीं कि यह अर्द्धाली दो बार आई है। हम तो सुंदर कांड का नित्य पाठ करते हैं किन्तु हमारा ध्यान इस ओर गया ही नहीं।

मैंने फिर कहा– सम्पूर्ण रामचरित मानस में ऐसे कितने स्थल है, जहाँ तुलसी ने चौपाइयों को यथावत् रख दिया है। ऐसा उन्होंने क्यों किया ? वे तो परम विद्वान तथा भाषाविद् थे, फिर उन्हें यह पुनरुक्ति दोष क्यों हुआ ? एक सज्जन मेरी परीक्षा लेने के लिए उन स्थलों का प्रमाण माँगने लगे। मैंने उन चौपाइयों का उल्लेख करते हुए कहा–

1- igyh pkSikbZ

सिर धरि आयसु करिअ तुम्हारा। परम धरमु यह नाथ हमारा।।

(बालकांड 76–2)

यही चौपाई अयोध्या कांड के दोहा क्रमांक 212–3 में भी यथावत आई है। पहला प्रसंग भगवान राम द्वारा शिवजी का पार्वती से विवाह करने के संबंध में है। तब शिवजी उनके प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए इन पंक्तियों को प्रस्ताव की स्वीकारोक्ति में कहते हैं। दूसरा प्रसंग अयोध्या कांड का है जब भरत भारद्वाज जी के स्वागत को स्वीकार करते हुए इन पंक्तियों को कहते हैं। दोनों प्रसंगों में यह पंक्ति यथावत दोहराई गई है।

2- nwljh pkSikbZ

ते पितु मातु कहहु सखि कैसे।

जिन्ह पठ्ये बन बालक ऐसे।।
(अयोध्याकांड 88–2)

पहला प्रसंग राम, लक्ष्मण और सीता को तापस वेष में देखकर गाँव के स्त्री–पुरूषों द्वारा कही गई है। दूसरा प्रसंग तापस मिलन के बाद पुनः गाँव की स्त्रियां कहती हैं। दोनों समय के कथनों में तुलसी ने एक शब्द भी नहीं बदला है। अयोध्या कांड में ही यह पंक्ति दोहा क्रमांक 110–7 में देखी जा सकती है।

3. तीसरी चौपाई–

अयोध्याकांड में जब भगवान राम वन की ओर आगे बढ़ते हैं तब आई

उभय बीच सिय सोहई कैसी।
ब्रह्म जीव बिच माया जैसी।।
(दोहा क्रमांकः 122–2)

यही चौपाई अरण्यकांड में जब श्रीराम अत्रि के आश्रम से थोड़ा आगे चलते हैं, तब दोहराई गई है–

उभय बीच श्री सोहई कैसी।
ब्रह्म जीव बिच माया जैसी।।
(दोहा क्रमांक–6 ख–3)

परंतु यहाँ दोनों प्रसंगों में एक शब्द बदला गया है। पहले प्रसंग में सीता के लिए सिय शब्द आया है। दूसरे प्रसंग में श्री शब्द सीता शब्द के स्थान पर आया है।

इस प्रकार मानस में इन तीन चौपाइयों की पुनरुक्ति हुई है। किन्तु इसे पुनरुक्ति दोष कहा जाए, यह मैं नहीं मानता। अवश्य ही विद्वानों को इस पर चिन्तन करना चाहिए। भाषाविदों के लिए यह शोध का विषय भी हो सकता है। किन्तु हमें तो अपने मूल विषय पर चर्चा करना ही उचित होगा। हाँ! इतना अवश्य है कि ऐसे उदाहरणों की ओर रामचरित मानस का पाठ करते समय हमारा ध्यान अवश्य जाना चाहिए।

वह सज्जन पुनः बोले– "पाठ तो हम श्रद्धा से करते हैं किन्तु ऐसे प्रसंगों पर विचार करके हम बुद्धि को तर्कजाल में उलझाना नहीं चाहते। ''पाठकों का इस संबंध में क्या सोच है मैं नहीं जानता। हाँ! इतना अवश्य जानता हूँ कि गोस्वामी जी अपनी बात को बिना किसी लाग–लपेट के ज्यों की त्यों लिखने में चतुर हैं। वे अपनी कलम को तर्क के आधार पर नहीं चलाते हैं, भावना की स्याही में डुबोकर चलाते हैं किन्तु आज के प्रवचनकार या टीकाकार मानस पर बोलते अथवा लिखते समय विषय को रोचक बनाने के लिए तार्किक व्याख्या करने में नहीं चूकते हैं। प्रत्येक वक्ता अपने–अपने विचार से किसी चौपाई अथवा प्रसंग को स्वमति के अनुसार रखता है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि गोस्वामी जी भक्त थे। उन्होंने भक्ति रस में डूबकर मानस की रचना की है। इस प्रसंग को भी हम इसी आधार पर समझने का प्रयास करें तो उचित होगा।

विभीषण की मंत्रणा को स्वीकार करके हनुमान जी अशोक वाटिका पहुँचते है। वहाँ पहुँचकर सीता को मन ही मन प्रणाम करते हैं और रात्रि बीतने की प्रतीक्षा करते हैं। वे बैठे–बैठे ही देखते हैं कि– *"कृस तनु सीस जटा एक बेनी। जपति हृदयँ रघुपति गुन श्रेनी।"* अर्थात् सीता जी का शरीर दुर्बल हो गया है, सिर पर जटाओं की एक वेणी (लट) है और राम–नाम का स्मरण (जप) कर रही हैं। यह देखकर वे परम दुखी हुए।

हनुमान जी प्रथम बार अशोक वाटिका में जब सीता जी को इस प्रकार से देखते हैं तो तुलसी कहते हैं–

निज पद नयन दिएँ मन, राम पद कमल लीन।
परम दुखी भा पवन सुत, देखि जानकी दीन।।
(सुंदरकांड दोहा क्रमांक 8)

उक्त दोहे में, 'निज पद नयन दिएँ मन, राम पद कमल लीन' का अर्थ है– सीता जी अपने नेत्रों को अपने चरणों में लगाए हुए रामचरणों में लीन हैं।यह कैसे संभव है ? यहां राम के चरणों को कमल से उपमा दी गई है। ये मानस रहस्य पृ. संख्या 372–375 तक (गीता प्रेस गोरखपुर) में इस संबंध

में कहा गया है कि

"जेहि बिधि कपट कुरंग संग, धाइ चले श्रीराम।"
सो छवि सीता राखि उर, रटति रहति हरि नाम।।

(अरण्यकांड दोहा क्रमांक 129 (ख)

अर्थात् लंका में रहकर सीता राम के उन चरणों कमलों का ध्यान करती रहीं, जो उन्होंने माया–मृग मारीच को मारते समय उनके पद–तलवों में देखा था। उन तलवों के धूल में अंकित निशान में 24 चिह्न थे। ये चिह्न राम के दाहिने तलवे में थे। वही चिह्न सीता के बाएँ तलवे में थे। हनुमान जी ने इसी बात को महत्व देते हुए "राम के चरण–चिह्नों" के महत्व को समझा और विचार किया कि राम के चरण कमलों के स्मरण से तो बड़े से बड़ा काम पूरा हो जाता है, फिर सीता को यह लाभ का अवसर श्रीराम ने क्यों नहीं दिया।

संतों ने बताया है कि– अपने पद चिह्नों को देखकर राम के पद–चिह्नों का स्मरण कायिक भक्ति है। मन राम के चरणों में लीन है, यह मानस–भक्ति है। सीता इस प्रकार तन–मन से राम की भक्ति में लीन थीं फिर भी उन्हें देखकर पवन–तनय हनुमान परम दुखी क्यों हुए ? क्या थी सीता की दीन अवस्था ? जिसे हनुमान जी ने देखा। इसका उत्तर श्रीराम के शब्दों में ही निहित है–

वचन कायँ मन मम गति जाही।
सपनेहुँ बूझिअ बिपति कि ताही।।

(सुंदरकांड–दोहा क्रमांक 31–2)

अर्थात् सीता पर तो कभी विपत्ति आ ही नहीं सकती। अर्थात् हनुमान तुमने जो इस "दीन" अवस्था में सीता को देखा है वह मेरी नर लीला है।

अशोक वाटिका में इस दीन अवस्था को हनुमान वृक्ष के पत्तों में छिपकर देख रहे थे और सोच रहे थे कि– इनका दुख कैसे दूर करूँ ? तभी बहुत सी स्त्रियों को साथ लिए सजधज कर रावण वहाँ आया और साम, दाम, भय, भेद दिखाकर सीता को धमकी देने लगा– "सीता तैं मम कृत अपमाना। कटिहउँ तन सिर कठिन कृपाना" सीता तुमने मेरी बात को न मानकर मेरा अपमान किया है। एक माह का समय मैं तुम्हें और देता हूँ। इस प्रकार कटु वचन बोलकर उसने पुनः आने को कहा। इस घटना से सीता जी इतनी निराश हुईं कि आत्मघात करने की सोचने लगीं।

वे सोचने लगीं– लगता है विधाता (भाग्य) ही मेरे प्रतिकूल हो गया है। यही कारण है कि वे आकाश में अंगारे देखती हैं। पृथ्वी पर भी ऐसा कोई तारा नहीं जो अग्नि उपलब्ध करा सके। ऐसा अनुभव करती हैं। चंद्रमा भी उन्हें अग्निमय दिखाई देता है किन्तु वह भी अग्नि नहीं दे रहा है। तब वे अशोक वृक्ष से उनका शोक हर कर अपना अशोक नाम सार्थक कहने का अनुरोध करती है। इस आत्मघाती स्थिति को देखकर तुलसी हनुमान जी के मनस्थिति का वर्णन करते हुए कहते हैं–

देखि परम बिरहाकुल सीता।
सो छन कपिहि कलप सम बीता।।

यहाँ एक प्रश्न सहज ही उठता है कि रावण द्वारा सीता जी को डराते समय हनुमान जी द्रष्टा बनकर सबकुछ देखते क्यों रहे ?वे प्रत्यक्ष उनकी सहायता क्यों नहीं कर पाए ? इस प्रकार के और भी प्रश्न इस प्रसंग में पाठकों द्वारा उठाए जा सकते हैं किन्तु तुलसी ने उस "क्षण" मात्र की घटना को कलप (कल्प) के समान बताकर काल की सत्ता को प्रमुख कारण यहाँ बताया है। "कल्प" समय का विराट रूप है। आगे होने वाली घटनाओं को ध्यान में रखकर यहाँ हनुमान विवश होकर यह सब देखने को बाध्य थे।

कालांतर में हनुमान जी तब सीता के सामने राम के द्वारा दी गई मुद्रिका को डाल देते हैं। सीता उस मुद्रिका को देखकर अनेक प्रकार की शंकाएं करने लगती हैं। उनकी स्थिति हर्ष और विषादमय हो जाती है। हृदय से आकुल होकर वे विचार करने लगती हैं–

जीति को सकइ अजय रघुराई।
माया तैं अस रची न जाई।।

सीता के इस संशय को दूर करने के लिए तब हनुमान मधुर वाणी में राम का गुणगान करते हुए सीता के आग्रह पर उनके पास आए और अपने को राम का दूत बताकर कहने लगे–हे माता! यह मुद्रिका मैं ही लाया हूँ। श्रीराम ने पहचान के लिए यह मुझे दी है। मुद्रिका को देखकर सीता को लगा मानों राम ही स्वयं उनसे मिलने आए हैं और वे आतुरता से हनुमान से पूछती हैं क्या श्रीराम मेरी याद करते हैं। सीता को आगे की स्थिति का वर्णन करते हुए तुलसी लिखते हैं–

बचन न आव नयन भरे बारी।
अहह नाथ हैं निपट बिसारी।।
देखि परम विरहाकुल सीता।
बोला कपि मृदु बचन बिनीता।।

इस प्रकार *"देखि परम विरहाकुल सीता"* अर्द्धाली दो बार आई है किंतु एक ही अर्द्धाली को दो बार तुलसी ने क्यों लिखा यह कहना कठिन है। प्रथम अर्द्धाली पर वे मौन रहे किंतु इस दूसरी अर्द्धाली के बाद वे बोले–

रघुपति कर संदेश अब सुनु जननी धर धीर।
अस कहि कपि गदगद भयउ, भरे विलोचन नीर।।

आगे की पंक्ति में यह संदेश था– "श्रीराम आएंगे।"

"कछुक दिवस जननी धरु धीरा।
कपिन्ह सहित अइहहिं रघुवीरा।।"

राम का यह संदेश सुनकर सीता का हृदय प्रकाश से आलोकित हो गया। वे हनुमान को आशीर्वाद देते हुए बोलीं–

अजर अमर गुन निधि सुत होहू।
करहुँ बहुत रघुनायक छोहू।।

प्रभु कृपा करें– यह आशीर्वाद पाकर हनुमान ने सीता के चरणों में सिर नवाया।

सुंदरकांड की सुन्दरता इसी प्रसंग को लेकर है। हनुमान और सीता का यह संवाद विस्तार से पाठक स्वयं पढ़ें तो, वे अनुभव करेंगे कि जो रामकथा अयोध्याकांड, अरण्य कांड और किष्किंधा कांड में दुःखान्त की ओर अग्रसर हो रही है, उसने सुन्दरकांड में मोड़ ले लिया है। अब कथा सुखान्त की ओर बढ़ रही है। श्रीराम की विजय की भूमिका का यह संकेत सुंदरकांड में ही मिलता है क्योंकि इस कांड में हनुमान जी ने रामदूत की वह भूमिका निभाई जो राम को अपेक्षित थी। साथ ही, उन्होंने लंका में उन सभी स्थानों को देखा जहां शस्त्र–भण्डार था, जहां रथ तथा पुष्पक विमान था। सैन्य शक्ति का अनुमान भी उन्होंने वहां लगाया और लंका–दहन करते समय रावण का शस्त्रागार नष्ट कर दिया जिससे सैनिकों का मनोबल टूट गया। रावण की हार का यह प्रथम अवसर था।

आज भी राम मंदिर के साथ हनुमान मंदिर भारत के हर ग्राम नगर में देखने को मिलते हैं, जो इस बात की पुष्टि करते हैं कि हमें ऐसा ईश्वर चाहिए, जो हमारे कष्टों का निवारण करे। श्रीराम और हनुमान के रूप में तुलसी ने उस ईश्वर के मानवीय रूप से हमें परिचित कराया है। नर–लीला के रूप में उनके सुख–दुख से परिचित कराया है। यदि वे मनुष्य होकर प्रकट न होते और केवल सृष्टि निर्माता के रूप में जाने जाते, तो हम उस ईश्वर को नहीं जान पाते जो मानव में ईश्वरत्व की प्रतिष्ठा करता है। सुंदरकांड का यही लक्ष्य है। इस परम सौंदर्य को देखने की शक्ति और दुःखों को झेलने की हिम्मत देता है।

ys[k

v'kkd ou e fojfg.kh lhrk vkj jke HkDr gueku

lukru dekj okt i;h^lukru*

श्री सीता श्री राम की शक्ति हैं। भार्या हैं। श्री राम उनके वियोग में अत्यंत व्यथित हैं। राक्षस राज रावण द्वारा श्री सीता का हरण किया जा चुका है।

श्री राम के मित्र सुग्रीव द्वारा श्री सीता के अन्वेषण हेतु सभी दिशाओं में अपनी वानरों की सेना भेजी गई है। एक दल को दक्षिण दिशा की ओर जाने का आदेश है। जिसमें अंगद, जामवन्त, नल, नील और हनुमान हैं।

इस दल के सभी वानर श्री राम को प्रणाम कर चल पड़ते हैं। सबसे बाद में श्री हनुमान जी प्रणाम करते हैं। श्री हनुमान पर श्री राम का विशेष अनुग्रह है। वे उन्हें अपने पास बुलाते हैं उनके सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद देते हैं एवं सीता जी की पहिचान के लिये अपनी अँगूठी देते हैं। श्री हनुमान अपने जन्म को धन्य मानते हैं। कृपानिधान श्री राम को हृदय में धारण कर सबके साथ चल पड़ते हैं।

अब यह दल समुद्र के तट पर खड़ा है। सबके मन में असमंजस है कि सौ योजन के समुद्र का लंघन कैसे किया जाये?

तभी जामवन्त जी श्री हनुमान को उनके बल का स्मरण दिलाते हुये कहते हैं कि–

पवन तनय बल पवन समाना। का चुप साधि रहेउ बलवाना।।
कवन सो काज कठिन जग माहीं। जो नहिं होइ तात तुम्ह पाहीं।।
राम काज लगि तब अवतारा। सुनतहिं भयहु पर्वताकारा।।

श्री हनुमान जी श्री राम से भावित होकर उनके अमोघबाण की तरह तुरन्त आकाश मार्ग से चलकर समुद्र को पार कर गये। मार्ग में मैनाक, सुरसा, सिहनी एवं लंकिनी जैसी अनेक बाधायें आईं। अपने बल, बुद्धि, विवेक और शौर्य से उन्होंने सब पर विजय प्राप्त कर ली। अब लंका में विभीषण के सामने हैं। विभीषण राम का परम भक्त होते हुए भी मोह के जाल में फँसा हुआ है। श्री हनुमान जी ने विभीषण को श्री राम की पूरी कथा सुनाई। अपना उदाहरण देकर उनकी कृपालुता की चर्चा की। उन्हें श्री राम की शरण में जाने की प्रेरणा दी। हनुमान जी ने विभीषण से कहा कि मैं माँ सीता की खोज में यहाँ आया हूँ और उनके दर्शन करना चाहता हूँ –

तब हनुमान कहा सुनु भ्राता। देखन चहहुँ जानकी माता।

विभीषण ने जानकारी दी कि श्री सीता जी अशोक वन में हैं। वहाँ जाने की सारी

जानकारी एवं रास्ते का पता बताया–

जुगुति विभीषण सकल सुनाई।
चलेउ पवन सुत बिदा कराई।

अब हनुमान जी अशोक वाटिका में हैं। सीता जी शोक में निमग्न एक अशोक के पेड़ के नीचे बैठी हैं। हनुमान जी ने उन्हें देखकर मन ही मन प्रणाम किया।

देखि मनहिं मन कीन्ह प्रणामा।
बैठे बीत जाहि निशि जामा।।

सीता जी अत्यन्त दुखी हैं। शोक में निमग्न हैं। इसी प्रकार बैठे–बैठे रात्रि के चारों प्रहर बीत जाते हैं। आँखों में नींद ही नहीं है। उनका शरीर अत्यन्त कृश है। सिर पर जटाओं की एक वेणी बन गई है। हृदय में श्री राम के गुण समूहों का जाप चल रहा है। नेत्र स्वयं के चरणों में टिके हैं। श्री राम के चरण कमलों में मन ध्यानस्थ है।

कृश तन सीस जटा एक बेनी।
जपत सदा रघुपति गुण सेनी।
निज पद नयन दिये मन,
राम कमल पद लीन।
परम दुखी भा पवन सुत,
देखि जानकी दीन।।

ऐसा कहा जाता है कि श्री राम के दाहिने पैर और श्री जानकी जी की बायें पैर के चरण चिह्नों में एक समानता थी। अतः इस रूप में श्री जानकी जी श्री राम जी के चरण कमल के दर्शन करती हुई ध्यानस्थ थीं।

सीता जी की ऐसी कारुणिक दशा को देखकर हनुमान जी अत्यंत करुणा से भर जाते हैं।

श्री हनुमान जी अत्यंत शौर्यशाली, बल, बुद्धि एवं विवेक के निधान हैं। दुखी अथवा निराश होना उनके स्वभाव में नहीं है। किन्तु पूरी रामचरित मानस में सुन्दरकांड का अशोक वन का यही एक अत्यन्त मार्मिक प्रसंग है, जहाँ हनुमान जी का मन दुख में डूब जाता है। वे श्री राम जी की आज्ञा के बन्धन में हैं। अन्यथा माँ सीता को इस दयनीय अवस्था से तत्क्षण मुक्त कराकर प्रभु राम के सन्निकट ले जाते।

निरुपाय हो वे एक अशोक वृक्ष की सघन ओट में छिपकर बैठ जाते हैं।

इसी बीच रावण अनेक सुन्दर स्त्रियों सहित अत्यन्त सजधज कर वहाँ उपस्थित होता है। वह श्री सीता के ध्यान को भंग करते हुए उनसे कहता है कि हे सीते! मेरे साथ मंदोदरी सहित जितनी भी स्त्रियाँ है मैं इन सबको तुम्हारी सेविका बना दूँगा। तुम एक बार मेरी ओर प्रेम से देखो और मेरे अनुकूल हो जाओ–

कह रावण सुनु सुमुखि सयानी।
मंदोदरी आदि सब रानी।
तब अनुचरी करउँ पनु मोरा।
एक बार बिलोकु मम ओरा।

सीता जी रावण की बात सुनकर अत्यन्त दुखी हो जाती हैं। पर पुरुष से सीधे बात करना मर्यादा के विरुद्ध है अतः वे तिनके की ओट करके रावण से कहती हैं कि हे दुष्ट रावण। मैं आर्य राम की भार्या हूँ। उन्हीं को पाकर प्रसन्न हो सकती हूँ। तुम सोचो तो सही। कमलिनी क्या कभी जुगनू के प्रकाश में खिल सकती है ? उसका व्रत तो सूर्य के प्रकाश में ही खिलने का है। श्री राम रघुकुल वंश के सूर्य हैं। उनके समक्ष तुम मात्र एक जुगनू की तरह हो।

श्री सीता की ऐसी निर्भीक वाणी सुनकर रावण अत्यन्त क्रोध में भरकर कृपाण से उन्हें मारने के लिये दौड़ता है–

आपुहिं सुनि खद्योग सम,
रामहिं भानु समान।
परुष वचन सुनि काढ़ि असि
बोला अति खिसिआन।
सीताकृत तें मम अपमाना।

कटिहउँ तब सिर कठिन कृपाना।।
नाहिं त सपदि मानि मम बानी।
सुमुखि होत न त जीवन हानी।।

रावण द्वारा कही गई इन घृणित बातों को सुनकर श्री सीता जी ने कहा कि रावण, तुम अत्यन्त अधम और निर्लज्ज हो। तुम्हें इस तरह की बातें करने में तनिक भी शर्म नहीं आती। मैं आर्य नारी हूँ। परम पिता परमेश्वर की शक्ति हूँ। वे नीले कमल के समान साँवले और सुन्दर हैं। उनकी भुजायें हाथी की सूँड के समान लम्बी और अत्यन्त परिपुष्ट हैं। मेरे गले में या तो वे भुजायें ही पड़ेंगी या फिर तेरा यह चन्द्रहास। मेरी यही दृढ़ प्रतिज्ञा है।

सीता जी अत्यन्त व्याकुल होकर कहती हैं – हे चन्द्रहास! तेरी धार तो अत्यंत तीव्र, श्रेष्ठ और शीतल है। तू तत्क्षण मुझे इस महान दुख से मुक्त कर दे–

चन्द्रहास हर मम परितापं।
रघुपति विरह अनल संजातं।
सीतल निसित बहसि वर धारा।
कह सीता हरु मम दुख भारा।

श्री सीता की वाणी से यह सब बातें सुनकर रावण ने कहा कि–

मास दिवस में कहा न माना।
तौ मैं मारवि काढ़ि कृपाना।

रावण ने कहा कि यदि एक माह के भीतर मेरा कहना नहीं मानोगी तो मैं तलवार से तुम्हारी गर्दन काट दूँगा। जाते समय उसने राक्षसनियों से कहा कि सीता को हर प्रकार से खूब कष्ट पहुँचाओ–

भवन गयउ दसकंधर, इहाँ पिसाचिनि वृन्द।
सीतहिं त्रास देखावहिं, धरहिं रूप बहु मंद।।

रावण अपने भवन चला गया। राक्षसनियाँ सीता को तरह तरह से कष्ट पहुँचा रही हैं। उन राक्षसनियों में त्रिजटा नाम की एक राक्षसी थी। श्री राम के चरणों में उसका अत्यन्त प्रेम था। वह अत्यन्त विवेकशीला थी। उसने सभी राक्षसनियों को समझाया। तुम लोग सीता जी को कष्ट मत पहुँचाओ। वे महान देवी हैं। इनकी हर प्रकार से सेवा करो–

त्रिजटा नाम राच्छसी एका।
राम चरन रति निपुन बिबेका।
सबन्हौ बोलि सुनाएसि सपना।
सीतहिं सेइ करहु हित अपना।।

इसके बाद त्रिजटा ने सभी को अपना सपना सुनाया–

सपने वानर लंका जारी।
जातुधान सेना सब मारी।
खर आरुढ़ नगन दससीसा।
मुंडित सिर खंडित भुज बीसा।
एहि बिधि सो दच्छिन दिसि जाई।
लंका मनहुँ विभीषण पाई।।
नगर फिरी रघुवीर दोहाई।
तब प्रभु सीता बोलि पठाई।।

त्रिजटा ने कहा– "मैं दृढ़तापूर्वक पुकार कर कहती हूँ। केवल चार दिनों के बाद ही यह सपना पूर्ण होने वाला है।"

त्रिजटा के सपने की बात सुनकर सभी राक्षसनियाँ सीता के चरण स्पर्श कर डरकर इधर उधर भाग गईं।

अब सीता जी अत्यन्त व्याकुल हैं। वे सोचती हैं कि यदि एक मास के भीतर प्रभु आकर मुझे मुक्ति नहीं दिलाते हैं तो रावण के द्वारा मेरा वध कर दिया जायेगा। श्री सीता जी ने हाथ जोड़कर त्रिजटा से प्रार्थना करते हुए कहा– हे माता तुम मेरी इस महान विपत्ति में सहायक हो। अब मुझसे यह दुख सहन नहीं हो रहा है। तुम शीघ्र ही लकड़ियाँ एकत्र करके एक चिता बना दो। उसने आग लगा दो। जिससे मैं

अपने प्राणों का परित्याग कर दूँ। श्री सीता जी की बात सुनकर त्रिजटा ने उन्हें प्रभुश्री राम का प्रताप, बल एवं सुयस सुनाते हुये सान्त्वना दी और कहा, हे देवी इस रात्रि के समय अग्नि का मिलना संभव नहीं है। ऐसा कहकर वह अपने भवन को चली गई।

सीता जी अत्यन्त व्यथित हैं। वे आकाश को देखकर कहती हैं – आकाश में इतने तारे हैं। कोई भी टूटकर धरती पर मेरे पास नहीं आ रहा है। चन्द्रमा अग्नि से परिपूर्ण है। मुझे अभागिन जानकर वह भी अग्नि नहीं दे रहा है–

देखिअत प्रगट गगन अंगारा।
अवनि न आवत एकउ तारा।
पावक मय ससि स्त्रवत न आगी।
मानहुँ मोहिं जानि हत भागी।
सुनहिं बिनय मम बिटप असोका।
सत्यनाम करु हरु मम सोका।

अन्त में अशोक वृक्ष से विनय करती हैं कि हे अशोक वृक्ष तुम मुझे थोड़ी सी अग्नि देकर मेरी विपत्ति का हरण कर लो और अपने नाम को सार्थक करो क्योंकि तुम्हारा नाम अशोक है।

यह है श्री सीता की व्याकुलता का चरमोत्कर्ष। जब भक्त अत्यन्त व्याकुल होकर भगवान को सहायता के लिये पुकारता है। वे तो अत्यन्त करुणामय हैं। तत्क्षण दौड़ पड़ते हैं।

उस अशोक वृक्ष में ही तो परमात्मा राम के परम सेवक संकट मोचन हनुमान जी विराजमान थे। उन्होंने तुरन्त प्रभु राम की दी हुई अँगूठी नीचे गिरा दी। सीता जी ने उसे अंगार समझकर शीघ्र उठा लिया–

कपि करि हृदय बिचार, दीन्ह मुद्रिका डारि तब।
जनु अशोक अंगार दीन्ह, हरषि उठि कर गहेउ।।

श्री सीता जी ने देखा कि यह तो राम नाम से अंकित प्रभु की अँगूठी है। प्रभु अजेय हैं। माया से भी ऐसी अँगूठी बनाई नहीं जा सकती। सीता जी को इन विचारों में निमग्न देखकर श्री हनुमान जी अत्यन्त प्रिय वाणी में श्री राम के गुणों का गायन करने लगे। तब सीता जी ने कहा कि

श्रवणामृत जेहि कथा सुहाई।
कही सो प्रगट होति किन भाई।।
तब हनुमन्त निकट चलि गयऊ।
फिरि बैठी मन विस्मय भयउ।।

श्री हनुमान को देखकर सीता जी आश्चर्य में पड़ गई। श्री हनुमान जी ने कहा– हे माँ, मैं प्रभु राम का दूत हूँ। मेरा नाम हनुमान है। सीता जी को पूर्ण विश्वास हो गया कि वे प्रभु राम के दूत हैं। हनुमान जी ने कहा माँ, कुछ दिनों के बाद ही प्रभु राम वानरों की सेना लेकर आयेंगे। राक्षसों का वध करके आपको ले जायेंगे। यह सुनकर सीता जी को सन्देह हुआ। तब हनुमान जी ने उन्हें अपना भयंकर रूप दिखाया–

कनक भूधराकार सरीरा।
समर भयंकर अति बलवीरा।

अब सीता को पूर्ण विश्वास हो गया। सीता जी ने कहा मैं विरह के सागर में डूब रही थी। तुम मेरे लिये जलयान बन गये। अब प्रभु की कुशलता सुनाओ। श्री हनुमान जी ने कहा–

अनुज सहित प्रभु सकुशल हैं। सीता जी ने कहा कि हे तात, श्री राम का चित्त अत्यंत कोमल है उन्होंने यह निष्ठुरता क्यों धारण कर ली ?

कोमल चित कृपालु रघुराई।
कपि केहि हेतु धरी निठुराई।
सहज बानि सेवक सुखदायक।
कबहुँक सुरति करति रघुनायक।
वचन न आव नयन भरि बारी।
अहह नाथ हौं निपट बिसारी।

हनुमान जी ने कहा कि हे माता—

जो रघुवीर होत सुधि पाई।
करते नहिं विलम्ब रघुराई
अबहिं मातु मैं जाहुँ लेवाई।
प्रभु आयसु नहिं राम दोहाई।।
कछुक दिवस जननी धरि धीरा।
कपिन्ह सहित आहहिं रघुबीरा।।
निशिचर मारि तोहि लै जहहैं।
तिहुँ पुर नारदादि जस गइहैं
जनि जननी मानहु जिय ऊना।
तुम तें प्रेम राम कहँ दूना।
रघुपति कर संदेश अब सुनु जननी धरि धीर।
अस कहि कपि गद्‌गद भये, भरे विलोकन नीर।

श्री हनुमान जी श्री राम से पूरी तरह भावित हो गये। अब साक्षात श्री राम ही सीता से बात कर रहे हैं। हनुमान जी तो मात्र निमित्त हैं—

कहेउ राम वियोग तब सीता।
सो कहँ सकल भये विपरीता।।
जो हित रहे करत सोइ पीरा।
उरग स्वास सम त्रिविध समीरा।।
कुबलय विपिन कुंत बन सरिसा।
वारिद तपत तेल जनु वरिसा।।
नव तरु किसलय मनहुँ कृसानू।
काल निसा सम निसि ससि भानू।।
कहेहु ते कछु दुख घटि होई।
काहि कहौं यह जान न कोई।।
तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा।
जानत प्रिया एक मन मोरा।।

हे सीते। हमारे और तुम्हारे प्रेम के तत्व को केवल मेरा मन ही जानता है —

सो मन सदा रहत तोहि पाहीं।
जान प्रीति रसु एतनहिं माही।।

यह था प्रभु राम का संदेश। जिसे सुनकर सीता जी देह की सुधि भूल गई। इस प्रकार हनुमान जी ने सीता जी को सान्त्वना दी। उनसे अजर, अमर, गुणनिधि एवं प्रभु राम के अनुग्रह का वरदान प्राप्त किया। माँ सीता से आज्ञा लेकर वे अशोक वन के फल खाने लगे। रक्षकों को मार भगाया। वन को उजाड़ डाला। अक्षय कुमार को मार डाला। अन्त में मेघनाद द्वारा बाँधकर रावण के सामने लाये गये। रावण को हर प्रकार से धर्म का उपदेश दिया। अन्त में रावण द्वारा उनकी पूंछ में आग लगाने का आदेश दिया गया। आग लगते ही वे छोटे से बनकर बन्धन से मुक्त हो गये। फिर अत्यन्त विकराल रूप धारण कर सम्पूर्ण लंका में आग लगा दी। सर्वत्र हाहाकार मच गया। लंका दहन करने के उपरांत समुद्र में कूद गये। अपनी पूँछ की आग बुझाई। थकान दूर की और हाथ जोड़कर श्री सीता के सामने खड़े हो गये और कहा— माता मुझे कुछ सहदानी (पहिचान) एवं अब प्रभु के पास जाने की आज्ञा प्रदान कीजिये। श्री सीता जी ने अपनी चूड़ामणि उतारकर उन्हें दी। उसे लेकर वे प्रभु श्री राम की शरण में आ गये। उन्हें शीघ्र सीता जी को कष्ट से मुक्ति दिलाने का आग्रह किया। सीता जी की विपत्ति के सभी समाचार दिये। इस-प्रकार हनुमान जी ने लंका में प्रभु राम के शौर्य और महिमा की स्थापना की।

पुराना कछपुरा स्कूल गढ़ा, जबलपुर 482003 म.प्र. मो.— 9993566139

ys[k

lnjdk.M% de dk lkn;

Mk- vfuy dekj

रामकथा का भारतीय जनमानस में व्यापक प्रभाव है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का जितना अधिक प्रभाव भारतीय जनमानस में है, उतना किसी अन्य पात्र का नहीं। राम घर–परिवार, राज्य, समाज आदि के लिए एक आदर्श पुरुष हैं। वस्तुतः रामकथा भारतीय गृहस्थ जीवन के आदर्श के साथ–साथ सामाजिक आचार–व्यवहार का नीति–शास्त्र है। राम का व्यक्तित्व अनेक समाजों व उनकी संस्कृतियों को जोड़ने वाला है। राम की अयोध्या से लंका तक की यात्रा भव्य भारतीय संस्कृति को एकात्मकता प्रदान करने वाली है। इस दृष्टि से राम का व्यक्तित्व किसी धर्म विशेष की परिधि में कैद नहीं हो पाता। राम से जुड़कर व्यक्ति अपनी संकीर्णताओं को तोड़कर राष्ट्रीयता को मजबूत करता है, साथ ही जीवन जीने का सलीका सीखता है।

तुलसीकृत "रामचरितामनस" का रामकथा परम्परा में बड़ा ही महत्वपूर्ण स्थान है। "रामचरितमानस" के माध्यम से उन्होंने मानव समाज के घात–प्रतिघात के पहलुओं को छुआ और रामचरितमानस के पात्रों के आचार–व्यवहार के द्वारा समाज को एक आदर्श–व्यवस्था का स्वप्न प्रदान किया। भारतीय चिंतन–परम्परा में रामकथा धर्म और भक्ति केंद्रित होते हुए भी अपने आशयों में बहुआयामी है। यह भक्ति, धर्म और अध्यात्म के अतिरिक्त जीवन की तमाम महत्वपूर्ण सच्चाइयों को समझने और उनका सामना करने की समझ प्रदान करती है। तुलसीदास जी ने अपनी कृति रामचरितमानस को "नानापुराणनिगमागम सम्मत" कहा जरूर है, परंतु अपने युग–परिवेश की आवश्यकताओं के अनुरूप परम्परागत रामकथा में संस्कार–परिष्कार भी किया है। मानस के कथानायक श्रीराम का चरित भक्तों का रंजन करने के साथ–साथ मानव को जीवन जीने की कला भी सिखाता है। मानस के नायक की लीलाएँ जनमानस के लिए प्रेरणा स्रोत हैं। यही कारण है कि रामचरितमानस का प्रभाव क्षेत्र भारत ही नहीं बल्कि विश्वव्यापी है। तुलसीदास कवि से अधिक एक युगदृष्टा समाज चिंतक थे। वे कहते भी हैं कि "भनिति" अर्थात् कविता गंगा की तरह लोकोपकारक होनी चाहिए।

तुलसी ने अपनी कृति रामचरितमानस के द्वारा समाज को संस्कारित करने का

प्रयास किया। सम्पूर्ण रामकथा "परहित" के भाव से ओत–प्रोत है। इस दृष्टि से रामकथा में हनुमान का चरित्र बड़ा उल्लेखनीय है।

हनुमान जी ग्यारहवें रुद्रावतार थे। हनुमान जी का चरित्र बड़ा ही बलवान और सरल है। उनका जीवन चरित्र श्रीराम को समर्पित रहा है। उनके इसी जीवन और चरित्र के कारण भारतीय समाज एवं संस्कृति में उनका अनन्य स्थान है। या यह कहिए कि वे लोकदेवता हैं। हनुमान जी ने रामकथा में न केवल राम प्रिया सीता माता की खोज में मदद की अपितु राम–रावण संग्राम में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सम्पूर्ण रामकथा श्रीराम के गुणों और पुरुषार्थ को दर्शाती है परंतु रामकथा का सुंदरकांड अध्याय श्री हनुमान जी की भक्ति और विवेक को दर्शाता है।

श्री हनुमान जी युद्धवीर है– महावीर हैं।' हनुमान के चरित्र वर्णन के बिना रामकथा अधूरी ही है। "श्रीराम और हनुमान में भौतिक दृष्टि में देश, जाति तथा वर्गगत दूरियाँ विद्यमान थीं। वे प्रारंभ से ही श्रीरामचन्द्र के सहचर नहीं हैं। जनकनंदिनि सीता के अन्वेषण काल में विरह व्याकुल प्रभु श्रीराम से उनका प्रथम मिलन होता है। परंतु एक क्षण के मिलन में ही प्रभु उनसे इतने अपनत्व का अनुभव करने लगे कि ऐसा लगा ही नहीं कि वे प्रथम बार मिल रहे हैं। उस समय उनके मुख से एक वाक्य निकाला "ते मम प्रिय लछिमन ते दूना" और अंजनी नंदन ने अपनी सेवा के द्वारा इसकी सार्थकता सिद्ध कर दी।[1] रामकथा में हनुमान का प्रथमोल्लेख बालि और सुग्रीव के मतभेद एवं संघर्ष में बालि द्वारा निष्कासित सुग्रीव के मित्र, सहायक व सचिव के रूप में होता है। हनुमान ने महाबली बालि का साथ न देकर संत्रस्त सुग्रीव का साथ दिया। यह तथ्य महावीर हनुमान के चरित्र की उज्जवलता, लोकोपकारकता और दृढ़ता को दर्शाता है।

रामचरितमानस के सात कांडों में से सुंदरकांड में रामभक्त हनुमान के बल और धैर्य सहित कार्यों का सुंदर वर्णन किया गया है। सुंदरकांड में हनुमान का सीता की खोज के निमित्त लंका प्रस्थान, लंका में सीता जी का पता लगाना, लंका दहन के बाद पुनः श्रीराम के पास लौटना और राम का सेना सहित लंका की ओर प्रस्थान तक का कथानक है।

सुंदरकांड के कथ्य या घटनाक्रम के प्रारंभ में तुलसी जी ने मंगलाचरण के रूप में भगवान राम की स्तुति की है और "भक्ति" की याचना की है। इसके बाद हनुमान जी का लंका के लिए प्रस्थान, सुरसा से भेंट, लंकिनी पर मुष्टिका प्रहार, हनुमान से विभीषण की भेंट, अशोक वाटिका में सीता के दर्शन, सीता–त्रिजटा संवाद, हनुमान सीता संवाद, लंका दहन, हनुमान का चूड़ामणि के साथ लौटना, राम–हनुमान संवाद, राम का सेना सहित समुद्र तट पर आगमन, मंदोदरी–रावण संवाद, विभीषण का रावण द्वारा अपमान, विभीषण का रावण को छोड़कर राम की शरण में आना, रावण दूत शुक का प्रसंग, शुक का लक्षमण के पत्र को लेकर रावण के पास पहुँचना, समुद्र पर राम का क्रोध आदि और अंत में श्री राम के गुणगान के महात्म्य के विषय में वर्णन किया गया है। इस सोपान की रचना में गोस्वामी जी ने 60 दोहों तक रामकथा का विस्तार किया है। प्रथम 30 दोहों तक शिवरूप हनुमान जी का चरित्र तथा 31 से 60 तक रामचरित यानी भगवान विष्णु के चरित्र का वर्णन किया है।

तुलसीदास ने रामचरितमानस में हनुमान जी के चरित्र को बहुत अधिक महत्वपूर्ण रूप में दर्शाया है। उन्होंने कहा है कि रामजी के भक्त श्री हनुमान जी को रामजी से भी अधिक समझना चाहिए। हनुमान जी के उपकारों का बोझ इतना बढ़ गया था कि श्रीरामजी अपने को उनका ऋणी समझने लगे थे और हनुमानजी को अपना ऋणदाता बता दिया

था। तुलसी के राम तो यहाँ तक कहते हैं कि वो यह ऋण कभी चुका ही नहीं सकते हैं–

"तुलसी रामहु तें अधिक, राम भगत जियँ जान।
रिनिया राजा राम भे, धनिक भए हनुमान।।2"

ऐसे ही सुंदरकांड में श्रीराम कहते हैं कि –हे हनुमान! सुनो, तुम्हारे समान मेरा उपकारी देवता, मनुष्य अथवा मुनि आदि कोई भी शरीरधारी नहीं है। हे पुत्र! सुनो मैं तुझसे उऋण नहीं हो सकता–

"सुनु कपि तोहि समान उपकारी,
नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी।
प्रति उपकार करौं का तोरा।
सनमुख होइ न सकत मन मोरा।।
सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं।
देखेऊँ करि बिचार मन माँही।3"

इसके प्रत्युत्तर में हनुमान जी बड़ी ही सुंदर बात कहते हैं–

"सो सब तव प्रताप रघुराई
नाथ न कछु मोरि प्रभुताई।।4"

इस प्रकार राम के सेवकों में हनुमान जी का नाम सर्वोच्च है। हनुमान जी श्रीराम के प्रिय एवं अन्तरंग सेवक हैं। प्रभु राम को अपने सेवक का पालन–पोषण करना ही पड़ता है। सेवक धर्म सर्वाधिक कठिन होता है। स्वामी का सुख ही सेवक का प्रमुख धर्म है। तुलसीदास जी सेवक धर्म को सबसे कठिन बताते हैं "सब तें सेवक धरमु कठोरा"5 क्योंकि सेवक अपने सभी सुखों को छोड़ अपने स्वामी की सेवा करता है। हनुमानजी ने सेवा में अपने जीवन की बात तो दूर मान–अपमान का भी ध्यान नहीं रखा है। अशोक वाटिका ध्वस्त करने पर मेघनाद ने उन पर ब्रह्मास्त्र चलाया था। ब्रह्मा जी का मान रखने के निमित्त उन्होंने अपने को बंधा दिया। उनका एक ही उद्देश्य तो था, प्रभु का संदेश रावण को समझाना। सीता जी को लौटा दे उसी में उसका कल्याण है। हनुमान जी को तो राम का दास होने का बड़ा अभिमान था। वे तो एक ही बात ध्यान में रखते थे– "मैं सेवक हूँ और प्रभु राम मेरे स्वामी हैं।"

कर्मपूर्ण भक्ति यानी कर्म को अपने आराध्य की सेवा में लगाना भी भक्ति का ही एक रूप है। "मंगल भुवन अमंगलहारी" यानी सुख कर्त्ता–दुखहर्ता हनुमान जी का सम्पूर्ण जीवन निःस्वार्थ दास्य भक्ति, आत्म समर्पण का श्रेष्ठतम उदाहरण है। उनका जीवन श्रीराम की भक्ति और सतत् सेवा का ही प्रमाण है। उन्होंने राम की भक्ति के साथ–साथ राम के "काज" को भी समान महत्व दिया। इस बात को यदि इस प्रकार कहें कि उन्होंने रामभक्ति से भी अधिक राम के काज को महत्व दिया तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। वे अपना प्रत्येक कार्य राम नाम के सहारे और अपने कर्तव्य का एक भाग मानकर करते हैं। प्रभु का कार्य पूर्ण होने पर वे उसका श्रेय अपने प्रभु को ही देते हैं। ईश्वर को सेव्य और अपने को सेवक मानते हैं। निष्काम और निस्वार्थ भाव से कर्म (सेवा) किए बिना इस संसार सागर से पार नहीं पाया जा सकता। हनुमान जी पूर्णतः – मन, वचन एवं कर्म से श्रीराम के सेवक हैं–

"मन, क्रम, वचन राम पद सेवक।
सपनेहुँ आन भरोस न देवक।।"6

हनुमान जी का कर्म– भक्ति, निष्काम भक्ति का पर्याय है। रामकथा में हनुमान के कर्म संदेश और सुंदरकांड की जनप्रियता के विषय में डॉ. शकुंतला कालरा जी अपने एक लेख में लिखती हैं कि– सुंदरकांड वाल्मीकि–रामायण और तुलसी के "रामचरितमानस" का पांचवां कांड है जिसकी "फलश्रुति" अत्यंत सुंदर है। इसीलिए यह कांड सर्वाधिक जनप्रिय है। कुछ लोग "सुन्दरकांड" का नित्य पाठ करते हैं क्योंकि गोस्वामी जी उसकी "फलश्रुति" बताते हैं–

सकल सुभंगलदायक रघुनायक गुनगान।

सुनहिं ते तरहिं भव सिंधु बिना जलजान।।
(रा.च.मा. 5/60)

अर्थात् राम का चरित्र समस्त मंगलों को देने वाला है। जो लोग आदरपूर्वक उनका चरित्र गाते अथवा सुनते हैं, वे संसार–सागर को बिना जहाज के ही पार कर लेते हैं। यहाँ तुलसीदास जी कहना चाहते हैं कि राम का गुणगान श्रीराम जी से भी अधिक काम करता हैं श्रीराम के चरणों में जो स्नेह है वह समस्त सुमंगलों को देने वाला है। सकल सुमंगल से अभिप्राय, धर्म, अर्थ और कामदाता और भक्तहिं को मोक्षदाता अर्थात् चारों पुरुषार्थों को देने वाला है।7 आध्यात्मिक दृष्टि से सुंदरकांड राम की कृपा पाने के लिए महत्वपूर्ण है।

सुंदरकांड के नामकरण में कर्म के महत्व के कारण ही इसका नाम सुंदरकांड गोस्वामी जी ने रखा है। महत्वपूर्ण बात यह है कि हनुमान माता सीता जी की खोज में प्रवृत्त होने से पूर्व कुछ नहीं जानते। यह भी नहीं जानते कि मार्ग की बाधाएँ क्या–क्या हैं ?दूरी कितनी है ? यहाँ तक कि माता सीता को भी पहले कभी नहीं देखा है। परंतु फिर भी महावीर हनुमान अपने आराध्य राम नाम के सहारे अपने कर्म क्षेत्र यानी माता सीता जी की खोज में निकल पड़ते हैं। इसी कर्मयोग का संदेश गीता में "कर्मण्येवाधिकारस्ते" के माध्यम से समझाया गया है। इसी से रामकथा अति सुंदर हो गई है। रामचरितमानस में इस सोपान तक आते–आते श्रीराम का सीताहरण का क्लेश, सुग्रीव का क्लेश, सीता जी को राम का संदेश पाने से सीता जी का क्लेश, विभीषण का क्लेश, आदि सब दूर हो गया।

अपने एक शोधालेख में डॉ. आनंद तिवारी टिप्पणी करते हैं कि– "सुंदरकांड का नाम चाहते तो तुलसीदास, पंचवटी, जहाँ सीता राम को पहली बार देखते हैं या अशोक वाटिका, रख सकते थे जहां सबसे पहले हनुमान को सीता का पता लगा या लंका दहन जहां राम–रावण युद्ध की घटनाएँ घटीं। यदि तुलसी चाहते तो अरण्यकाण्ड में इसे शामिल कर सकते थे। सुन्दरकाण्ड की अधिकांश घटनाएं लंका में घटीं इसलिए इसका नाम लंकाकाण्ड भी हो सकता था, परंतु सुन्दरकांड नामकरण का कारण जो महत्वपूर्ण हो सकता है वह यह है कि कर्म के सौंदर्य का वर्णन। इस कांड के आदि से अंत तक हनुमान विराजमान हैं तथा हनुमान द्वारा अद्भुत एवं अद्वितीय कार्य ज्ञान तथा विवेकपूर्ण ढंग से किए गये। भारतीय दर्शन में "सत्यम् शिवम् सुन्दरम्" को सर्वोपरि महत्व दिया गया है। हनुमान ने शुभ सुंदर कर्म परहित के लिए किया और वह भी मन, कर्म और वचन से। जब ऐसा कोई कर्म किया जाता है तो वह लोकहितकारी एवं जनकल्याणकारी होता है।"8

lnHk&

1. मानस चेतना (किष्किंधा कांड विशेषांक) अंक–21–22 अप्रैल–2017, पृ–87
2. तुलसीदास दोहावली, दोहा– 111
3. रामचरितमानस, तुलसीदास, 5/31/3–4
4. रामचरितमानस, तुलसीदास 5/32/4–5
5. रामचरितमानस, तुलसीदास 2/203/7
6. रामचरितमानस, तुलसीदास 5/10/20
7. मानस चेतना, अंक–23, पृ.24
8. वैश्विक जीवन–मूल्य और रामकथा, सं. डॉ. घनश्याम भारती, जे.टी.एस. पब्लिकेशन्स, दिल्ली सं.–2018, पृ. 64–65

ys[k

lUnjdk.M%ok; i=gueku dh vfXuck.k ;k=k

'kkfr noUn [kj

भारतीय जन मानस निसर्गतः धर्मप्राण है, उसके चिन्तन–मनन, अभिव्यक्ति, वार्ता, व्यवहार, कार्यकलाप आदान प्रदान एवं समाजीकरण की प्रक्रिया सभी में इस धर्मप्राणता की एक अन्तर्धारा सूक्ष्म रूप से बहती रहती है। "रामचरित मानस" का नैत्यिक नैमित्तिक पारायण भी इसी प्रकार का एक न केवल धार्मिक अनुष्ठान है वरन वह जीव की उस भगवदोन्मुख दशा का साधक है जहाँ वह सांसारिकता में रहते हुए भी भगवान की अहेतुकी कृपा का पात्र बनता रहता है। जहाँ अन्तःकरण में रामभक्ति की ज्योति निरन्तर झलमलाती रहती है, जहाँ से उसे जीवन–पथ पर बढ़ते रहने की, कठिन मार्ग को सुगमतर करते रहने की सांकेतिकता प्राप्त होती रहती है। यह सांकेतिकता उस विराट "मानस" के भीतर आये पात्रों के क्रियाकलापों से, उनके दृढ़तर संकल्पों से, विशाल धर्म भूमि की वैविध्यभरी मरीचिकाओं पर विजय पा कर बढ़ते जाने की कठोर साधना से मिलती है। ये पात्र कहीं तो आध्यात्मिक वृत्तियों के प्रतिरूप होकर अवतरित होते हैं और कहीं जागतिक ऐषणाओं के प्रतिबिम्ब बनकर उभरते हैं।

जगत विश्रुत श्री हनुमान ऐसे ही एक आध्यात्मिक पात्र हैं जिन्होंने रामभक्ति का ऐसा अनूठा आदर्श स्थापित कर दिया है जिसमें युगों की कालावधि को सीमित करके स्वयं उन्हें तो अजर अमर होने का वरदान दिया ही– संसार के प्राणियों के लिये भक्ति का सेतु निर्मित कर दिया। ऐसा सेतु जिस पर चढ़कर पिपीलिका भी सागर पार जा सकती है, मानव तो फिर भी सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। मानव मात्र के लिये भक्ति के सागर में अवगाहन करने का सुगम मार्ग प्रशस्त कर दिया है हनुमान ने।

रामचरित मानस के सात सोपान एक विराट भाव एवं कर्मभूमि को अपने में समेटे हुए हैं। जिसमें इक्ष्वाकुवंशी रघुकुल नायकों के जीवन वृत्त को क्रमशः पारिवारिक पृष्ठभूमि से उठते हुए अन्त में त्याग और वैराग्य के उच्चतम सोपानों तक पहुँचते दिखाया गया है। राजा दशरथ के संदर्भ में बालकाण्ड भानूदय के समान है जहाँ उनके पुत्रों के भावी जीवन का उन्मेष होता है। अयोध्याकाण्ड करुणा सागर का प्रतिरूप है। अरण्यकाण्ड कष्ट हरण की प्राण प्रतिष्ठा का

शान्तागार है तो किष्किन्धा काण्ड मैत्री, क्षमा और शक्ति का परीक्षण केन्द्र है। आगे आता है सुन्दर काण्ड जहाँ से अतुलित बलधाम, हेमशैलाभदेह, दनुजवन कृशानु श्री हनुमान का विश्व से साक्षात्कार होता है। वह हनुमान की अतुलित रामभक्ति व अनन्य भाव सेवा की भूमि बनता है। लंका काण्ड भौतिक शक्ति पर सात्विक वृत्तियों की विजय का सूचक है और उत्तरकाण्ड संपूर्ण मानस का निकष और वैराग्य मन्दिर है।

सुन्दरकाण्ड अपने नाम के अनुरूप ही सुन्दरता का आगार है। हनुमान यहाँ राम की ममता के संवाहक बनते हैं। गोस्वामी तुलसीदास जहाँ मानस के चरित्रों के चित्रण में सिद्धहस्त है वहीं वे अवसरानुकुल पात्रों से सम्बद्ध दृश्यांकन में भी पूर्ण क्षमतावान है। किष्किन्धा काण्ड में शबरी द्वारा निर्देशित वनवासी राम हरण की गई सीता की खोज में पम्पासरोवर की ओर आ रहे हैं। बाली से भयाक्रान्त ऋष्यमूक पर्वत निवासी सुग्रीव द्वारा हनुमान को उनका परिचय लेने के लिये विप्र रूप में भेजा गया है। वे राम लक्ष्मण से– "की तुम्ह हरि दासन्ह मँह कोऊ। नर नारायण की तुम दोऊ" के द्वारा परिचय पूछते हैं। सरल चित्त राम अपना वृत्तान्त बताकर उनका परिचय जानना चाहते हैं, तब अपनी सुप्त शक्ति के जागरण अपने प्रभु को पहचान कर उनका यह कहना– "मोर न्याव मैं पूछा साईं। तुम पूंछहु कस नर की नाईं", एक ऐसे आन्दोलित भाव जगत की सृष्टि कर देता है जहाँ से राममय हनुमान और हनुमानमय राम के दर्शन होने लगते हैं। यह दृश्य आगे के तीनों सोपानों की पृष्ठभूमि है और सुन्दरकाण्ड में प्रवेश का प्रथम पगनिक्षेप।

इतनी प्रगाढ़ निर्भरता के बाद सुन्दरकाण्ड में हनुमान को राम दूत बनने का अवसर प्राप्त होता है। राम अग्नि तत्व सम्भूत हैं तो हनुमान वायु तत्व के जातक हैं, यहीं से अग्नि वायु मैत्री प्रारम्भ होती है जो आगे चलकर लंका काण्ड में दावाग्नि का सा रूप धारण कर लेती है। हनुमान राम के ऐसे दूत हैं जो अतुलित बल धाम हैं। यह अतुलित बल सीता की खोज में लगे वानर– समूह के लिये प्राण संजीवनी बनता है। इस बल से उन्होंने समुद्र लंघन, पर्वत मर्दन जैसे बड़े–बड़े काम किये, परन्तु उनकी निरभिमानता और प्रकृष्ट सेवा–भाव राम के चरणों में प्रणति की सीमा तक चला जाता है। यह सेवक भाव की पराकाष्ठा है। वे राम के अमोघ वाण के समान पराक्रमशाली हैं परन्तु स्वयं को "साखामृग" के अतिरिक्त कुछ भी नहीं मानते। उनका जन्म रामकाज के लिये हुआ है। उनका संकल्प है "राम काज कीन्हें बिना मोहिं कहाँ विश्राम।" इस राम काज के लिये अपने राम से, अपने आराध्य से उन्हें शक्ति मिलती रहती है– ऐसी शक्ति जिसका आधार अनन्य भक्ति का चरम सोपान है। भक्ति और शक्ति ने मिलकर उन्हें ऐसा दुर्द्धर्ष, पर सात्विक तेज दिया है जिसके सम्मुख त्रैलोक्य विद्रावण रावण की तामसिक शक्तियाँ न तो छल में टिक पाती हैं, न ही बल में। कितने प्रकार के छल उसकी ओर से हनुमान के पराभव के लिये किये गये। सुरसा, कालनेमि, मकरी सभी तो उसी की निशाचरी सैन्य संहति के प्रसार रूप में हैं, परंतु महाबली की संज्ञा हनुमान को इसीलिये मिली है कि वे राम की शक्ति से अनुप्राणित हैं, सात्विक शक्ति से। शीलवान एवं शरणागत प्रतिपालक प्रतिज्ञाधारी के तेज से निरन्तर भरते रहते हैं, स्वयं को अनन्यगति व दासत्व की चरमसीमा पर पहुँचाकर खाली होते हैं। वे स्वयं रावण को उस बल का, अपरिमेय शक्ति का परिचय इस प्रकार देते हैं–

सुनु रावन ब्रह्माण्ड निकाया,
पाई जासु बल बिरचति माया।
जाके बल बिरंचि हरि ईसा,
पालत सृजत हरत दससीसा।
जा बल सीस धरत सहसानन,
अंडकोस समेत गिरि कानन।

यही कारण है कि वे सभी निशाचरी शक्तियों को पराभूत कर देते हैं।

हनुमान राम काज करने की अटल प्रतिज्ञा और निशाचरी माया शक्ति की प्रतिशक्ति के रूप में प्रकट हुए हैं तभी उनका शारीरिक बल पर्वताकार होकर सामने आता है। पौराणिक मिथक है कि बालपन में अपनी शक्ति के दुर्दान्त प्रयोग से आश्रमवासी ऋषि मुनियों के यहां तोड़ फोड़ करने के कारण अपना बल भूल जाने की बात उनके लिये कही गई थी। वे अपना बल भूले थे परन्तु सागर पार जाने के प्रसंग में जाम्बवान द्वारा ललकारे जाने पर कि, ***"का चुप साधि रहा बलवाना"*** उनकी विस्मृत बलवत्ता प्रखर ज्योति के रूप में ऊर्ध्वमुखी हो उठी। वे सागर पार जाने के पूर्व "पर्वताकार" हो गये। समुद्र लंघन भी हो गया, अशोक वाटिका में माता सीता का दर्शन भी हो गया, परन्तु उनके वर्तमान शरीर के प्रति सीता के शंका प्रकट करते ही कि ऐसे शरीर से निशाचरी शक्ति का सामना कैसे होगा ? वहाँ भी हनुमान ने ***"सुनि कपि प्रकट कीन्ह निज देहा"*** और वे ***'कनक भूधराकार सरीरा'*** हो गये और उस शंका का निवारण करने में समर्थ हो गये। गोस्वामी जी ने "हेमशैलाभदेहं" कहकर उनकी बलवत्ता की परिणिति का यह स्वरूप सामने रखा है। परंतु बल और पराक्रम का यह रूप दर्शाने के बाद भी वे सीता जी के सामने प्रणति में शीश झुकाये ही खड़े रहकर उन्हें आश्वस्त करते हैं–

कछुक दिवस जननी धरु धीरा,
कपिन्ह सहित अइहहिं रघुवीरा।
निसिचर मारि तोहि लै जैहंहिं,
तिहुँ पुर नारदादि जस गैहंहिं।।

यहाँ दासत्व का आदर्श मुखर होकर सामने आता है कि बिना स्वामी की आज्ञा के एक पग भी आगे नहीं बढ़ाना है– ***"अबहिं मातु मैं जाउँ लेवाई, आयसु पै न दीन्ह रघुराई।"*** एक ओर शक्ति का चरमोत्कर्ष तो दूसरी ओर प्रणति की, विनम्रता की प्रतिमूर्ति। राम को शक्ति और शील की संयुति माना गया है (जैसा कि वाल्मीकि रामायण में कहा गया) तो, उनके अनन्य भक्त, निशिदिन के चरण सेवक हनुमान में इन्हीं गुणों की छाया सर्वत्र झलकती दिखाई देती है तो क्या आश्चर्य है ?

आगे हनुमान को "दनुजवनकृशानु" कहा है गोस्वामी जी ने। यह दनुजवन क्या है ? लंका तो सोने की बनी थी, वहाँ वैभव का पारावार था। चारों ओर दमदमाते महल, अटारी, ऊंचे प्राकार, गहरी परिखा, मणियों से सज्जित आवास, बाजार, गलियाँ, सुन्दर मार्ग देखे हनुमान ने। वर्णन है–

"कनक कोट विचित्र मनिकृत सुन्दरायत अति घना।
चउ हट्ट सुघट्ट वीथीं, चारु पुर बहुबिधि बना।।"

आदि छन्दों में तुलसी ने वहाँ की सुन्दरता व वैभव का चित्रण किया है तब फिर वह दनुजवन कैसे हो गया ? शरीर की शोभा का मापन चरित्र से होता है वैभव मात्र से नहीं, वह नर हो, वानर हो, दैत्य दनुज कोई भी हो– यदि उत्तम चरित्र है तो राक्षस कुल में जन्मे विभीषण राम भक्ति के अधिकारी बन जाते हैं। उनसे मिलने के पूर्व हनुमान ने उनकी सज्जनता को परख लिया था, अतः उन्होंने कहा–

ऐहि सन हठि करिहउँ पहिचानी।
साधु ते होइ न कारज हानी।।

वानरराज सुग्रीव राम के सहायक हो जाते हैं और हनुमान तो संकट मोचक हैं ही। आशय यह कि लंका के दनुज कुल में ऐसे चरित्र की सम्भावना ही नहीं है, वहीं तो लोभ, पाप, उपद्रवी वृत्ति, वित्त और वृत्तहरण, परदारानुरक्ति, लूट पाट और नरहत्या जैसी जघन्यता का साम्राज्य फैला है। इसीलिये गोस्वामीजी ने उसे उसे दनुजवन कहा है और उस पाप नगरी को जलाने, मूढ़ दैत्यों की कुबुद्धि से जलायी गई पूंछ से स्वाहा कर देने का काम हनुमान ने किया है अतः उन्हें "दनुजवनकृशानु" कह कर सम्मान दिया है।

हनुमान की स्तुति में उन्हें "ज्ञानिनामग्रगण्य" कह कर उनके ज्ञानी होने के प्रमाण दिये गये हैं। वे वनवासी वानर जाति के अवश्य थे, परन्तु प्रारंभ में उन्हें सभी विद्याओं की पूर्ण शिक्षा मिली थी। वाल्मीकि रामायण के अनुसार अन्धकार विनाशक सूर्य ने उन्हें शास्त्रों का ज्ञान दिया था। उन्होंने सूत्र, वृत्ति, वार्तिक, महाभाष्य और संग्रह–इन सब का भलीभांति अध्ययन किया था। उन्हें नव्य व्याकरण का ज्ञान था। यहीं पता चलता है कि किष्किन्धा काण्ड के चतुर्थ खण्ड में राम ने हनुमान के बारे में कहा है कि, इनके मुंह से इतनी सुन्दर भाषा में बात करने तथा उसमें एक भी अशुद्धि न होने से जान पड़ता है कि ये शास्त्रों के ज्ञाता है। ज्ञान को शास्त्रों में अग्नि भी कहा गया है। यही ज्ञानाग्नि उन्हें अपूर्व तेजस्विता देती है। जिससे वे रावण की भरी सभा में अपने वार्तालाप से उसे परास्त कर देते हैं। ऐसा विद्वान, ज्ञानी, सर्वज्ञाता और वाक्पटु हनुमान ही राम का सच्चा सेवक होकर उनके लिये संकट–मोचक हो सकता था। यही हनुमान के दौत्य–कार्य की सफलता का मंत्र है।

सुन्दरकाण्ड की सबसे हृदयावर्जक दृश्यावली राम और सीता के विरह संदेशों की प्रेषण और संग्रहण में देखने का मिलती है जिसके सूत्रधार हनुमान ही बनते हैं। अरण्यकाण्ड में राम का सीता विरह, लता तरु पाती से पूछते समय पाठक के हृदय को द्रवित अवश्य करता है परंतु जब हनुमान अशोक वाटिका में बैठी सीता तक अंगुलीयक के माध्यम से राम का विरह संदेश लेकर पहुंचते हैं सुन्दरकाण्ड में, तो उन दोनों के अविकल आत्मिक प्रेम की कथा के साक्षी भी वही बनते हैं–

तत्व प्रेम कर मन अरु तोरा,
जानत प्रिया एक मन मोरा।
सो मन सदा रहत तोहिं पाहीं,
जानु प्रीति रसु, इतनेहि माहीं।

इस संदेश के सीता के मन पर पड़ने वाले प्रभाव और उसके प्रत्युत्तर में सीता का कथन– इन दोनों के लिये गोस्वामी जी ने जिन आवेगमय क्षणों का दृश्य उपस्थित किया है वह पाठक के मन को करुणा से आप्लावित कर देता है। सीता के विरहानल में जलने पर भी आँसुओं के अपराध से जीवित रहने की जिस विवशता का चित्रण वहाँ हुआ है उस रोमांचक और स्तब्ध करने वाली करुणा विगलित स्थिति को हनुमान का हृदय ही झेल सकता था। "दीन दयाल विरदु संभारी, हरहु नाथ मम संकट भारी" का अनुनय लेकर चूड़ामणि के साथ राम के पास जाने वाले हनुमान की वाणी केवल इतना ही कह पाती है–

"सीता कै अति बिपति बिसाला,
बिनहिं कहे भल दीनदयाला।"

इतने संयत, मर्यादित, अटूट प्रेम की डोर में बँधे विरह की अनुभूतियों का ऐसा वर्णन अन्यत्र दुर्लभ है। राम सीता की हनुमानमयता और हनुमान की

राममयता ही ऐसे दुर्वह दुख संभार को वहन करने में समर्थ हो सकी है। आराध्य और आराधक की एक तान लयमयता के उदाहरण संपूर्ण मानस में गुंथे पड़े हैं। कहीं हनुमान *"राम लखन सीता मन बसिया हैं"* वहीं हनुमान के हृदय में सदा युगल मूर्ति विराजती है। हर काम उनका रघुनाथ को हृदय में रख कर ही होता है– *"चलेउ हरिषि हिय धरि रघुनाथा।"* कहीं राम उन्हें *"तुम्ह प्रिय मोहि भरतहिं सम भाई"* कहते हैं, कहीं वे उनके उपकारों के बोझ तले दबे से जा रहे हैं *"सुनु सुत तोंहि उरिन मैं नाहीं, करि विचारु देखेउँ मन माहीं"*। हनुमान तो अपने अवगुण ही बखानते चलते जा रहे हैं–

साखामृग कै यह मनुसाई,
साखा ते साखा पर जाई।
सो सब तव प्रताप रघुराई,
नाथ न कछू मोर मनुसाई।

रघुनाथ का यह चरण सेवक उनके चरणों में कितनी बार भूलुंठित हुआ होगा, मानस के दृश्य इसके प्रमाण हैं –

चरन परेउ प्रेमाकुल त्राहि त्राहि भगवन्त।

ऐसी भी दशा आती है जब *"बार बार प्रभु चहइ उठावा, प्रेम मगन तेहि उठव न भावा"*।।

ऐसी स्थितियाँ भी आती हैं जब पुत्र का भगवद् प्रेम देखकर भगवान शंकर को भी मगन हो जाना पड़ता है–

प्रभु कर पंकज कपि के सीसा,
सुमिरि सो दसा मगन गौरीसा।

यह मगन होने की दशा इतनी गहरी पैंठ जाती है कि उनके द्वारा पार्वती जी को सुनाई जाने वाली रामकथा का प्रवाह ही कुछ देर के लिये रुक जाता है फिर

सावधान करि पुनि मन संकर,
लागे कहन कथा अति सुन्दर।

विश्व में विश्रुत हो गया कि– *"राम ते अधिक राम कर दासा"*– राम के ये दास इस पावनभूमि में पग पग पर विराज रहे हैं। राम से अधिक हनुमान के उपासक हैं, राम से अधिक हनुमान के मन्दिर हैं। राम से अधिक हनुमान का गुणगान होता है। सुन्दरकाण्ड जिसके केन्द्र में हनुमान ही हनुमान हैं–का सुमधुर ध्वनि से गायन वादन के साथ नैत्यिक ओर नैमित्तिक पारायण कोटि कोटि कण्ठों से रामभक्त हनुमान का स्तवन करके उनकी राममयता को प्रणाम करता रहता है।

तु.मा.भा. अप्रैल 2015

डी–7, टॉवर 7, न्यू मोतीबाग, नई दिल्ली– 110023

ys[k

j?kukFk le dk ikfl/k ufg vku

Mk- 'kdr yk dkyjk

सुन्दरकाण्ड के आरंभ में हनुमान जी की स्तुति करते हुए तुलसीदास लिखते हैं–

"अतुलितबलधामं हेमशैलाभ देहं, दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकल गुणनिधानं वानराणामधीशं, रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि।।"

(रा.च.मा. पद–3)

वानर हनुमान को "अतुलितबलधामं" तथा "ज्ञानिनामग्रगण्यम्" तथा "सकलगुणनिधानं" कहा। यह भगवान राम की कृपा–दृष्टि का सुफल ही तो है। राम–कृपा का भाजन कठिनाइयों के विशाल, गहन और अगम्य समुद्र को वैसे ही लाँघ जाता है जैसे कोई गऊ के खुर से बने गड्ढे को बिना श्रम किए सहज ही पार कर जाता है। समुद्र को लाँघकर लंका में प्रवेश करना अत्यंत ही दुष्कर कार्य था। राम–नाम मुद्रित मुद्रिका को मुख में रखकर वह समुद्र लाँघ जाते हैं। आगे चलकर हनुमान जी को लंका में अनेक विघ्नों का सामना करना पड़ता है। पहले उन्हें सुरसा मिली और फिर समुद्र पार होने पर लंकिनी मिली, किंतु ये सभी विघ्न राम की कृपा से ही दूर हो गए। हनुमान लंका जलाना चाहते हैं किंतु कैसे जले ? रावण के दरबार में सैनिकों ने हनुमान की पूँछ में आग लगा दी पर वह पूरी लंका तक फैली कैसे ? हनुमान जी कहते हैं कि–

हरि प्रेरित तेहि अवसर चले मरुत उनचास।।
अट्टहास करि गर्जा कपि बाढ़ि लाग अकास।।

(रा.च.मा. पद 5/25)

लंका–दहन, निशाचर समूह को मारना, अशोकवाटिका को उजाड़ना आदि ये सब कार्य राम–प्रताप से "गोपद" समान सुगम हो गए। जैसे गोपद को सहज पार कर लिया जाता है वैसे ही इन कठिनाइयों को हनुमान जी ने पार कर लिया। हनुमानजी कहते हैं कि इसमें कोई कोई बहादुरी नहीं है–

नाघि सिंधु हाटकपुर जारा। निसिचर गन बधि बिपिन उजारा।
सो सब तव प्रताप रघुराई। नाथ न कछू मोरि प्रभुताई।।

(रा.च.मा. 5/33/4–5)

यहाँ हर असंभव कार्य को राम के प्रताप से संभव होना बताया है।

हनुमान जी के विशेष कार्य थे सीताजी की खोज, उनका दर्शन कर उनको राम की मुद्रिका देना, प्रभु का बल, बिरह आदि कहना तथा शीघ्र लौट आना। ये सभी कार्य सम्पन्न हुए। इन कार्यों की सिद्धि के पीछे भी राम–कृपा है। सुग्रीव हनुमान के अतिरिक्त वानर भी यही मानते हैं कि इन सभी कार्यों की पूर्णता में स्वयं राम की कृपा है। राम स्वयं समर्थ हैं– जिनकी "भृकुटि–विलास सृष्टि लय होई" कहा गया है। उन्होंने तो हनुमान अंगद आदि वानरों को निमित्त मात्र बनाया है। प्रच्छन्न रूप से उनकी कृपा से ही ये कार्य सम्पन्न हुए हैं। वानरों ने इसका बराबर अनुभव किया है कि रामकार्य होने में "राम–कृपा" ही कारण है। इसमें जहाँ यह ध्वनित है, वहाँ यह भी स्पष्ट किया है कि मंजिल के रास्ते में आने वाले विघ्न ईश्वर की कृपा से ही हटते हैं, जीव के प्रयास से नहीं। अतः जीव को इस बात का अभिमान नहीं करना चाहिए कि अमुक कार्य उसके प्रयास–रूप निर्विघ्न सम्पन्न हुआ है। होगा तो वही जो प्रभु न रच रखा है। सूरदास भी यही कहते हैं कि हमारे हर कार्य के सम्पन्न होने के पीछे गोपाल की कृपा है जो अपना पुरुषार्थ मानता है वह झूठा है–

करि गोपाल की सब होय
जो अपनो पुरुषारथ मानत, अति झूठो है सोय
जो कुछ रच राखी नंद–नंदन मेटि सकै न कोय।

तुलसीदास ने स्थान–स्थान पर इसको स्वीकारा है कि अपना सोचा हुआ कुछ नहीं होता–

होईं सोइ़ जो राम रचि राखा।
को करि तरक बढ़ावै साखा।
(रा.च.मा. 5/4/1)

हृदय में अपने इष्टदेव को रखकर सब कार्य करने चाहिए। यह मूलमंत्र लंकिनी ने दिया। ऐसा करने से ही जीव में निरभिमानता आती है। सत्य भी यही है। मनुष्य के सभी प्रयास तभी फलित होते हैं जब ईश्वर की कृपा होती है। बीज कितना भी उत्तम कोटि का हो यदि उसे प्रकृति की धूप, हवा और पानी नहीं मिलता तो बीज अंकुरित और पल्लवित नहीं हो पाता। ईश्वर की कृपा का जल ही अंकुरण और पल्लवन में मदद करता है। सुंदरकांड में ही जामवंत राम से कहते हैं हनुमान आपका कार्य करके वानरों सहित सकुशल लौट आए हैं। राम हनुमान के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हैं तो जामवंत कहते हैं कि प्रभु यह हनुमान का पुरुषार्थ नहीं आपकी कृपा–दृष्टि का परिणाम है। आप जिस पर दया करते हैं उसकी विजय तो निश्चित है। उसका सुयश चहुँ ओर फैलेगा–

जामवंत कह सुनु रघुराया।
जा पर नाथ करहु तुम दाया।...
सोह बिजई बिनई गुन सागर।
तासु सुजसु त्रैलोक उजागर।
(रा.च.मा. 5/30/1–2)

राम–कृपा से मार्ग निकष्कंट हो जाता है। सभी प्रतिकूलताएं, विघ्न स्वतः हट जाते हैं। पृथ्वी पर मनुष्य और स्वर्गलोक में देवता सभी उस पर प्रसन्न रहते हैं। अर्थात् वह कहीं भी जाए सभी उसकी उद्देश्य पूर्ति में सहायता करते हैं–

ताहि सदा सुभ कुसल निरंतर।
सुर नर मुनि प्रसन्न ता ऊपर।
(रा.च.मा. 5/30/1)

जामवंत आगे अपनी बात को स्पष्ट रूप से कहते हैं–

प्रभु की कृपा भयउ सब काजू
जन्म हमार सुफल भा आजू।।
(रा.च.मा. 5/30/2)

हनुमान की लंका में सबने सहायता की। उन्हें हर घटना में रामकृपा का अनुभव हुआ। रावण की लंका में प्रवेश तो कर लिया किंतु वैदेही कहीं दिखाई नहीं दी–

"मंदिर मंदिर प्रति करि सोधा।
देखे जहँ–तहँ अगनित जोधा।"

(रा.च.मा. 5/5/3)

वे असमंजस में हैं। ऐसे में विभीषण का मिलन, फिर रावण के दरबार में पहुँचना, नाग–पाश का निमित्त बनना सब राम की प्रेरणा से हुआ।

अतः विश्वाास करो उसकी अनन्त और असीम कृपा पर। वह तुम्हारी हर पीड़ा, विपदा को जानते और समझते ही नहीं अनुभव भी करते हैं क्योंकि वह अन्तर्यामी हैं। अनुभव करो पल–पल और पद–पद बरसती उसकी कृपा को, उसके अनुग्रह, सौहार्द और प्रीति को। निराश, उदास और विषादग्रस्त मत हो। उनकी कृपा पर विश्वास करते हुए सदा प्रसन्न तथा आनन्दमग्न रहना चाहिए। अनुभव करो कि आप भगवान के कृपा–पात्र हैं, स्नेह पात्र हैं। जगत् के ये सारे दुःख, सारे क्लेश, अभाव–अभियोग, शंका–विषाद तभी तक हैं जब तक आपको प्रभु ने अपनी कृपा–दृष्टि से नहीं देखा। राम अकारण सुहृद और परम मंगल करने वाले हैं। उनकी कृपा अनुपम, अनंत और सार्वभौम हैं उनकी कृपा से सब प्रकार के विघ्नों का नाश और आगे बढ़ने का मार्ग प्रशस्त होता है। प्रश्न उठता है कि राम कृपा किस पर करते हैं ? उत्तर है जो पूर्णरूपेण उनका शरणागत हो जाता है। सब आशा, भरोसा, विश्वास छोड़कर एकमात्र राम का विश्वास करता है वही उनका कृपा–पात्र बनता है। संसार की वस्तु, प्राणी तो संयोग–वियोगशील है। जो जीव बंधु–बांधव, प्राण–धन सभी की ममता तथा अपना अहं छोड़कर विनम्र भाव से उनकी शरण में आ जाता है उसके शोक, विषाद, दुःख, क्लेश, कष्ट, संताप, भय, उद्वेग आदि कुछ रहते ही नहीं हैं।

उसके लिए पूरी प्रकृति अनुकूल हो जाती है। विष मारक प्रभाव छोड़ देता है। अग्नि जलाना छोड़ देती है। पर्वत गुरुता छोड़ देता है। लक्ष्मण–मूर्च्छा के समय त्रिकूट पर्वत में हनुमान द्वारा पूरा पर्वत उखाड़ कर लाना ईश्वरीय कृपा ही तो है। भारी पर्वत कैसे हल्का होकर हनुमान के हाथ में स्थिर हो जाता है। हनुमान तो निमित्त मात्र हैं। वास्तविक बल तो राम की कृपा ही है। सबसे बड़ा राम का ही बल है जिसके भरोसे से लक्ष्मण जी ने जनक की सभा में ब्रह्माण्ड को गेंद की तरह उठाने, मूली की तरह तोड़ने और शिव धनुष को छत्र की भाँति नष्ट कर डालने की साहसपूर्ण वाणी कही थी। यह बल भगवान की सच्ची शरणागति से प्राप्त होता है क्योंकि शरणागत भक्त में भागवती शक्ति अवतीर्ण होकर अपनी लीला करने लगती है। उस सर्वशक्ति के सामने सारी बाधाएं, प्रतिकूलताएं कुंठित हो जाती हैं।

भगवान के शरणापन्न होने वाले जीव की ओर कोई टेढ़ी निगाह से देखने की सोच भी नहीं सकता–

सीम की चाँपि सकइ कोउ तासू।
बड़ रखवार रमापति जासू।

रा.च.मा.

जीव के पाप–ताप उसी क्षण नष्ट हो जाते हैं जब वह प्रभु के सम्मुख होता है। राम का स्वयं कथन है–

सम्मुख होइ जीव मोहि जबहीं।
जनम कोटि अघ नासहिं तबहीं।

(रा.च.मा. 5/44/1)

तुलसीदास का तो दृढ़ विश्वास है कि जो राम का बन जाता है वह उसकी केवल इस जन्म की ही

नहीं कई जन्मों की बिगड़ी संवार देते हैं। यह प्रभु का सौहार्द तथा स्नेह है। हमें उनके सौहार्द और स्नेह पर विश्वास होना चाहिए। वह शरणागत का सारा "योगक्षेम" वहन करते हैं। जीव की अपनी असमर्थता, अपनी अयोग्यता, अपनी अनधिकारिता इन सबके होते हुए भी भगवान की कृपा के बल पर सारी अड़चनें, सारे विघ्न स्वतः टल जाते हैं। गीता में भगवान कृष्ण ने यह घोषणा की है–

मच्चितः सर्व दुर्गाणि मत्प्रसादात् तिरष्यसि।

गीता/18/58

इतना ही नहीं भगवान कृष्ण तो यह भी कहते हैं कि भगवद्कृपा से तो जीव अविनाशी उत्तम पद को भी प्राप्त कर सकता है। सुंदरकांड में ही विभीषण ने इस बात का प्रत्यक्ष अनुभव किया कि जिस पर राम की कृपा होती है उसके सभी प्रकार के भय और सारी पीड़ाएं समाप्त हो जाती हैं।

अनेक उदाहरण और दृष्टांत देकर बार–बार हनुमान रावण को समझाना चाह रहे हैं कि हे रावण तुम राम से वैर छोड़कर उनकी शरण में चले जाओ क्योंकि राम– प्रणतपाल हैं। वह विनम्र या दीन होकर आए शरणागत के हर अपराध क्षमा कर देते हैं। राम के कृपापात्र बनकर तुम्हारा सब ऐश्वर्य, वैभव, सोने की लंका, प्रभुत्व वैसा ही बना रहेगा।

जो राम विमुख हैं उनकी सम्पत्ति और प्रभुता ठहरती नहीं। ठीक वैसे जैसे जिन नदियों के उद्गम स्थान में जल नहीं है, वर्षा के हो जाने के बाद वे सूख जाती हैं। हनुमान जी रावण को निरंतर समझा रहे हैं कि राम से विरोध करने वाले का कोई भी रक्षक नहीं होता। सामान्य जन की तो क्या कहें स्वयं शंकर, विष्णु, ब्रह्मा भी रामद्रोही को नहीं बचा सकते।

मित्र करइ सत रिपु कै करनी।
ता कहुँ बिबुध नदी बैतरनी।
सब जगु ताहि अनलहु ते ताता।
जौ रघुबीर बिमुख सुनु भ्राता।

रा.च.मा.

संपर्क– एन.डी.–57, पीतमपुरा, दिल्ली– 110034, मो.: 9958455392

lqnjdkaM esa ^lqanj* 'kCn dk vkB ckj iz;ksx

1. सिन्धु तीर एक भूधर सुंदर
2. कनक कोट बिचित्र मनिकृत सुन्दरायतना घना।
3. स्याम सरोज दाम सम सुंदर।
4. तब देखी मुद्रिका मनोहर। राम नाम अंकित अति सुंदर।
5. सुनहु मातु मोहि अतिसय भूखा। लागि देखि सुंदर फल रूखा।
6. सावधान मनि करि पुनि संकर। लागे कहन कथा अति सुंदर।
7. हरषि राम तब कीन्ह पयाना। सगुन भये सुंदर सुभ नाना।।
8. सठ–सन बिनय कुटिल सन प्रीती। सहज कृपन सन सुंदर नीती।

ys[k

gueku th dh lQyrk dk irhd % lUnjdk.M

Mk- ljkt xlrk

श्रीराम की कथा भारतीय जीवनदर्शन, धर्म और संस्कृति के साथ मानव जीवन के विविध पक्षों की ऐसी कथा है जिसमें उत्कृष्ट सद्‌गुणों, त्याग, बलिदान, संयम, विवेक व अनुशासन की शिक्षा मिलती है। श्रीरामकथा चाहे, महाकवि वाल्मीकि कृत रामायण में, गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा वर्णित रामचरितमानस में या आधुनिक भारतीय एवं पाश्चात्य भाषाओं में रचित हो सभी में लोककल्याणकारी भाव के साथ, वैदिक सनातन धर्म और संस्कृति का भव्य व दिव्य रूप पाठकों को मिलता है। सुन्दरकाण्ड में रामकथा कल्पवृक्ष है, कामधेनु के समान है। मानव के पुरुषार्थ–चतुष्टय को पूर्णता प्रदान करने वाला जीवन्त काव्य है। आज आवश्यकता है युग के अनुरूप रामकथा के श्रवण, चिन्तन, मनन की, श्रीराम के जीवन चरित को आत्मसात् करने की, समत्व वृद्धि प्राप्त कर श्रेष्ठ कार्यों से जुड़ने की तथा हनुमान जी जैसा असाधारण, अद्‌भुत बल, वैभव व पराक्रमी बनने की, तभी श्रीराम की कथा का समुचित पारायण हो सकेगा। सुन्दरकाण्ड में तुलसीदास जी ने श्रीरामभक्त, हनुमान जी के प्रति पूर्ण आत्मनिष्ठा व्यक्त की है। विनयपत्रिका में गोस्वामी तुलसीदास हनुमान जी के प्रति जो अपार श्रद्धा व्यक्त करते हैं वह सुन्दरकाण्ड में फलीभूत हुई है–

करुणानिधान, बलवृद्धि के निधान मोद,
महिमा निधान, गुन–ज्ञान के निधान हौ।
वामदेव रूप, भूप राम के सनेही नाम,
लेत देत अर्थ–धर्म काम निरबान हौ।
आपने पधाव, सीतानाथ के सुभाव शील
लोक–वेद–विधि के विदुष हनुमान हौ।

(विनय पत्रिका पद 94–241)

जिस व्यक्ति में हनुमान जी जैसे गुण विद्यामान होंगे वह व्यक्ति निश्चित रूप से अपने जीवन को सुन्दर बना सकता है। सुन्दरकाण्ड रामभक्त हनुमान की विलक्षण प्रतिभा का प्रतीक है। श्रीराम की अद्‌भुत कृपा प्राप्त कर हनुमान जी ऐसे–ऐसे अलौकिक कार्य करते हैं, जिससे न सिर्फ हनुमान जी का जीवन धन्य हुआ वरन् हनुमान जी के स्मरण मात्र से जो भी व्यक्ति सुन्दरकाण्ड पढ़ता है, सुनता है,

आत्मसात् करता है यह भी विलक्षण प्रतिभावान बन जाता है। सुन्दरकाण्ड जीवन को सुन्दर बनाने की तकनीक से ओतप्रात जीवन्त कथा है।

जामवन्त की प्रेरणा व श्रीराम के आशीर्वाद से हनुमान जी सीतामाता की खोज हेतु आकाश मार्ग से विचरण करते हुए सौ कोस के महासमुद्र को लाँघकर मैनाक पर्वत पर छलांग लगाते हैं– "सिन्धु तीर एक मूधर सुन्दर कौतुक कूद चढ़ेऊ ता ऊपर"। वस्तुतः हनुमान जी की छलांग विचार के सर्वोच्च शिखर की छलांग थी। *"गिरि पर चढ़ि लंका तेहि देखी"* वहाँ से हनुमान जी सोने की लंका देखते हैं। हनुमान जी के मन में वैराग्य जाग्रत होता है। क्योंकि *"सनहु देव रघुवीर कृपाला, यहि मृग कर अति सुन्दर छाला"*– सीता जी सोने के मृग द्वारा ही छली गयी थीं। वैराग्य व आत्मविश्वास के बल से हनुमान जी लंकापुरी जैसी सोने की नगरी में प्रवेश करते हैं। अनन्त बाधाओं को पारकर उन्हें "भवन एक पुनि दीख सोहावा, हरि मन्दिर तहँ भिन्न बनावा" सुन्दर घर राम नाम अंकित दिखाई देता है साथ ही विभीषण से मित्रता व परिचय होता है। *"मन्दिर महुँ न दीख वैदेही"* जब कहीं सीता के दर्शन नहीं होते तब हनुमान जी विभीषण से सीता माता के विषय में पूछते हैं तब *"जुगुति विभीषण सकल सुनाई"*। विभीषण द्वारा बताई युक्ति को हनुमान जी न सिर्फ सुनते हैं वरन् प्रतित्युत्पन्नमतित्व का परिचय भी देते हैं। राक्षसियों से घिरी सीता के अति दयनीय दशा के दर्शन से दुखी हृदय हनुमान तद्नुरूप कार्यतत्पर होते हैं। पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

कृस तनु सीस जटा एक बेनी।
जपति हृदय रघुपति गुन श्रेणी।।
निज पद नयन दिए मन,
राम पद कमललीन।
परम दुखी भा पवनसुत,
देखि जानकी दीन।।

रावण द्वारा सीता को नाना प्रकार के त्रास देकर इस प्रकार डराना धमकाना और कहना कि – *"मास–दिवस महुँ कहा न माना, तौ मैं मारवि काढ़ि कृपाणा"*। रावण के जाते ही हनुमान का दुखी हृदय सीता के समक्ष राम नाम अंकित अति सुन्दर मुद्रिका फेंकना, सीता से सम्भाषण कर उनकी शरण पाना, भक्तवत्सला माँ सीता के अपार स्नेह को पाकर उनकी आज्ञा से अशोक वाटिका को उजाड़ना। नगर के प्रमुख भाग को ध्वस्त कर निडरतापूर्वक रावण की सभा में पहुँचना तथा उसे उचित समझाइश देना आदि कार्य करते हैं। मेघनाद द्वारा बन्धन युक्त करने पर व पूँछ में आग लगाने पर स्वर्णमयी लंका को भस्मीभूत कर सीता से चूड़ामणि व आशीष प्राप्त कर, श्रीराम से सीता का सम्पूर्ण वृतान्त विस्तार से बताते हैं, तथा श्रीराम की कृपा प्राप्त करते हैं।

सुन्दरकाण्ड में सीताजी की असाधारण सहनशक्ति, संयम, विवेक, निर्भयता, चरित्र, बल, शीलस्वभाव नारीत्व का चरमोत्कर्ष, जीवन का श्रेष्ठ आदर्श एवं राम के प्रति अनन्य भक्ति स्तुत्य है। सीता जी सभी सुखों का त्याग कर शरीर का ध्यान न रखते हुए श्रीराम के चरणों में ही अहर्निश ध्यानाकृष्ट रहती हैं। सुन्दरकाण्ड में हनुमान जी व सीतामाता का संवाद अद्भुत व मनोहर बन पड़ा है। हनुमान जी द्वारा श्रीराम की मार्मिक कथा सुनकर सीता जी के दुख दूर हो जाते हैं।

इसके पश्चात् जब हनुमान जी वापिस श्रीराम के समक्ष प्रस्तुत होते हैं तब हर्ष व आनन्द चरम पर रहता है।

"प्रीति सहित सब भेंटे, रघुपति करुनापुंज।
पूछी कुशल नाथ अब, कुसल देखि पद कंज।।"

हनुमान जी गद्गद् भाव व्यक्त करते हुए कहते हैं–

"प्रभु की कृपा भयऊ सबु काजू,
जन्म हमार सुफल भा आजू।"

इस प्रकार धन्यता अनुभव करते हुए हनुमान जी

ने अपनी सफलता पर अपार प्रसन्नता व्यक्त की। वास्तव में यदि देखा जाये तो यह सफलता आसान नहीं थी। यह सफलता हरेक उस व्यक्ति को प्रेरित करती है जो हताश व निराश होकर कुछ करते ही नहीं है। मन रूपी वानर जीवन भर जितनी छलांगे लगाता है यदि वह हनुमान जी की तरह ऊँची छलांग लगा दे तथा अपनी वृत्ति को हनुमान जी जैसी बना ले तो जीवन ही धन्य हो जाये। सुन्दरकाण्ड का सम्पूर्ण रामकथा– वृतान्त भगवान शंकर अत्यन्त शांत मन से बहुत ही श्रेष्ठता के साथ सुनाते हैं, इसलिए भी सुन्दरकाण्ड सुन्दरता से ओत–प्रोत हो गया है –

"सावधान मन करि पुनि संकर,
लागे कहन कथा अति सुन्दर।"

लंका जैसे भीषण वातावरण को सुन्दर बनाने में श्रीसीताजी, की महती भूमिका है। उनका त्याग व पतिव्रता स्वरूप समस्त नारी जगत के लिए स्पृहणीय व स्तुत्य है।

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, पं. दीनदयाल उपाध्याय शास. कला वाणिज्य (अग्रणी) महाविद्यालय सागर (म.प्र.)

lqUnjdkM lc/kh ,d nkgk vkB rjhd l dgk tkrk g

1. सुन्दरे सुन्दरी सीता, सुन्दरे सुन्दरी कथा। सुन्दरे सुन्दरो रामाः, सुन्दरे किन्न सुंदरम्।।
2. सुन्दरे सुन्दरो रामः, सुन्दरे सुन्दरो कपिः। सुन्दरे सुन्दरी सीता, सुन्दरे किन्न सुंदरम्।।
3. सुन्दरे सुन्दरी सीता सुन्दरे सुन्दरम् वनम्। सुन्दरे सुन्दरी लंका सुन्दरे सर्व सुंदरम्।।
4. सुन्दरे सुन्दरी सीता सुन्दरे सुन्दरः कपिः। सुन्दरे सुन्दरी वार्ता अतः सुंदर उच्यते।।
5. सुन्दरे सुन्दरो रामः, सुन्दरे सुन्दरी कथा। सुन्दरे सुन्दरी सीता, सुन्दरे किन्न सुंदरम्।।
6. सुन्दरे सुन्दरी सीता, सुन्दरे सुन्दरः कपिः। सुन्दरे सुन्दरी वार्ता, सुन्दरे सर्व सुन्दरं।।
7. सुन्दरे सुन्दरी सीता, सुन्दरे सुन्दरो हनुमान। सुन्दरे सुन्दरी वार्ता, सुन्दरे किन्न सुंदरम्।।
8. सुन्दरे सुन्दरं दृश्यम्, सुंदरे सुंदरी कथा। सुन्दरे सुन्दरी सीता, सुन्दरे किन्न सुंदरम्।।

डॉ. हरप्रसाद शर्मा

ys[k

Hkokuf[kykUrjkRek

iHkn;ky feJk

गोस्वामी तुलसीदास ने मानस के प्रत्येक काण्ड के आरम्भ के अनुकूल मंगलाचरण क्रम में सुन्दरकाण्ड के आरम्भ में तीन सुन्दर श्लोक संसृजित किये हैं। इनमें वसन्ततिलका छंद में पहले दो श्लोकों में प्रभु राम की प्रार्थना है तथा अंतिम तीसरे मालिनी छंद में हनुमानजी की लोक प्रसिद्ध अनुपम वंदना है।

भगवान राम को समर्पित द्वितीय छंद इस प्रकार है–

नान्या स्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये, सत्यं वदामि च भवान खिलान्तरातमा।
भक्तिं प्रयच्छ रघुपुंगव निर्भरां मे, कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च।

इस श्लोक के शीर्षोक्त द्वितीय पद के अंश पर ही मैं यहाँ केन्द्रित रहना चाहता हूँ। यद्यपि यह पूरा श्लोक तुलसी की प्रभु के प्रति अप्रतिम, अद्वितीय और परिपूर्ण निर्भरा भक्ति प्रधान है, किन्तु इसमें जो भगवान को अखिल ब्रह्माण्ड की आत्मा के रूप में स्मृत कराया गया है, उसकी अर्थवत्ता पर विचार ही मेरी विनम्र चेष्टा में है।

इस श्लोक का सामान्य भाव यही है कि "हे रघुपति राम, मेरे हृदय में अन्य कोई इच्छा नहीं है, मैं यह सत्य कथन कर रहा हूँ। और फिर आप तो अखिल ब्रह्माण्ड की आत्मा हैं ही। हे रघुकुलश्रेष्ठ, मुझे (कृपा कर) अपनी निर्भरा भक्ति प्रदान कर दीजिये और मेरे मन को काम आदि दोषों से मुक्त भी कीजिये।"

मानस में इसी प्रकार का भाव माता सीता द्वारा देवी जगदम्बा की प्रार्थना में भी प्रकट हुआ है जिसमें सीता ने कहा–

''मोर मनोरथु जानहु नीकें, बसहु सदा उरपुर सब ही कें।
कीन्हेउँ प्रगट न कारन तेही, अस कहि चरन गहे बैदेही।''

(बालकाण्ड 235/2)

इन दोनों प्रार्थनाओं की समानता यही है कि सर्वज्ञात के सामने सत्य की शपथ खाने की तो वैसे ही आवश्यकता नहीं है, फिर जीव मात्र के हृदय में विद्यमान परमेश्वर को यह स्पष्ट करना तो कैसे भी आवश्यक प्रतीत नहीं है जो उसके संचालनकर्ता और द्रष्टा दोनों ही हैं। श्रीमद्भागवत में भी गोपियां दशम स्कंध के प्रसिद्ध गोपीगीत में कहती हैं–

"न खलु गोपिकानन्दनो

भवानखिलदेहिनामन्तरात्मदृक्"

(श्रीमद्भागवत 10/21/4)

अर्थात् है कृष्ण तुम केवल यशोदा के पुत्र मात्र नहीं हो, (तुम तो) समस्त शरीरधारियों के हृदय में रहने वाले उनके साक्षी और अन्तर्यामी हो।

इन सभी सन्दर्भों को लेकर जो मूल विचारणीय भाव उत्पन्न होता है वह यही है कि जहां एक भक्त अपने भगवान की उसकी अतीव श्रेष्ठता में पृथक सत्ता की अभिकल्पना करता है वहीं एक ज्ञानी ईश्वर को उसकी सर्वव्यापक परमसत्ता को स्वीकारता है। अतः भक्ति की परिपूर्णता के लिए एक भक्त को इसके ज्ञानाश्रय की आवश्यकता कितनी विधेय है ?क्या यह भक्ति और ज्ञान का समन्वय करती विशिष्ठाद्वैत विधि है अथवा ज्ञान और भक्ति का वह समुच्चय है जो प्रत्येक ज्ञानी और भक्त की सिद्धि की ही सार्थकता है ?

तुलसीदास जी ने मनु और शतरूपा के ईश्वर साधना के लिए वन प्रस्थान करने पर एक रूपक साधा है–

"पंथ जात सोहहिं मतधीरा।
ज्ञान भगति जनु धरें सरीरा।"

(बालकाण्ड 142/2)

अर्थात तप के लिए वन जाते हुए मनु और शतरूपा ऐसे प्रतीत हो रहे थे जैसे कि ज्ञान और भक्ति शरीर धारण कर चल रहे हों। किन्तु इनकी साधना की सिद्धि प्रायः विपरीत धाराओं– भक्ति और ज्ञान में होती है। भगवान के दर्शन देने पर मनु उन्हें पुत्र रूप में प्राप्त कर परिपूर्ण भक्ति का वरदान मांगते हैं। उन्होंने इसके लिए अपने वरदान को यहां तक विशेषीकृत किया–

"सुत विषइक तव पद रति होऊ।
मोहि बड मूढ़ कहै किन कोऊ।
मनि बिनु फनि जिमि जल बिनु मीना।
मम जीवन तिमि तुमहिं अधीना।।"

(बालकण्ड 150/3)

दूसरी ओर शतरूपा को भगवान ने विवेक बुद्धि का भी वरदान दिया–

"मातु बिबेक अलौकिक तोरे।
कबहुं न मिटहि अनुग्रह मोरे।"

(वही 150/2)

इन महान चरित्रों की इस कथा में हुई अंतिम परिणति पर ध्यान देते हुए हमें पता चलता है कि जहां दशरथ रूप में मनु राम के वियोग में अपनी देह का ही त्याग कर देते हैं वहीं कौशल्या न कवल भगवान के विराट रूप का दर्शन कर पाती है– (*देखी माया सब बिधि गाढी। अति सभीत जोरै कर ठाढी।* (बालकण्ड 201/2) इतना ही नहीं, वे अपनी विवेक पराकाष्ठा में राम के वियोग को तो सहती ही हैं, भरत सहित अन्य भाइयों की भी संभाल करती हैं तथा अपने पौत्रों का भी सान्निध्य लाभ प्राप्त कर भगवान राम के स्वधाम प्रस्थान करने पर प्रज्ञा जनों के साथ भगवान की सायुज्य और सालोक्य मुक्ति का भी सुख प्राप्त करती हैं।

प्रकारांतर से समझने पर यही प्रतीत होता है कि ईश्वर का सभी भूतों में वास और इस प्रकार सभी जीवधारियों की ईश्वरता की स्वीकृति परमात्मा को भी परम प्रिय है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण इस भाव की आवश्यकता को अनेकशः निरूपित करते हैं। उन्होंने तो इस भाव की स्वीकृति में अप्रतिम लाभ भी घोषित किया हुआ है–

"अनन्याश्चिन्त्यन्तो मां ये जनाः पर्युपासते
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्।"

(गीता 9/22)

भगवान अप्राप्त की प्राप्ति और प्राप्त की सुरक्षा का बहुत बड़ा आश्वासन यहां उस ज्ञानी भक्त को दे रहे हैं जो उन्हें सर्वत्र देखने की क्षमता उत्पन्न

कर सकता है।

भगवान राम हनुमानजी के किष्किन्धा में मिलने पर उन्हें (भगवान को) स्वतः न पहचान पाने की त्रुटि का परिमार्जन करते हुए उन्हें सहज प्राप्त इस परिपूर्णता की स्थिति का स्मरण कराते हुए भक्ति और ज्ञान की इस समायोजकता को व्याख्यायित भी करते हैं–

"समदरसी मोहि कह सब कोऊ।
सेवक प्रिय अनन्य गति सोऊ।
सो अनन्य जाके असि मति न टरइ हनुमंत
मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत।"

(आरण्यकांड 3)

यहां भगवान राम जहां भक्तों के प्रति अपनी विशेष करुणा के भाव को रेखांकित करते हैं वहीं हनुमान को "अनन्य" कोटि में स्थापित कर अनन्य की सनातन शास्त्रीय परिभाषा को भी भक्ति से संयोजित कर देते हैं। वास्तव में यह ज्ञान का ही बोध है जो एक विवेकी को सर्वत्र प्रभु की उपस्थिति देखने की क्षमता देते हुए न केवल अपने आराध्य अपितु जीव मात्र में उनके दर्शन पाने की शक्ति प्रदान करता है। ऐसा प्रतीत होता है कि अगले ही काण्ड, सुन्दरकाण्ड में जब गोस्वामी तुलसीदास आरम्भ के तीसरे प्रार्थना श्लोक में हनुमानजी को "ज्ञानिनामग्रगण्यम्" कहते हैं, तो वे भगवान राम के द्वारा उन्हें प्रदान की "अनन्यता" की श्रेणी को ही जैसे स्मरण कर रहे हैं।

सुन्दरकाण्ड पर केन्द्रित "तुलसी मानस भारती" के इस विमर्श को मैं इसी बिंदु पर स्थित करते हुए अपनी विनम्र प्रणामांजलि प्रस्तुत कर रहा हूं। गोस्वामी तुलसीदास की भक्ति और ज्ञान के परमादर्श स्वयं हनुमान ही थे। इस आलेख शीर्षक में प्रकट उनकी प्रार्थना इसी आदर्श पर प्रतिष्ठित होने की सदेच्छा है और वास्तव में अपनी भक्ति, विवेक, बुद्धि और ज्ञान की परमावस्था में वे साधु समाज के लिए हनुमानजी की ही तरह सर्वदा समाराध्य ही हैं।

35, ईडन गार्डन, चूनाभट्टी, कोलार रोड, भोपाल 16 (9425079072)

i|c/kdkfj.kh lfefr dk pquko

प्रतिष्ठान के विधान के अनुसार तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश की प्रबंधकारिणी समिति का निश्चित कार्यकाल 5 वर्ष के लिए होता है,। जो 1 जुलाई 2019 में समाप्त होगा।

चुनाव आजीवन सदस्यों की सूची के अनुसार होंगे जो 1 अप्रैल 2019 को संशोधन के बाद प्रकाशित की जाएगी।

वर्तमान सूची निरीक्षण के लिए प्रतिष्ठान कार्यालय में उपलब्ध है। प्रस्तावित संशोधन 1 मार्च 2019 तक प्राप्त किये जाएंगे, जो अप्रैल 2019 की सूची में शामिल होंगे।

ys[k

foHkh"k.k 'kj.kkxfr

Mk- gjiz lkn 'kek

अखिल विस्व यह मोर उपाया। सब पर मोहि बराबर दाया।।
तिन्ह महँ जो परिहरि मद माया। भजै मोहिं मन वच अरु काया।।
पुरुष नपुंसक नारि वा, जीव चराचर कोइ।
सर्वभाव भज कपट तजि, मोहिं परम प्रिय सोइ।।

मा. 7.87

भगवान श्री राम के वचन हैं कि जो कपट छोड़कर सर्वभाव से मेरा भजन करता हैं वह मुझे परम प्रिय हैं। ऐसे ही सर्वभाव से भजते हुए विभीषण भगवान श्री राम की शरण में आते हैं और कहते हैं कि–

नाथ दसानन कर मैं भ्राता। निसिचर बंस जनम सुरत्राता।।

मा. 5.45.7

दशानन का भाई कहकर परिचय देने में कुछ लोगों को आपत्ति होती है क्योंकि पिता के नाम के साथ परिचय देने का नियम है। किंतु यहां दशानन का भाई कहकर परिचय देना अधिक सार्थक लगता है जिसका खुलासा अध्यात्म रामायण से होता है। विभीषण कहते हैं कि मैं आपकी पत्नी का हरण करने वाले रावण का भाई हूँ–

रावणस्यानुजोऽहँ ते दारहर्तुर्विभीषणः

अ.रा.6.3.2

कितना सही परिचय है। निशिचर वंश में जन्म फिर आपके बैरी रावण का भाई जिसके कुल सहित नाश करने का आपने प्रण कर रखा है। फिर भी शरण में आया हूँ क्यों ? सुयश सुनकर। और भगवान उस विभीषण को अपनाते हैं।

विभीषण रावण के कैसे भाई हैं ?सगे, सौतेले ?इसके निश्चयात्मक उत्तर नहीं दिये जा सकते क्योंकि दोनों प्रकार के वर्णन ग्रंथों में मिलते हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने मानस में विमात्र बंधु ही बताया है–

सचिव जो रहा धरम रुचि जासू। भयउ विमात्र बंधु लघु तासू।।

मा.1.176.4

अध्यात्म रामायण, लिंग पुराण तथा कूर्म पुराण में सगा भाई बताया गया है। वह

विश्रवा और कैकसी का पुत्र तथा पुलस्त्य का नाती है।

संतों का यह भी कहना है कि जब सनकादि मुनियों ने भगवान के पार्षद जय–विजय को तीन जन्म तक असुर होने का श्राप दिया तब भगवान ने उनकी मुक्ति हेतु चार अवतार लने की बात कही अतः सनकादि मुनियों ने भी साथ में जन्म लेने का संकल्प लिया। हिरण्याक्ष–हिरण्यकश्यप के समय प्रह्लाद रूप में, रावण कुंभकर्ण के समय विभीषण रूप में और दंतवक्र शिशुपाल के समय सहदेव (जरासंध–पुत्र) रूप में सनकादि मुनियों ने जन्म लिया। अतः इनकी मति सदैव शुद्ध और भगवत् परायण रही। हमेशा अन्याय का विरोध किया। अन्याय से विरत करने का प्रयास किया। अपमान सहकर भी उपकार करना या भला करना चाहा।

अध्यात्म रामायण में (उत्तरकांड सर्ग–एक में) वर्णन है कि जब कैकसी पुत्रकामना से विश्रवा मुनि के पास गई तो मुनि ने कहा कि तू दारुण समय में आई है अतः तेरे पुत्र दो भयंकर राक्षस होंगे। तब कैकसी ने कहा कि मुनिश्रेष्ठ क्या आपके द्वारा भी ऐसे पुत्र होने चाहिए। तब मुनि ने कहा कि उनके पश्चात् तेरे जो पुत्र होगा वह महाबुद्धिमान, परम भगवद् भक्त, श्री सम्पन्न और एकमात्र रामभक्ति में तत्पर होगा।

रावण कुंभकर्ण के बाद (शूर्पणखा के बाद भी) कैकसी ने विभीषण को जन्म दिया। तीनों भाई तपस्या करने गये। ब्रह्मा जी ने दोनों भाइयों को वर देने के बाद विभीषण से वर माँगने को कहा। तब विभीषण ने कहा कि "भगवन्: मेरी बुद्धि सर्वदा निश्चल रूप से धर्म में ही रहे, उसकी कभी किसी अवस्था में अधर्म में रुचि न हो।"

विभीषणोऽपि तँ नत्वा प्रांजलिर्वाक्यमब्रवीत्।
देव मे सर्वदा बुद्धिर्धर्मे तिष्ठतु शाश्वती।
मा रोचयत्वधर्मे मे बुद्धिः सर्वत्र सर्वदा।।

अ.रा.7.2.18

गोस्वामी जी ने भी मानस में लिखा है कि–

गए विभीषण पास पुनि कहेउ पुत्र वर मागु।
तेहिं माँगेउ भगवंत पद, कमल अमल अनुराग।।

मा.1.177

ब्रह्मा जी ने दोनों ही ग्रंथों के अनुसार "तथास्तु" कहा। अध्यात्म रामायण के अनुसार ब्रह्मा जी ने विभीषण को बिना माँगे अमरत्व का वरदान भी दिया।

विभीषण का विवाह गंधर्वराज शैनूष की पुत्री "सरमा" से हो गया। वे रावण कुंभकर्ण के साथ लंका में रहने लगे।

"सीता–हरण" प्रसंग में वे हमेशा रावण को समझाकर सीता जी को लौटाने की बात करते हैं। वाल्मीकि रामायण (6.14.4) के अनुसार वे कहते हैं कि जब तक राम के तीक्ष्णबाण राक्षस वीरों का शिर नहीं काट डालते तब तक आप सीता जी को वापस कर दें:

यावन्न गृह्णंति शिरांसि बाणाः
रामेरिताः राक्षस पुंगवानाम्।
वज्रोपमा वायु समानवेगाः
प्रदीयताम् दाशराथाय मैथिली।।

अध्यात्म रामायण में भी लगभग यही बात कहते हैं–

यावन्न रामस्य शिताः, शिलीमुखा
लंकामभिव्याप्य शिरांसि रक्षसाम्।
छिन्दन्ति तावद्रघुनायकस्य यो,
ताँ जानकी त्वं प्रतिदातुमर्हसि।।

अ.रा. 6.2.24

रामचरित मानस में भी विभीषण जी रावण से निवेदन करते हैं कि–

देहु नाथ प्रभु कहँ वैदेही।

भजहु राम बिनु हेतु सनेही।।
बार–बार पद लागउँ बिनय करउँ दससीस।
परिहरि मान मोह मद भजहु कोसलाधीस।।
मा. 5.39 (क)

मुनि पुलस्त्य निज सिष्य सन कहि पठई यह बात।
तुरत सो मैं प्रभु सन कही पाइ सुअवसर तात।।
मा.05.39 (ख)

विभीषण कितनी विनम्रता एवं प्रामाणिकता से समझाते हैं कि यह बात पुलस्त्य मुनि ने कहलवाई है अर्थात् हमारे दादाजी का यह निर्देश है जो मैं आपसे निवेदन कर रहा हूँ अतः अवश्य पालनीय है। किंतु रावण नहीं सुनता। विभीषण फिर समझाने का प्रयास करते हैं और कहते हैं कि–

तात चरन गहि माँगउ राखहु मोर दुलार।
सीता देहु राम कहुँ, अहित न होइ तुम्हार।।
मा.5–40

किंतु विभीषण की नीति युक्त बात रावण को अच्छी नहीं लगती है और वह विभीषण का अपमान करता है–

ममपुर बसि तपसिन्ह पर प्रीती।
सा मिलु जाइ तिन्हहिं कहु नीती।।
अस कहि कीन्हेसि चरन प्रहारा।
अनुज गहे पद बारहिं बारा।।
मा. 5.11.54

फिर भी विभीषण विनय करते हैं कि–

तुम्ह पितु सरिस भलेहिं मोहिं मारा।
राम भजे हित नाथ तुम्हारा।।
मा.5.41.7.

इसके बाद विभीषण राम की ओर प्रस्थान करते हैं–

सचिव संग लै नभ पथ गयऊ।
सबहि सुनाइ कहत अस भयऊ।।

x x x x

राम सत्य संकल्प प्रभु सभा काल बस तोरि।
मैं रघुवीर सरन अब, जाउं देहु जनि खोरि।।
मा. 5.41

ऐसा कहकर विभीषण रावण के दरबार से निकल आये। फिर सोचने लगे कि अब क्या करूँ। पहले माताजी से मिल लूँ। वे माता के पास गये और पूरा वृतांत बताया। तब माता ने कहा कि भैया! उसके लात मारने से क्या हुआ ?आखिर तो वह तेरा बड़ा भाई ही है। वह प्रथम तो तेरा स्वामी, दूसरे पिता के समान ज्येष्ठ भ्राता और तिस पर भी राक्षस कुल का तिलक है। उसके तो अपमान करने में भी तेरा बड़ा सम्मान है। इस समय क्रोध करने में तो बड़ा भारी दोष है और सहने–समझ लेने में सब प्रकार भलाई है। हाँ, यहां से विमुख होकर राम की शरण चले जाने में थोड़ी सी भलाई अवश्य है। तब विभीषण माता के चरणों में प्रणाम कर चल दिये। उन्हें शुभ शकुन होने लगे। वे सोचने लगे कि मुझे भाई सा व्यवहार कैसे करना चाहिए। इस धर्म संकट में उन्होंने बड़े भाई कुबेर से मिलने का निश्चय किया। कुबेर के पास गये, प्रणाम किया। कुबेर प्रेम से मिले और वहीं शंकर जी मिल गये। शंकर जी ने कहा कि राम की शरण में जा–

तहँई मिले महेस, दियो हित उपदेस,
राम की सरन जाहि, सुदिनु न हेरे।।
गीतावली 5.27

शंकर जी का उपदेश और आशीर्वाद पाकर विभीषण ने उन्हें सिर नवाकर विविध मनोरथ करते हुए राम की ओर चले–

चलेउ हरषि रघुनायक पाहीं।
करत मनोरथ बहु मनमाही।।
देखिहउँ जाइ चरन जल जाता।
अरुन मृदुल सेवक सुखदाता।।
जे पदपरसि तरी रिषि नारी।
दंडक कानन पावन कारी।।

जे पद जनकसुता उर लाए।
कपट कुरंग संग धर धाए।।
हर उर सर सरोज पद जेई।
अहोभाग्य मैं देखिहउँ तेई।।
जिन्ह पायन्ह के पादुकन्हिं भरत रहे मन लाइ।
ते पद आजु विलोकिहउं, इन्ह नयनन्हिं अब जाइ।।
मा.5.42

एहिं निधि करत सप्रेम विचारा।
आयेउ सपदि सिंधु एहि पारा।।

जब विभीषण जी रामदल के पास आ गये तब बन्दरों ने उन्हें देखा और शत्रु रावण का कोई दूत समझा। सुग्रीव जी को सूचित किया। सुग्रीव जी ने राम जी को बताया कि दशानन का भाई आया है। श्रीराम जी ने सुग्रीव जी से पूछा कि क्या किया जाय, तब सुग्रीव जी कहते हैं कि निशाचरों की माया जानी नहीं जाती। हो सकता है कि हमारा भेद लेने आया हो, अतः मेरे मन में इसे बाँधकर रखना चाहिए। श्री राम जी ने कहा कि मित्र! आपने नीति अच्छी बताई है किंतु मेरा प्रण है कि शरणागत की रक्षा करूँ। यदि रावण ने भेद लेने के लिए भी भेजा होगा तो भी डरने की कोई बात नहीं है। संसार में जितने निशाचर हैं लक्ष्मण उन्हें एक निमेष में मार सकते हैं। तो चाहे रावण ने भेद लेने के लिए भेजा हो अथवा वह सभीत शरण में आया हो, दोनों ही स्थितियों में उसे ले आइए—

भेद लेन पठवा दससीसा।
तबहु न कछु भय हानि कपीसा।।
जग महुँ सरन निसाचर जेते।
लछिमनु हनइ निमिष महँ तेते।।
जो सभीत आया सरनाई।
रखिहउँ ताहि प्रान की नाई।।
उभय भाँति तोहि आनहु,
हँसि कह कृपानिकेत।
जय कृपालु कहि कपि चले,
अंगद हनू समेत।।
मा.द. 44

अंगद जी, हनुमान जी एवं अन्य वानर वीर भगवान श्री राम का उक्त निर्देश पाकर विभीषण जी को लेने चले और उन्हें लेकर तथा उन्हें आगे करके भगवान् श्रीराम के पास ले चले। विभीषण जी ने दोनों भाइयों— श्री राम जी एवं लक्ष्मण जी को दूर से देखा जो नेत्रों को आनंद देने वाले थे—

दूरिहिं ते देखे दोउ भ्राता।
नयनानंद दान के दाता।।
बहुरि राम छबि धाम विलोकी।
रहेउ ठुकि एकटक पल रोकी।
भुज प्रलंब कँजारुन लोचन।
स्यामल गात प्रनत भय मोचन।।
सिंध कंध आयत उर सोहा।
आनन अमित मदन मन मोहा।।
नयन वीर पुलकित अतिगाता।
मन धरि धीर कही मृदु बाता।।
नाम दसानन कर मैं भ्राता।
निसिचर बंस जनम सुर त्राता।।
सहज पापप्रिय तामस देहा।
जथा उलूकहिं तम पर नेहा।।
श्रवन सुजसु सुनि आयउँ
प्रभु भँजन भव भीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन,
सरन सुखद रघुवीर।।
मा.5.45

अस कहि करत दंडवत देखा।
तुरत उठे प्रभु हरष विसेषा।।

विभीषण के दीन और विनीत वचन प्रभु को अच्छे लगे, वे उनसे मिले—

दीन बचन सुनि प्रभु मन भावा।

भुज बिसाल गहि हृदय लगावा।।
अनुज सहित मिलि ढिंग बैठारी।
बोले बचन भगत भयहारी।।
कहु लंकेस सहित परिवारा।
कुसल कुठाहर वास तुम्हारा।।
खल मंडली बसहु दिन राती।
सखा अहम निबहै केहिं भाँती।।
मैं जानउँ तुम्हार सब रीती।
अति नय निपुन न भाव अनीती।।

प्रभु श्री राम विभीषण से कुशल पूछते हैं क्योंकि उनका निवास दुष्टों के बीच है, तब विभीषण कहते हैं कि अब आपके चरण देखकर कुशल हैं–

अब पद देखि कुसल रघुराया।
जौ तुम्ह कीन्ह जानि जनदाया।।
तब लागि कुसल न जीव कहँ,
सपनेहुं मन विश्राम।
जब लगि भजत न रामकहँ,
सोक धाम तजि काम।।

मा. 5.46

अहोभाग्य मम अमित अति रामकृपा सुख पुंज।
देखेउँ नयन विरंचि सिव सेव्य जुगल पदकंज।।

मा.5.47

तब भगवान श्री राम ने अपने सिद्धांत का वर्णन करते हुए कहा कि–

तुम्ह सारिखे संत प्रिय मोरे।
धरउँ देह नहिं आन निहोरे।।
सगुन उपासक परहित निरत नीति दृढ़ नेम।।
ते नर प्रान समान मम, जिन्हके द्विज पद प्रेम।।

म.5.48

फिर विभीषण जी ने कहा कि प्रभो पहले हृदय में कछु वासना थी जो अब आपके चरण देखकर मिट गई है। अब आप अपनी पावन भक्ति दीजिए। भगवान ने कहा कि सखा! यद्यपि तुम्हारी इच्छा नहीं है फिर भी मैं तुम्हें लंका का राजा बनाता हूँ और समुद्र का जल बुलाकर अभिषेक कर दिया। गोस्वामी जी कहते हैं कि–

रावन क्रोध अनल निज स्वास समीर प्रचंड।
जरत बिभीषन राखेउ, दीन्हेउ राज अखंड।।

मा.5.49

इस प्रकार विभषण जी श्रीराम के शरण में जाकर "लंकेश" वन गये और श्रीराम की हर प्रकार से सहायता करते रहे। लंका विजय के बाद श्रीराम के साथ अयोध्या गये। श्रीराम के राज्याभिषेक के बाद अयोध्या से लंका आ गये। श्रीराम ने उन्हें कल्पभर राज्य करने के लिए कहा था। ब्रह्माजी ने उन्हें अमर होने का वरदान दिया था। विभीषण जी सप्त चिरंजीवी लोगों में से एक हैं–

अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनूमांश्च विभीषणः।
कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः।।

विभीषण द्वारा रावण पक्ष को छोड़कर श्रीराम के पक्ष में आने के औचित्य अनौचित्य को लेकर तर्क–वितर्क किये जाते हैं। इस पर दो दृष्टियों से विचार किया जा सकता है। (1) रावण पक्ष के लोगों का विचार (2) सामान्य नीतिगत विचार।

जहां तक रावण पक्ष के लोगों के विचार की बात है तो उसे उचित और अनुचित दोनों मानने वाले मत उपलब्ध हैं। जहाँ कुंभकर्ण इसे सही मानता है, वंश एवं देश के लिए अच्छा मानता है। वह कहता है कि वत्स! भगवान राम के चरण का आश्रय पाकर अपने कुल की रक्षा और राक्षसों के कल्याण के लिए तुम चिरकाल तक जीवित रहो–

समालिंग्य च वत्स त्वं जीव राम पदाश्रयात्।
कुल संरक्षणार्थाय राक्षसानां हिताय च।।

अ.रा. से 6.8.14

धन्य धन्य मैं धन्य विभीषन।
भयउ तात निसिचर कुलभूषन।।
बंधु बंस तैं कीन्ह उजागर।

भजेहु राम सोभा सुख सागर।।
वचन कर्म मन कपट तजि,
भजेहु राम रनधीर।
जाहु न निज पर सूझ मोहि
भयउँ काल बस बीर।।

मा.6.64

तो मेघनाद इसे अनुचित मानता है। वह विभीषण से कहता है कि तुम इस लंका पुरी में ही उत्पन्न हुए हो, और इसी में रहकर इतने बड़े हुए हो तथा मेरे पिता के सगे भाई हो, किंतु अब तुमने अपने स्वजनों को छोड़कर शत्रुओं का दासत्व स्वीकार किया है, मैं तुम्हारे पुत्र के समान हूँ, न जाने तुम कैसे मुझसे द्रोह कर रहे हो। अवश्य ही तुम बड़े पापी और दुरात्मा हो—

इहैव जातः संवृद्धः साक्षात् भ्राता पितुर्मम।
यस्त्वं स्वजनंभुत्सृज्य परभृत्यत्वमागतः।।
कथं द्रुह्यसि पुत्राय पापीयानसि दुर्मतिः।

अ.रा. 6.9.23–24

जहां तक सामान्य नीतिगत विचारों की दृष्टि से विचार की बात है तो युद्ध नैतिकता की दृष्टि से यह कहा जाता है कि कुपंथ पर चलने वाले को सगा भाई भी छोड़ देता है— कुपन्थानं तु गच्छन्तं सो दरोऽपि विमुंचति।। इस दृष्टि से कुपथगामी रावण का साथ छोड़ना नीतिगत है, उस हालत में जब वह हित के लिए समझा रहा था तब लात मारकर निकाल दिया गया था। तो निकलना तो था ही, अब राम से मिले या न मिले यह उस विभीषण पर निर्भर था। तो बड़े भाई कुबेर और महादेव शंकर जी का राम के पास जाने के लिए समर्थन था। कुंभकर्ण ने भी बाद में समर्थन नहीं किया। अतः नीतिगत दृष्टि से उचित ही प्रतीत होता है। किंतु एक पक्ष यह भी है कि संकट में भाई का साथ देना चाहिए।

इस प्रकार दोनों पक्षों के समर्थन में तर्क दिये जाते हैं। कुछ भक्ति पक्षीय तर्क, कुछ मानवीय और कुछ राष्ट्रहित संबंधी। मुंडे–मुंडे मतिर्भिन्ना के अनुसार बातें होती हैं। इस संबंध में विष्णु पुराण का एक श्लोक ध्यातव्य है

वस्त्वेक एव दुःखाय सुखायेर्ष्यागमायच।
कोषाय च यतः तस्मात् वस्तु वस्त्वात्मकं कुतः।।

अर्थात् एक ही वस्तु दुःख, सुख, ईर्ष्या और द्वेष और कोप का कारण होती है, व्यक्ति की रुचि मति और स्थिति के अनुसार, तो वस्तु का वस्तुत्व कहां रहा। यही विभीषण के इस कृत्य के औचित्य–अनौचित्य पर लागू होता है।

गोस्वामी तुलसीदास जी के शब्दों में,

कहो, क्यों न विभीषण की बनै ?
गयो छाँड़ि छल सरन रामकी,
जो फल चारि चार–यौजनै।।
मंगलमूल प्रनाम जासु जग,
मूल अमंगल के खनै।
तेहि रघुनाथ हाथ माथे दियो,
को ताकी महिमा भनै।।

गीतावली 5.40

अर्थात् श्रीराम का सिद्धांत है कि "***सर्वभाव भज कपट तजि, मोहिं परम प्रिय सोइ।।***" और विभीषण जी ऐसे ही भाव से आते हैं। अतः श्रीराम उन्हें अपनाते हैं, उनके सिर पर हाथ रखते हैं और लंका का अधिपति बनाते हैं।

एम 21, निराला नगर, भदभदा रोड, भोपाल 462003

ys[k

/kjm ng ufg vku frgkj

fuR;kun JhokLro

राम–कथा "आत्म" कथा है। कथा के प्रवाह में आए पात्रों की अपनी–अपनी व्यथाएँ हैं। राम का सान्निध्य उन्हें व्यथा से मुक्त करके राम की प्रियता से जोड़ देता है। राम की प्रियता प्राप्त करना ही आत्म साक्षात्कार है। यह प्रक्रिया इतनी मधुर और प्रीतिकर है कि इस कथा में किंचित भी रस लेने वाला व्यक्ति आत्म–संवाद तक सहजता से पहुँच जाता है– अपना ही सारा जीवन सहसा मूर्तिवत सामने खड़ा हो जाता है, और फिर शुरू हो जाती है मन की गाँठों के खुलने की एक धीमी किन्तु अनवरत प्रक्रिया। रामकथा में जो पात्र बड़ी सहजता से राम के समक्ष अपने मन को अनावृत्त कर सके हैं उनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण नाम विभीषण का है। विभीषण की आत्म स्वीकृति के सन्दर्भ बड़े गहरे हैं। एकदम सीधी और सरल रेखा खींचना जितना कठिन है उतना ही कठिन आत्म स्वीकार भी है। विभीषण रावणी–तंत्र में अपनी स्थिति परखते हैं– अर्थ और काम का अबाध प्रवाह इस तंत्र की उपलब्धि है (हमारे अपने समय में ही अर्थान्ध और कामांध व्यापारिक साम्राज्यवाद शक्ति के केन्द्र में ठहर सा गया है) विचलित चेतना के इस उपक्रम में महामति विभीषण का यह आत्म स्वीकार हमारे लिये भी कुछ नए अर्थ–संसार की रचना करता है। अपने आपको दशानन रावण का भाई, देवताओं को भय देने वाले निशाचरवंश का बताना, पापप्रिय तामस देहासक्त बताना आदि के पीछे कोई नया रहस्योद्घाटन नहीं हुआ है इतना तो राम के सैन्यदल का एक सामान्य वानर सैनिक भी जानता है तो फिर इसमें नया क्या है ? नयापन इसमें ग्रहण और त्याग के गहन और मार्मिक अन्तर्द्वंन्द्वों के मध्य प्राथमिकता के चयन का है। विभीषण संशय से आकुल जिस परिवेश से घिरे हैं वह रावण के मन में भी है और राम के सैन्य दल में भी है। लेकिन विभीषण और माल्यवान् का पक्ष क्या है ? ये दोनों सीताहरण और हनुमानजी द्वारा लंकादहन के बाद उत्पन्न हुई उस भयभीत जनता के मन की अभिव्यक्ति के प्रतिनिधि हैं जिसका सामना लंका के समाज ने पहले कभी नहीं किया था। रावण अजेय है यह कथन अब लंका के लिये विश्वसनीय नहीं रहा। लेकिन, लंका में ही रावण के पक्षकार सैन्य अधिकारी उसे युद्ध के लिये प्रेरित भी करते हैं। इन परिस्थितियों में विभीषण के विद्रोह को देखें तो यह बहुत असामान्य विद्रोह है। विभीषण पराक्रमी वीर और नीतिज्ञ भी थे। उन्हें यह भली

भाँति पता रहा होगा कि संसार की सामान्य समझ रखने वाले उन्हें कुलद्रोही और राजद्रोही तो कहेंगे ही– उन्हें इतना कलंकित कर दिया जाएगा कि भविष्य में कोई भी माता–पिता अपने बच्चों का नाम तक विभीषण नहीं रखेंगे। ये अब तर्क–वितर्क तो एक तरफ, विभीषण के सत्परामर्श को रावण और उसके पुत्रों ने जिस अपमानजनक तरीके से अस्वीकृत किया– वह क्षण उनके विद्रोह का सबसे प्रबल कारण है। वाल्मीकि रामायण में विभीषण की उक्ति देखें–

रावर्णो नाम दुर्वृत्तो राक्षसो राक्षसेश्वरः
तस्याहमनुजो भ्राता विभीषण इति श्रुतः। 12।

(रावण नाम का जो दुराचारी राक्षस निशाचरों का राजा है, उसी का मैं छोटा भाई हूँ। मेरा नाम विभीषण है।

तमहं हेतुभिर्वाक्यैर्विविधैश्च न्यदर्शयम्
साधु निर्यात्यतां सीता रामायेति पुनः पुनः। 14।

(मैंने उसे भाँति–भाँति के युक्ति संगत वचनों द्वारा बारंबार समझाया कि तुम श्रीरामचन्द्रजी की सेवा में सीता को सादर लौटा दो– इसी में भलाई है।)

सोऽहं परुषितस्तेन दासवच्चावमानितः।
त्यक्त्वा पुत्रांश्च दारांश्च राघवं शरणं गतः।16।

(उसने मुझे बहुत–सी कठोर बातें सुनायीं और दास की भाँति मेरा अपमान किया। इसलिए मैं अपने स्त्री–पुत्रों को वहीं छोड़कर राघव की शरण आया हूँ।) युद्धकाण्ड, सत्रहवाँ सर्ग, गीता प्रेस

अपमान का यह दंश इतना बेधक था कि रावण की राजसभा से सीधे राम के सैन्यदल में विभीषण पहुँच गए। इस अचानक घटी घटना के पीछे किसी चमत्कार की कल्पना का निषेध रावण के लिए प्रयुक्त विशेषण "दुर्वृत्त" यानी दुराचारी से हो जाता है।

विभीषण का यह कदम राम के सैन्यदल में भी प्रथमदृष्ट्या अस्वाभाविक ही माना गया। जाम्बवान जैसे नीतिज्ञ और बुद्धिमान भी सशंकित है–

बद्ध वैराच्च पापाच्च राक्षसेन्द्राद् विभीषणः।
अदेशकाले सम्प्राप्तः सर्वथा शंक्यतामयम्।46।

(राक्षसराज रावण बड़ा पापी है। उसने हमारे साथ वैर बाँध रखा है और यह विभीषण उसी के पास से आ रहा है। वास्तव में न तो इसके आने का यह समय है और न स्थान ही। इसलिये इसके विषय में सब प्रकार से सशंक ही रहना चाहिये।)

राम के सैन्य–दल में हनुमानजी ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति हैं जो विभीषण की नीतिज्ञता से पूर्वतः परिचित है। उन्होंने जाम्बवान और सुग्रीव आदि से मतभिन्नता प्रकट करते हुए स्पष्ट स्वर से कहा–

एष देशश्च कालश्च भवतीह यथा तथा।
पुरुषात् पुरुषं प्राप्य तथा दोषगुणावपि।57।
दौरात्म्यं रावणे दृष्ट्वा विक्रमं च तथा त्वयि।
युक्तमागमनं ह्यत्र सदृशं तस्य बुद्धितः।58।

(उसके यहाँ आने का यही उत्तम देश और काल है यह बात जिस तरह सिद्ध होती है वैसा बता रहा हूँ। विभीषण एक नीच पुरुष के पास से चलकर एक श्रेष्ठ पुरुष के पास आया है। उसने दोनों के गुण और दोषों का भी विवेचन किया है। तत्पश्चात् रावण में दुष्टता और आपमें पराक्रम देख वह रावण को छोड़कर आपके पास आ गया है। इसलिये उसका यहाँ आगमन सर्वथा उचित और उसकी उत्तम बुद्धि के अनुरूप है।)

विभीषण के मन में कहीं न कहीं राज्य पाने की इच्छा भी है, अपमान ने इस इच्छा को बढ़ा ही दिया होगा तथा सुग्रीव के अभिषेक ने विभीषण के मन में राम के उद्योग के प्रति विश्वास भी दृढ़ किया होगा। हनुमान जी ने विभीषण के इस मन को भी परखा–

उद्योगं तव सम्प्रेक्ष्य मिथ्यावृत्तं च रावणम्।
वालिनं च हतं श्रुत्वा सुग्रीवं चाभिषेचितम्।66।

राज्यं प्रार्थयमानस्तु बुद्धिपूर्वमिहागतः।
एतावत तु पुरस्कृत्य युज्यते तस्य संग्रहः।67।

(आपके उद्योग, रावण के मिथ्याचार, बाली के वध और सुग्रीव के राज्याभिषेक का समाचार जान–सुनकर राज्य पाने की इच्छा से यह समझ बूझकर ही यहाँ आपके पास आया है। इन्हीं सब बातों को दृष्टि में रखकर विभीषण का संग्रह करना– उसे अपना लेना मुझे उचित जान पड़ता है।)

रामचरितमानस में विभीषण के इस मानसिक व्यापार का स्वीकार स्वयं उन्हीं के मुख से गोस्वामी जी ने कराया है–

उर कछु प्रथम बासना रही।
प्रभु पद प्रीति सरित सो बही।

(सुन्दरकांड 49–6)

संशय और अविश्वास के गहनतम अंधकार के बीच विभीषण के आत्म स्वीकार को भगवान ने सम्बल दिया। सिर्फ अपनाया ही नहीं बल्कि उनका राज्याभिषेक कर लंका का राजा भी घोषित कर दिया। विभीषण का राज्याभिषेक एक अद्भुत और असामान्य घटनाक्रम है। भय और लोभ से घिरा हुआ किंतु राम की शक्ति और उनके स्वभाव के प्रति आश्वस्त विभीषण के मन की खुलती हुई गाँठें और उसकी यह चरम उपलब्धि हमारे समकालीन समय के लिए भी एक संकेत है। इस समय का सम्भवतः अधिक जटिल और विडम्बनापूर्ण यथार्थ अपने बहुरूपिए परिवेश में "कथा" के जीवन्त प्रवाह में अवरोध पैदा करता है। हम अपनी पतनशील सामाजिक संरचना और इस क्रूर उपभोक्तावादी समय में किंकर्तव्यविमूढ़ से खड़े हैं। स्मृतिहीन तात्कालिकता का दबाव कई तरह की नई उलझनें पैदा कर रहा है। विश्व ग्राम की आभासी दुनिया ने एक ऐसा आत्म–विस्मृत समाज निर्मित किया है जिसमें मनुष्य एक इकाई के रूप में भी अपना वृहत्तर स्वार्थ परिभाषित करने में निरंतर अक्षम होता गया है। जब यही नहीं हो पा रहा तो "राम" जिस तत्व के अधिष्ठान और उसकी सगुण अभिव्यक्ति हैं– उस तत्व से स्नेह कैसे सम्भव होगा।

कथा–प्रवाह में विभीषण ने सबसे पहले अपने मन को हनुमानजी के समक्ष अनावृत्त किया है। गोस्वामीजी ने लिखा–

सुनहु पवनसुत रहनि हमारी।
जिमि दसनन्हि महुँ जीभ बिचारी।
तामस तनु कछु साधन नाहीं।
प्रीति न पद सरोज मन माहीं।

सुन्दरकांड 7/1, 3

विभीषण के मन में अपनी रहनि के प्रति असंतोष है। विभीषण की "रहनि" और हमारे "समकाल" की "रहनि" में अंतर क्या है। कुछ परिकल्पित अथवा पूर्वकथित परम्परा प्राप्त अनुभूतियाँ हैं– जिनमें हम रहना चाहते हैं जिनमें शायद हमारी "मुक्ति" का रास्ता हो सकता है, पर रहना हमें उसी परिवेश में पड़ता है जिसमें हम रहना नहीं चाहते। यह एक अजीब कशमकश है, अद्भुत बेचैनी है–

यह कैसा वक्त है तुमको सुनाना चाहता हूँ मैं।
कहीं कुछ खो रहा है और पाना चाहता हूँ मैं।

–विनय मिश्र (सच और है, पृष्ठ 41)

हमारा समकालीन मन विभीषण का "मन" भी तो नहीं हो पाता। हो जाय तो इस भयावह "क्षति" की अनुभूति हो जाय। भक्ति की काव्यभाषा में आधुनिक काल के एक मनस्वी रामकथा गायक महाकवि वनादास ने उभय प्रबोधक रामायण (1874 ई.) में विभीषण के "मन" को कुछ इस तरह परखा है–

तामस तन साधन रहित अवसि मलिन मन बाम है।
कह बनादास कवनी तरह करि है करुना राम है।52।
नहीं जोग जप जज्ञ नहीं व्रत तीरथ दाना।
नहिं तप नेम अचार संत संगति नहिं जाना।।
पढ़े न बेद पुरान पाठ पूजा नहीं कोई।
नहीं भजन अनुराग जन्मगे बादिहि खोई।।
खल मंडली निवास नित मृतक तुल्य मानहुँ जिये।

कह बनादास तव दरस ते कछु भरोस आवत हिये।53।
—विपिनखंड, पच्चीसवाँ अध्याय।

संशय, विभ्रम, भय और लोभ से भरे परिवेश और समय में विभीषण ने अपना कुंठाहीन मन और मत अविचल भाव से रावण, हनुमान और राम के सामने रखा। यह परम श्रेय का पक्ष है जिसे तथाकथित अंधभक्तों के समाज को अपने आत्मचिंतन के पक्ष में शामिल करना चाहिए। सामाजिकता में व्यवहार पक्ष के आग्रही सज्जन आज तक विभीषण को भ्रातृद्रोही, कुलद्रोही आदि आदि विशेषणों से समझते रहे हैं— समाज की जैसी गति है, उसमें भविष्य में भी ऐसा ही समझने वालों की संख्या अधिक हो सकती है, लेकिन त्वरित प्रतिक्रिया के क्षणों में भी एक सवाल हम अपने से कर सकते हैं, एक बेहद जरूरी सवाल कि हम अपने समय और समाज से संवाद प्रतिसंवाद करते समय कहीं उन्हीं मूल्यों को तो नहीं जी रहे हैं जो रावणी तंत्र की अनिवार्य फलश्रुतियाँ हैं। यह सवाल जितना व्यक्तिगत है उतना ही बेधक भी। हमारे अपने समय में अंधगुरुओं और अंधभक्तों की बेतरतीब बढ़ती हुई तादाद किस "धर्म" का प्रकटीकरण कर रही है। इसलिए कथा प्रवाह में विभीषण के आत्म परिचय के बाद भगवान का प्रतिप्रश्न उतना ही मार्मिक है—

कहु लंकेस सहित परिवारा।
कुसल कुठाहर बास तुम्हारा।।
खल मंडली बसहु दिन राती।
सखा धरम निबहइ केहि भाँती।।

सुंदरकांड 4.6.

"धर्म" के निर्वाह की चिंता उभय प्रबोधक रामायण में भी है—

तात कहौ निबहौ केहि भाँति से
तौ सब संग अतीव कुवासा।
दुष्ट के संग से नर्क भला
विगरो मन नित्य लहै न प्रकासा।।

—विपिन खंड उ.प्र. रा.

विभीषण और भगवान के संवाद में "धर्म" के प्रति यह चिंता सम्प्रदाय निष्ठ चिंतन को प्रश्नांकित करती है। विगत हजार वर्षों के कालखण्ड में भक्तिकाल तक आते—आते रामकथा में यह प्रसंग जुड़ा है। और, भक्ति साहित्य में इसकी शुरूआत होती है महाप्रभु वल्लभाचार्य के कृष्णाश्रय स्तोत्र से। जयदेव के कृष्णलीला गायन और वल्लभ की कृष्णभक्ति में एक अंतर महसूस किया जा सकता है। गीत गोविन्द जहाँ माधुर्य प्रधान है वहीं कृष्णाश्रय स्तोत्र में समकालीन समय मुखर है। वल्लभ कहते हैं—

सर्वमार्गेषु नष्टेषु कलौच खलधर्मिणि।
पाषण्डप्रचुरे लोके कृष्ण एव गतिर्मम।।1।

"धर्म" की तात्विक उपलब्धि, अनुभूति और अभिव्यक्ति के सभी मार्ग नष्ट हो गये हैं— "कलि" यानी समकालीन समय अंतर्दुष्ट हो गया है, इस कारण वह सत्कार्य में बाधक है तथा आम जनता में पाषण्ड प्रचुर मात्रा में फैल गया है ऐसी विकट अवस्था में "कृष्ण" की स्मृति के अलावा और कोई रास्ता नहीं। गोस्वामी जी कहते हैं— बरु भल बास नरक कर ताता। दुष्ट संग जनि देइ विधाता। विधाता से यह माँग तो उचित ही है लेकिन गोस्वामी जी जानते हैं कि इस भयानक समय में दुष्टता से सामना तो होगा ही— समय का अन्तर्दुष्ट स्वभाव सर्वत्र मुखर हो रहा है— कभी राजा के रूप में, कभी उनके चाटुकार सलाहकारों में, कभी उनके रक्षक सिपाहियों में और खतरा तो यहाँ तक है कि तमाम साधु संतों में भी कालनेमि प्रवेश कर गया है। इस प्रकार के डरावने समय में सबसे अधिक खतरा तो "गृहस्थों" पर है। "भक्ति" के तत्व का एक बड़ा भारी कारोबार "गृहस्थी" बचाने की चिंता से अनुस्यूत है क्योंकि गृहस्थाश्रम ही सारी आश्रम व्यवस्थाओं का पोषक है।

"धर्म" के निर्वाह की समस्त साम्प्रदायिक प्रणालियों को संकटग्रस्त देखकर वल्लभ और गोस्वामी जी जैसे संतों ने "भक्ति" के तत्व का अनुसंधान किया। यह अनुसंधान मोह, ममता, राग, द्वेष और लोभादि विरोधी भावों का तिरस्कार नहीं करता। मनुष्य की आसक्तियाँ ही उसका साधन हैं— यह क्रांतदर्शी विचार भक्ति साहित्य में संभवतः पहली बार आया— इनका निषेध नहीं, बल्कि इनसे निरंतर संवाद और फिर संयोजन। इस संयोजन का तरीका भगवान ने विभीषण को बताया— यह तरीका हमारे अपने समकालीन समय की भयावह ओर अत्यंत विपरीत त्रासद परिस्थितियों में भी उपयुक्त है— भगवान कहते हैं—

जननी जनक बंधु सुंत दारा।
तनु धनु भवन सुहृद परिवारा।।
सब कै ममता ताग बटोरी।
मम पद मनहिं बांध बरि डोरी।।

माता, पिता, भाई, संतान, पत्नी, शरीर, धन, भवन और सुहृदों यानी मित्रों का संग और परिवार— ये दस आसक्तियाँ ही किसी व्यक्ति के जीवन की प्रायः प्राथमिक और अंतिम आसक्तियाँ हैं। उसके चिंतन और कर्म के केन्द्र में हैं। विभीषण के समस्त चिंतन का मर्म भी यही है—

परित्यक्ता मया लंका मित्राणि च धनानि च।
भवद्गतं हि मे राज्यं जीवितं च सुखानि च।
युद्धकांड : 19/5

(अपने सभी मित्र, धन और लंकापुरी को मैं छोड़ आया हूँ। अब मेरा राज्य, जीवन और सुख सब आपके ही अधीन है।)

लंका छोड़ते समय और राम की शरण में जाने का निश्चय कर जाते समय विभीषण के मन में अपने "मन" को लेकर कोई शंका और दुविधा नहीं है। यह दुविधा भी नहीं कि राम कहीं अस्वीकार कर दें तो फिर कौनसा पथ होगा ? भगवान की सलाहकार मंडली में प्रायः सभी ने और विशेषकर सुग्रीव ने तो विभीषण के इस "आगमन" का विरोध ही किया था— बहुत प्रबल और मुखर विरोध। वाल्मीकि रामायण में भगवान की सलाहकार मंडली का विमर्श अद्भुत है। विभीषण के मन की निर्द्वन्द्वता को समझा हनुमान जी ने। सबसे अधिक समझा स्वयं भगवान ने। राम की शरण में जाना "शत्रु" की शरण में जाना नहीं है— यह विभीषण का मन जानता था। विभीषण को अपनी शरण में लेना और उसे मित्र का दर्जा देना किसी "शत्रु" को स्वीकार करना नहीं है— यह भगवन का अभिमत है। शत्रुभाव से कोई राम की शरण में जा ही नहीं सकता। प्रबल आसक्तियाँ—जिनका अनुभव विभीषण ने किया—जिनमें हमारा समकालीन मन विमर्श करना चाहता है—शत्रु नहीं है। उनके सम्पूर्ण ममत्व को एकत्र कर, अपने समयग्रस्त अंतर्द्वन्द्व से उबरकर, उन्हें राम के चरणों से बाँध देता है। यह बन्धन अपने अन्तर्द्वन्द्व, अपनी समयग्रस्तता और अपने भयावह परिवेश से मुक्ति का अवसर है। इन्हीं आसक्तियों में ठीक से रमे हैं तो राम हैं। यह एक प्रबल आश्वस्ति है। राम की शरण में जाना किसी "अन्य" की शरण में जाना नहीं है— अपने ही "आत्मबोध" की शरण में जाना है। "प्रभु" यही सिखाते हैं और कहते हैं—

तुम्ह सारिखें संत प्रिय मोरे।
धरउँ देह नहिं आन निहौरे।

भगवान का यह संकल्प हमारे समय को प्राप्त सबसे बड़ी आश्वस्ति है।

म.सं. 785 उत्तरी जैदपुर, पो. वशारतपुर, गोरखपुर—273004

ys[k

lhrk dh [kkst esa foHkh"k.k dk ;ksxnku

Mk- xxkiky lkn cjlS;k

सुन्दरकांड में सीता की खोज मुख्य लक्ष्य है। सुग्रीव द्वारा सीता की खोज में अपनी कपि सेना को रवाना करते समय यही निर्देश दिया था। साथ ही चेतावनी भी दी थी कि यदि समय सीमा में सीता की खोज बिना लौटे तो मेरे द्वारा दंडित किये जाओगे –

जनकसुता कहुँ खोजहु जाई। मास दिवस महँ आएहु भाई।
अवधि मेटि जो बिनु सुधि पाएँ। आवइ बनिहि सो मोहि मराएँ।

दंड़ भी ऐसा–वैसा साधारण नहीं, सीधा मृत्युदंड।

सब बंदरों ने भगवान राम को प्रणाम कर प्रस्थान किया। सबसे अंत में हनुमान ने प्रणाम किया। तब श्री राम ने हनुमान को अपना सेवक जानकर अपने हाथ की मुद्रिका सीता जी तक पहुँचाने के लिए दी और निर्देशित किया कि तुम सीता से मेरी क्षमता और वियोग की मेरी दशा की चर्चा करके भली प्रकार समझा कर शीघ्र वापस आना–

कर मुद्रिका दीन्हि जनजानी।
बहु प्रकार सीतहि समझाएहु।
कहि बल बिरह बेगि तुम्ह आएहु।।

राम जी ने भी सीता से भेंटकर समाचार लाने का निर्देश हनुमान को दिया था। उधर जब समुद्र के किनारे पहुंच कर सभी वानर समुद्र पार जाने में संशयग्रस्त थे तब जामवंत के कहने पर हनुमान पार जाने को प्रस्तुत हुए और जामवंत से पूछा– मुझे क्या करना है ? जामवंत ने भी केवल सीता जी का समाचर लाने की बात कही–

एतना करहु तात तुम जाई। सीतहिं देखि कहहु सुधि आई।

हनुमान भगवान राम के परम भक्त, बल–बुद्धि–विज्ञान निधान हैं जिसका परिचय उन्होंने समुद्र पार करते समय आई बाधाओं को बुद्धि विवेक के बल से पराजित करके या मार करके दिया।

सबसे बड़ा संकट और समस्या लंका जैसे दुर्गम किले में प्रवेश करके सीता तक

पहुँचना है। एक तो लंका अत्यंत दुर्गम गढ़ था ही, ऊपर से एक एक बलिष्ठ और दुर्धर्ष योद्धा उसकी रक्षा में तैनात थे। यही नहीं, खुफिया तंत्र भी रावण का अत्यन्त चमत्कारी था। हनुमान तो परिस्थिति के अनुरूप कार्य करने में सक्षम थे। सुरसा से विजय पाने के लिए विशाल रूप धारण किया तो लंका प्रवेश के लिए उन्होंने मच्छर का लघु रूप बनाया ताकि कोई देख या पहचान न पाये। मसक समान रूप कपि धरी। लंका की दुर्गमता और रक्षा व्यवस्था का चित्रण तुलसीदास ने सुन्दरकांड में किया है।

मसक रूप धारी हनुमान को लंकिनी नामक निश्चरी ने पकड़ लिया और कहा मैं यहाँ की गुप्तचर रक्षिका हूँ। मेरा कार्य ही है चोरों को पकड़कर खाना–

नाम लंकिनी एक निसिचरी।
सो कह चलेसि मोहि निंदरी।
जानेहि नाहिं मरमु सठ मोरा।
मोर अहार जहाँ लगि चोरा।

हनुमान ने मुष्टि प्रहार कर उसका रूपान्तरण कर दिया।

अब समस्या थी कि इतनी जटिल सुरक्षित लंका में सीता का पता लगाकर मिलना। हनुमान को कोई रास्ता सूझ नहीं रहा था। तमाम स्थानों पर जाकर तथा रावण के महल में पहुंचकर खोज की किन्तु सीता कहीं दिखाई नहीं पड़ी। उसी समय उनकी दृष्टि ऐसे भवन पर पड़ी जहां राम के आयुधों के चिह्न अंकित थे। उसी समय विभीषण जागकर राम नाम का उच्चारण करते हुए उठे। हनुमान को सहारा मिला। सोचा ऐसे सज्जन व्यक्ति से पहचान करने में कोई हानि नहीं, बल्कि काम बन सकता हैं अतः बिप्र रूप धारण कर विभीषण से मुलाकात की। परस्पर परिचय के साथ हनुमान ने अपनी सारी कथा सुनाकर अपने आने का उद्देश्य बताया–

तब हनुमन्त कहा सुनु भ्राता।
देखी चहउँ जानकी माता।

यह सुनकर विभीषण ने न केवल उस स्थान की जानकारी दी जहाँ रावण ने जानकी को रखा था अपितु वह जुगुति (उपाय) भी बतायी जिससे अशोक वाटिका के उस स्थल तक पहुँचा जा सकता था जहाँ इस समय जानकी थी– ***"जुगुति बिभीषण सकल सुनाई।'*** वहाँ पहुंचकर जानकी जी की दीन दशा देखकर हनुमान जी को गहन दुख हुआ– ***"परम दुखी भा पवनसुत देखि जानकी दीन।'*** उसी समय हनुमान ने वह दृश्य भी देखा जब रावण ने जानकी को साम–दाम–दण्ड–भेद से लुभाने तथा न मानने पर मारने की धमकी दी।"

उसी समय त्रिजटा नाम की राम भक्त राक्षसी ने अपना सपना सुनाकर मानो हनुमान के सामने आगे की सारी योजना को सामने रख दिया–

सबन्हौ बोलि सुनाएसि सपना।
सीतहि सेइ करहु हित अपना।
सपनें बानर लंका जारी।
जातुधान सेना सब मरीं
खर आरूढ़ नगन दससीसा।
मुंडित सिर खंडित भुज बीसा।
एहि बिधि सो दच्छिन दिसि जाई।
लंका मनहुँ विभीषन पाई।
नगर फिरी रघुबीर दोहाई।
तब प्रभु सीता बोलि पठाई।

हनुमान जी ने भगवान राम के आदेशानुसार अवसर पाकर मुद्रिका उन तक पहुंचाने के बाद उनसे प्रत्यक्ष में भेंट करके अपना परिचय दिया– ***"राम दूत मैं मात जानकी। सत्य सपथ करुनानिधान की। यह मुद्रिका मातु मैं आनी।***

दीन्ह राम तुम्ह कॅंहि सहिदानी।" इसके साथ ही भगवान के कहे अनुसार उनके बल की जानकारी, विरहावस्था का ज्ञान कराया। तदुपरांत की सारी कथा मानो त्रिजटा के स्वप्नानुसार है। बन उजारने तथा अक्षयकुमार के मारने पर मेघनाद ने उन्हें बाँधकर रावण के समक्ष प्रस्तुत किया। बातों–बातों में हनुमान की अपमानजनक बातों से क्रुद्ध होकर अपने योद्धाओं को हनुमान को मारने का आदेश दिया। उस समय भी विभीषन ने आकर हनुमान के प्राणों की रक्षा की। विभीषन ने दूत को मारना अनीतिकारक बताकर कोई दूसरा दंड देने को कहा– *"नीति विरोध न मारिअ दूता। आन दंड कछु करिअ गोसाई।"* तत्पश्चात हनुमान की पूँछ में जो आग लगाई तो सारी लंका जलकर छार–छार हो गई। अंत में भगवती सीता से चूड़ामणि सहित आशीर्वाद लेकर हनुमान वानरों के पास आये और सीता जी से भेंट तथा लंका यात्रा का सभी समाचार प्रभु राम को सुनाया –

जनक सुतहिं समुझाइ करि बहु बिधि धीरज दीन्ह।
चरन कमल सिरुनाइ कपि गवनु राम पहिं कीन्ह।

x x x x

चलत मोहि चूड़ामनि दीन्ही।
रघुपति हृदय लाइ सोई लीन्ही।

x x x x

सुनु कपि तोहिं समान उपकारी।
नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी।

हनुमान ने सारा वृत्तान्त सुनाकर सारी सफलता का श्रेय प्रभु कृपा को दिया।

इस प्रकार सीता की खोज की सारी सफलता का श्रेय प्रभु राम की दया पर तो है ही हनुमान के बल बुद्धि विवेक के साथ विभीषण के योगदान को नहीं भुलाया जा सकता। यदि उन्होंने सीता का ठिकाना और उन तक पहुँचने की युक्ति न बताई होती तथा रावण के मृत्युदंड के आदेश को न रोका होता तो कुछ भी अनर्थ हो सकता था। अतः हमारी दृष्टि में विभीषण का सहयोग अत्यंत महत्वपूर्ण है।

ए–7, फारचून पार्क, जी–3, गुलमोहर, भोपाल (म.प्र.) मो.: 9425320641

" सीता की खोज की सारी सफलता का श्रेय प्रभु राम की दया पर तो है ही हनुमान के बल–बुद्धि–विवेक के साथ विभीषण के योगदान को नहीं भुलाया जा सकता।"

l|njdk.M dk r|yukRed foopu

xt+ysa

nk x t y

f t rUn d ekj f r okjh

jke dk egRo

राम जीवन का अलौकिक तत्व है,
राम का तो नाम ही अमरत्व है।
राम है यदि पास तो सब कुछ यहीं,
राम के बिन आदमी निःसत्व है।
राम ही आधार हैं ब्रह्माण्ड के,
राम से ही प्राणियों का स्वत्व है।
राम हैं तो सृष्टि है, संसार है,
राम ही नारीत्व है, पुरुषत्व है।
राम संचालक जगत के हैं सदा,
राम सद्‌गुण, सत्य ही रामत्व हैं।

jke dk vkn'k

राम का आदर्श ही उत्कर्ष है,
अनुसरण में निरत भारतवर्ष है।
स्वार्थ को छोड़ा सदा श्रीराम ने,
दीन-दुखियों को दिया नित हर्ष है।
मनुष्यता के पक्ष में हैं राम जी,
प्राणियों का दुख-हरण आदर्श है।
कष्ट सहने से बड़ा तप है कहाँ,
कर न पाया भोग इनका स्पर्श है।
त्याग की तो मूर्ति हैं श्रीराम जी,
और जीवन दनुज से संघर्ष है।

रंभा देवी कुंज, रानीमहल रोड पुरानी बस्ती, कोरबा (छ.ग.) 495678

ys[k

^lnjdkM* dk vkjHk % f=&vk;keh n'ku

ikpk;Z Mk- fo'okl ikVhy

रामायण का सप्तकांडात्मक अवतरण मानव के लिए भक्ति–साधना की एक नव्य परिणति एवं मध्य जागरण का मंगल गी है। इन सात कांडों में सर्वाधिक मंगलमय एवं साधना के लिए उपर्युक्त कौनसा कांड है यह कहना विद्वान तथा साधक दोनों के लिए समान रूप से कठिन विषय है लेकिन सर्वसामान्य जन–मानस के लिए अतीव सुंदर एवं हृदयस्पर्शी कांड निश्चित ही सुंदरकांड है। क्या कारण है इसका ? इसके मूल में कौनसी रहस्यमयी भूमिका का संकेत है यह देखना–परखना अपने आप में एक मनोरम विषय है। अध्ययन के लिए कवि वाल्मीकि, गोस्वामी तुलसीदास जी एवं मराठी भाषी संत एकनाथ जी का विचार यहाँ किया जा रहा है। तीन भाषाएँ, तीन भूमियाँ एवं तीन भूमिकाओं वाले ये रामभक्त इस विषय को किस प्रकार से देखते हैं यह जानना बहुत रोमांचक है।

वाल्मीकि रामायण के सुंदर कांड का प्रथम सर्ग अद्‌भुत है। हनुमान जी के द्वारा सागर लंघन, मेनाक के द्वारा उनका स्वागत, उनकी सुरसा पर विजय, सिंहिका वध कर हनुमान जी का सागर पार हो जाना इसके विषय हैं। हनुमान जी लंका की शोभा को देख रहे हैं। आरंभ होता है–

ततो रावणनीतायाः सीतायाः शत्रुकर्षणः।
इयेष पदमन्वेष्टुं चारणाचरिते पथि।।1।।

अर्थात्– तदनंतर शत्रुओं का संहार करने वाले हनुमान जी ने रावण द्वारा हरी गई सीता जी के निवास–स्थान का पता लगाने के लिए उस आकाश मार्ग से जाने का विचार किया जिस पर चारण (देवता विशेष) विचरा करते हैं।

वाल्मीकि जी के सुंदरकांड का आरंभ अनेक रहस्यों को उद्‌घाटित करता है। अर्थों की मनोरम विधियों की यात्रा कराता है। सीता माता की खोज यह लक्ष्य है। रावण के द्वारा सीता जी का अपहरण हुआ है। हनुमान जी आकाश मार्ग से यात्रा करने की सोच रहे हैं। आकाश मार्ग चारणों के विचरण का मार्ग है। यह आरंभ सूत्र है सुंदर कांड का। सीता जी की खोज यह प्रमुख विषय है।

हनुमान जी सागर उल्लंघन के लिए सिद्ध हैं। कवि कहते हैं "समुदग्रशिरोग्रीवा" उन्नत मस्तक एवं ऊँची ग्रीवा एकाग्रता की परमावधि है इस दृश्य में। महेंद्र पर्वत

पर खड़े हनुमान जी आकाश मार्ग से सागर का उल्लंघन करना चाहते हैं। यह नितांत सुंदर दृश्य सुंदरकांड का आरंभिक दृश्य है। कवि वाल्मीकि जी को सुंदरकांड की आंरभ यात्रा प्रचंड प्रतापी लगी। तुलसीदास जी इसे भक्ति की परमावधि मानते हैं। एकनाथ जी यह राम नाम महिमा का प्रकट प्रताप मानते हैं। त्रि–आयामी दृश्यबंध के समान सूत्र हैं। सीता माता की खोज, हनुमान जी का अतुलित बलशाली रूप और राम कार्य की सिद्धि। इस दृश्य बंध में तीनों कवियों को सीता जी की खोज यह समान सूत्र लगता है। तुलसीदास जी एवं एकनाथ जी इस कथा के निमित्त सर्वांतर्यामी परमोदार ईश्वर से निर्भर भक्ति की याचना करते हैं।

तुलसीदास जी ने "रामचरितमानस" के आरंभिक मंगलाचरण के साथ प्रत्येक कांड के आरंभ में एक स्वतंत्र मंगलाचरण की योजना की है। इस परंपरा में सुंदरकांड की अपनी सुंदरता एवं विशेषता है। वे मंगलमूर्ति मारुतनंदन का स्मरण करते हैं। वायुपुत्र हनुमान जी सकल अमंगल के मूल के निकंदनकर्ता है। वे संतों का हित चाहने वाले हैं। उनके हृदय में अवधबिहारी का वास है। संस्कृत परंपरा का वहन करते हुए आरंभिक दो श्लोक राम जी की वंदना के हैं। जबकि वाल्मीकि रामायण की कथा हनुमान जी की चर्चा से सीधे आरंभ हो जाती है। तुलसीदास जी के समान मराठी भाषी संत एकनाथ जी के "भावार्थ रामायण" के सुंदरकांड का आरंभ भी राम वंदना से हुआ है।

तुलसीदास जी के मंगलाचरण के दो श्लोक हैं–

शांतं शाश्वतमप्रमेयमनघं गीर्वाण शांतिप्रदम्
ब्रह्माशंभुफणीन्द्रसेव्यमनीशं वेदान्तवेद्यं विंभुम्।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं
हरिं वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूड़मणिम्।।
नान्यां स्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये
सत्यं वदामि च भवानखिलान्तरात्मा।
भक्तिं प्रयच्छ रघुपुंगव निर्भरां मे
कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च।।

गोरखपुर से स्वतंत्र काशी नागरी प्रचारिणी सभा की प्रति में "गीर्वाण" के स्थान पर "निर्वाण" का प्रयोग मिलता है। निर्वाण अर्थात् मोक्ष और शांति या मोक्ष रूपी शांति प्रदान करने वाले।

इन दो श्लोकों का विचार करते हुए आश्चर्यकारी तथ्य हाथ लगता है कि "भक्तिं प्रयच्छ" यह इन मंत्रों का बीज है।

राम की वंदना की गई है। राम शांत, सनातन, प्रमाण रहित, निष्पाप, देवताओं को शांति प्रदान करने वाले हैं। ब्रह्मा, शंभु और शेष जी द्वारा निरंतर सेवित हैं। हरि, करुणा के खान, राजाओं में शिरोमणि, रघुकुल श्रेष्ठ राम माया अर्थात् इच्छा से मनुष्य रूप धारण किए हुए हैं।

हे रघुनाथ जी, मैं सत्य वचन कहता हूँ और फिर आप सबके अंतरात्मा हो, सर्वांतर्यामी होने के कारण सबके हृदयों को जानने वाले हो– हे रघुकुलश्रेष्ठ मेरे हृदय में और कोई इच्छा नहीं है। एक तो मेरे हृदय को षड् विकारों से रहित कीजिए और अपनी परिपूर्ण भक्ति दीजिए।

शांत विशेष ऐश्वर्य को सूचित करता है। ब्रह्मा, शंभु और शेष से सेवित राम हैं। ये तीनों तीन लोक के क्रमशः ब्रह्मलोक, मर्त्यलोक एवं पाताल लोक के प्रतिनिधि हैं। ब्रह्मा जी, जांबवान, शिव जी, हनुमान एवं शेष जी लक्ष्मण जी के रूप में सेवारत हैं। शांत, शाश्वत और अप्रमेय एक–दूसरे को पुष्ट करने वाले भाव हैं। अप्रमेय अपरिहार्यतः अनघ अर्थात् पापरहित होगा और निष्पाप ही ब्रह्मादि द्वारा निरंतर सेव्यमान होगा। राम ओपनिषदिक पुरुष होने के कारण वेदान्तवेद्य हैं। स्वयंसिद्ध होने के कारण अप्रमेय और पाप–पुण्यातीत होने के कारण अनघ हैं।

पंडितों ने इस श्लोक को लंका कांड के प्रथम श्लोक से तुलनीय माना है। सुंदर कांड के सुंदर विशेषण के संदर्भ में भी पंडितों की विविध रायें हैं। प्रधानता से तीन मतों का विचार करते हैं। पंडित श्री रामकुमार जी बताते हैं कि त्रिकुटाचल के तीन शिखर हैं। एक "नील" जिस पर लंका बसी है। दूसरा "सुबल" जो विस्तारित मैदान है। तीसरा शिखर है "सुंदर" जहाँ अशोक वाटिका है। मानसतत्वसुधार्णवी व्याख्या में कहा गया है कि वहाँ वर्णित सभी कुछ सुंदर ही सुंदर है। पंडित श्री रामदयाल जी मजुमदार कहते हैं कि अध्यात्म रामायण के अंतिम श्लोक के प्रथम चरण के अनुसार रामायण "जनमनोहर आदिकाव्य" है। महाभारत का विराट पर्व जिस प्रकार से सर्वश्रेष्ठ अंश है वैसे ही सुंदर कांड रामायण का सर्वांगसुंदर अंश है। इस कांड के दो प्रमुख चरित्र है–– जानकी जी और हनुमान जी। सुंदर शब्द की व्युत्पत्ति है–– सु द्रियते दृङ् आदरे अर्थात् सुंदर बहुत आदरणीय चित्त को द्रवित करने वाला होता है। एक दूसरी व्युत्पत्ति है–– "यद्वा सु उनत्ति, चित्तं द्रवीकरोति। उन्दी क्लेदने।" इस प्रकार से सुंदर जिससे चित्त द्रवित हो जाए।

दूसरे श्लोक में अंतर्यामी रघुनाथ जी से परिपूर्ण भक्ति माँगी गई है। निर्भर भक्ति याने परिपूर्ण, अविचल और अतिशय, दूसरा अर्थ है ऐसी भक्ति जिसमें मनुष्य अपनी देह और आत्मा यात्रा के निर्वाह का भार राम के चरणारविंदों में समर्पित कर निश्चिंत हो जाता है। भक्ति की याचना के साथ कामादि से रक्षा की मांग भी की गई है। "भक्तिं प्रयच्छ" योग तो "कामादिदोषरहितं कुरु" क्षेम है।

यह कम आश्चर्यकारी नहीं है कि "भक्तिं प्रयच्छ" कहकर "नान्या स्पृहा" कहा है। बालकांड में स्वान्तःस्थ ईश्वर के दर्शन के लिए स्वान्तः सुख चाहिए ऐसा कहा गया है। राम जी की वंदना के बाद हनुमान जी का स्मरण आया है। इस श्लोक में हनुमान जी के सात विशेषण हैं जिनमें से अतुलितबलधामं, दनुजवनकृशानुं, ज्ञानिनामग्रगण्यम् तथा सकलगुणनिधानं ये विशेषण श्री राम–लक्ष्मण जी के भी हैं। ये विशेषण अन्यत्र शिव स्तवन में तथा प्रायः मंगलाचरण में ही प्रयुक्त हुए हैं। रावण और सुरसा ने भी हनुमान जी के बल का वर्णन किया है। वंदना की है।

मराठी के संत एकनाथ जी के जन्म काल के विषय में भी "इदंमित्थं" नहीं कहा जा सकता है। वे भी अभुक्त नक्षत्र में जन्मे। जन्म के साथ ही माता–पिता का छत्र उड़ गया। एकनाथ जी ने मुख्यतः रामायण एवं भागवत की रचना की। अन्य रचनाओं में हस्तामलक, स्वात्मसुख, शुकाष्टक, आनंद लहरी, चिरंजीव पद के समान आध्यात्मिक रचनाएँ पाई जाती हैं। कुछ पौराणिक आख्यानों के साथ संत चरित्र, पद तथा जनकंठ में शोभित रचनाओं का निर्माण किया है। प्रचंड एवं प्रसन्न काव्य रचना उनकी विशेषता है। अपने जीवन के उत्तर काल में उन्होंने "भावार्थ रामायण" की रचना की। पाँच कांड पूर्ण कर छठे कांड के चवालीस अध्याय लिखे। उनके पश्चात् उनके गायबा नामक शिष्य ने छठे कांड के अड़तालीस अध्याय तथा उत्तर कांड की रचना की। इस प्रकार से रामायण के कुल 297 अध्यायों में से एकनाथ जी ने आरंभिक 172 अध्याय तथा शेष 125 अध्याय उनके शिष्य गावबा ने पूर्ण किए। एकनाथ जी के रामायण पर वाल्मीकि रामायण, अध्यात्मक रामायण, क्रौंच रामायण, वासिष्ठयोग, शिव रामायण, कालिका खंड का प्रभाव है। रामकथा गान करते हुए उनकी अध्यात्म दृष्टि बराबर कायम रही है।

एकनाथ जी का "भावार्थ रामायण" आर्त और जिज्ञासु जनों के लिए है। यह प्रासादिक महाकाव्य मराठी शारदा के गले के कंठहार की कौस्तुभ मणि

है। प्रस्तुत रामायण में गंगा का ज्ञान प्रवाह, यमुना का भावमाधुर्य एवं सरस्वती का मांगल्य निधान है। शुद्ध, सात्विक एवं अनिवर्चनीय काव्य कृति मराठी जनों के लिए अमृत का अनुभव है। महाकाव्य की भाषा सुलभ, प्रसाद गुणयुक्त है। मानवीय भाव–भावना, विचार तथा कल्पना का भावगम्य वर्णन यहां मिलता है।

एकनाथ जी का जीवन और काव्य एकाकार है। स्वच्छ निष्कलंक चरित्र, मूर्तिमान विवेक, सहृदय संपन्न औदार्य, दिव्य ज्ञान दृष्टि, अनन्य भक्ति निष्ठा, सत्यान्वेषी वृत्ति, प्रतिमानविषयक करुणा, प्रपंच–परमार्थ को एकाकार करने की सामर्थ्य, लोकसंग्राहक भूमिका, अधर्म निकंदन की प्रतिज्ञा, प्रासादिक भावपूर्ण निवेदन इस गुण समुच्चय के कारण एकनाथ वंदनीय हैं।

एकनाथ जी के सुंदर कांड का प्रारंभ–

रामं लक्ष्मणपूर्वजं रघुवरं सीतापतिं सुंदरम्।
काकुत्स्थं करुणार्णवं गुणनिधिं विप्रप्रियं धार्मिकम्।
राजेंद्रं सत्यसंघं दशरथतनयं श्यामलं श्याममूर्तिम्।
वंदे लोकाभिरामं रघुकुलतिलकं राघवं रावणारिम्।।

यहाँ सीता पति सुंदर रघुवर की प्रार्थना है। वह करुणा सागर, गुणनिधि, विप्रप्रिय एवं धार्मिक हैं। सत्यसंघ, दशरथ तनय, श्यामल, शांतमूर्ति, लोकाभिराम, रघुतिलक, राघव, रावणारि की वंदना है। वे राम नाम महात्म्य में सुंदरकांड का आरंभ करते हैं –

श्रीरामे पावन कथा। श्रीरामे पावन वक्ता।
श्री रामे पावन श्रोता। श्री राम स्वतः ग्रंथार्थ
श्रीरामे धन्य धरणी। श्रीरामे धन्य करणी।
श्रीरामे धन्य वाणी। जे रामायणी विनटली
श्रीरामे पावन संसार। श्रीरामे पावन चराचर।
श्रीरामे पावन नर। जे तत्पर नित्य स्मरती
रामनामे शुद्ध साधन। रामनाम शुद्ध ज्ञान।
रामनामे सुटे बंधन। नाम पावन सर्वार्थी
रामनामे सरते तोंड। रामनामे सरले किष्किंधाकांड।
आता उगवले सुंदरकांड। अति प्रचंड प्रतापी
पहा रामनामाची थोरी। श्रीराम पाहे सर्वांतरी।
रामनाथ सत्वर उच्चारी। तेणे भवसागरी तरतील।

एकनाथ कृत सुंदर कांड का आरंभ श्रीराम नाम महात्म्य से होता है। श्रीराम की कथा, वक्ता, श्रोता पावन हैं। क्योंकि ग्रंथ का अर्थ स्वयंमेव श्रीराम हैं। रामायण में वर्णित धरती, कर्म एवं वाणी धन्य है। मनसा–वाचा–कर्मणा धन्यता का बोध रामकथा है। श्रीराम संसार को पावन करते हैं। चराचर को पावन करते हैं। तत्परतापूर्वक नित्य स्मरण करने वाले नर श्रीराम नाम स्पर्श से पावन होते हैं। रामनाम की पावनता सर्वस्पर्शी है। रामनाम के कारण साधनशुद्धि संभव है। शुद्ध ज्ञान प्राप्ति होती है। बंधनों से मुक्ति दिलाने वाला रामनाम सर्वार्थपूर्ण है। रामनाम मुख के लिए सर्वमान्य है। रामनाम महात्म्य से किष्किंधा कांड का समापन हुआ। राम नाम महात्म्य के कारण सुंदर कांड का सूर्योदय हो रहा है। सुंदर कांड प्रचंड प्रतापी है। रामनाम की महिमा अपूर्व है। श्रीराम सर्वांतर्यामी हैं। रामनाम के सत्वर उच्चारण से भवसागर पार उतरना सहज संभव है।

एकनाथ जी राम नाम को सर्वांतर्यामी कहते हैं। भव सागर पार उतारने की बात करते हैं। तुलसीदास जी रघुनाथ जी को अंतर्यामी मान कर निर्भरा भक्ति की माँग करते हैं।

तुलसीदास जी की याचना और एकनाथ जी की याचना समस्वर है। सुंदरकांड के आदि–मध्य–समापन में हनुमान जी की परम ख्याति पाने वाली कथा है। सीता जी की खोज के लिए किए जाने वाले हनुमान–प्रताप की चर्चा है। हनुमान जी सीता खोज यात्रा का आरंभ त्रिकूट के शिखर पर कर रहे हैं। यह त्रिकूट अनेक अर्थों का ध्यान रखता है। यह ज्ञान–कर्म–भक्ति का त्रिकूट है। यह मनसा–

वाचा–कर्मणा का त्रिकूट है। यह आदि–मध्य–अंत का त्रिकुट है। यह धरती–आकाश–पाताल का त्रिकूट है। हनुमान जी शिखरस्थ बैठे हैं। हनुमान जी चहुँओर देख रहे हैं। देखने की हर संभव संभावना को निरख रहे हैं। जगन्माता की खोज में बालक है। मां से बिछुड़े बालक की यह खोज यात्रा है। यह वात्सल्य कथा का आरंभ बिंदु है। यह यात्रा स्वयं से संवाद है– प्रकृति से संवाद है और संवाद है परिवेश से। यह व्यष्टि, समष्टि एवं प्रकृति से संवाद है। एकनाथ जी ने इस यात्रा का मर्म श्रीराम नामस्मरण बताया है। "राम से अधिक राम कर दासा" की यह कहानी है। एक ओर शांतिमूर्ति राम तो दूसरी ओर रावणारि रामनाम की महिमा मानो एकनाथ जी की सुंदरकांड का मंगलाचरण है। मंगल गान है।

रामायण के सुंदर कांड की सुंदरता हनुमान जी के प्रचंड पर्वताकार देह के कारण उतनी नहीं है, जितनी उनके "बुद्धिमतां वरिष्ठं" होने के कारण है। हनुमान जी स्वयं अपने आप में भक्ति की चरम सीमा हैं। इतने प्रतापी होते हुए भी ऐसा विनत स्वभाव– उनकी अपनी विशेषता है। हनुमान जी शिव जी के अवतार हैं। रूप–प्रतिरूप हैं। यह घटना तो शिव–राम द्वंद्व को अद्वैतमय बनाने की अनोखी प्रक्रिया हैं "रचि महेस निज मानस राखा" और "सिवद्रोही मम दास कहावा सो नर सपनेहुं मोहि नहिं भावा" यह तुलसीदास जी के राम की प्रतिज्ञा के दो क्षितिज तत्कालीन सांस्कृतिक मिलन के फहराते ध्वज हैं। शिव और राम की एकात्म तन्मयता का तुलसीकृत सुंदर रूपांतरण राम–हनुमान जी की एकात्मता में दिखाई देता है।

सुंदर कांड का यह त्रि–आयामी दर्शन भूत–वर्तमान–भविष्य के सम्मिलन का आरंभ बिंदु है। सुंदर कांड का विचार अनेक विद्वान अनेक दृष्टियों से करते हैं। करेंगे। लेकिन तुलसीदास जी के अंतर्यामी सदैव करबद्ध याचना करने वाले भक्त तो निर्भरा भक्ति की याचना ही करेगा।

कृष्णाम्बरी सरस्वती कालोनी शहादा मो.: 9767487483, 9403848907

Jk)katfy

राजधानी के सुप्रसिद्ध समाजसेवी और तुलसी मानस प्रतिष्ठान के अंतरेग सहयोगी श्री अशोक जैन 'भाभा' का दिनांक 19 जनवरी, 2019 को स्वर्गारोहण मानस भवन परिवार की गहरी क्षति है। उनकी सार्वजनीय सहयोग और समन्वयकारी भूमिका सभी समाजसेवी संस्थाओं और प्रबुद्धजनों को प्रेरणास्पद रहेगी। ऐसी हमारी कल्पना है।

उन्हें सादर श्रद्धांजलि ....

प्रतिष्ठान एवं मानस भारती परिवार

ys[k

okYehfd jkek;.k dk lki{k ekul&lUnjdk.M dk o'k|

Mk- : i ukjk;.k ik.M;

वैदिक धर्म, संस्कृति तथा परम्परा में विश्वकवि वाल्मीकिकृत "वाल्मीकि रामायण" एक ऐतिहासिक आदि काव्य है, जिसमें भगवान राम का समग्र चरित वर्णित है। उसी के आधार पर असंख्य महाकाव्यों का प्रणयन हुआ, जिनमें गोस्वामी तुलसीदास प्रणीत श्रीराम चरितमानस अग्रगण्य है। प्रकृत लेख में मानस के सुन्दरकाण्ड की कतिपय विशेषताओं का सङ्केत वाल्मीकि रामायण के सापेक्ष सम्प्रस्तुत है।

विपुलकाय वाल्मीकि रामायण के सुन्दरकाण्ड की अपेक्षा मानस का सुन्दरकाण्ड आकारदृष्टि से नितरां लघुकाय है किन्तु उसकी कथा का समापन सागर–निग्रह पर होता है। मानस के सुन्दरकाण्ड का यह वैशिष्ट्य स्वयं में नितरां अपूर्व है। वाल्मीकि रामायण तथा उसके परवर्ती अध्यात्म रामायण इत्यादि में सुन्दरकाण्ड की कथा का पर्यवसान पवननन्दन श्री हनुमान के द्वारा भगवती सीता के संदेश को सुनाने के पश्चात् ही हो जाता है। सीता माता के संदेश को सुनकर मानस में श्रीराम कपिसेना के साथ समुद्रतट की ओर प्रस्थान करते हैं। रामदूत के कृत्यों से भयभीत मन्दोदरी रावण को उचित उपदेश देती है। अहङ्कारी रावण इसकी उपेक्षा करता है। सिन्धु समीप सेना के आगमन के समाचार के पश्चात् रावण सचिवों से परामर्श करता है। यथाकाल समागत विभीषण श्रीराम को उनकी पत्नी सीता को सादर समर्पित करने का परामर्श देता है। सचिव माल्यवान विभीषण का समर्थन करता है। इससे रावण रुष्ट होता है। वह विभीषण के अतिविनम्र निवेदन की भी उपेक्षा करता है तथा पादप्रहार द्वारा उसे दण्डित करता है। ***"तुम्ह पितु सरिस भलेंहि मोहि मारा। राम भजे हित नाथ तुम्हारा।"*** (मानस 5/40/4) यह कहकर साधुचरित विभीषण रघुनन्दन राम की शरण ग्रहण करता है। कपीश सुग्रीव के परामर्श की उपेक्षा करते हुए शरणागत वत्सल श्रीराम विभीषण को अङ्गीकार करते हैं तथा तत्काल उसे लङ्केश के पद पर अभिषिक्त करते हैं। विभीषण के नीतियुक्त परामर्श को स्वीकार करते हुए श्रीराम समुद्र से मार्ग हेतु प्रार्थना करते हैं। रावण प्रेषित गुप्तचरों को अभयदान देते हुए रामानुज

लक्ष्मण उन्हें एक पत्र देते हैं। गुप्तचरों द्वारा श्रीराम को सीता समर्पण का संदेश सुनकर क्रुद्ध रावण अप्रसन्न होता है। "जनक सुता रघुनाथहि दीजे। एतना कहा मोर प्रभु कीजे।" (मानस 5/56/4) दूत शुक के इस वचन पर रावण उस पर चरण प्रहार करता है। वह श्रीराम की कृपा से शापमुक्त होकर निज आश्रम में प्रवेश करता है। वहां श्रीराम दिनत्रय के पश्चात् समुद्र को अनुशासित करने के लिए शरसन्धान करते हैं। भयभीत समुद्र विप्रवेश में समुपस्थित होता है। वह समुद्रसन्तरण का उपाय सूचित करके स्वगृह गमन करता है। मानस का सुन्दरकाण्ड यहीं पर परिपूर्ण होता है।

वाल्मीकि के सुन्दरकाण्ड की कथा मानस के 31वें दोहे तक ही पूर्ण हो जाती है। 32वें दोहे से अन्तिम 60 वे दोहे तक की कथा का पूर्वोक्त सारभाग वाल्मीकि के युद्धकाण्ड के 22वें सर्ग के 46वें श्लोक तक है। युद्धकाण्ड की यहाँ तक की कथा को सुन्दरकाण्ड के अंतर्गत समाविष्ट करने से मानस का सुन्दरकाण्ड अतीव सुन्दर एवं सुमङ्गलदायक हो जाता है। शरणागत विभीषण के संरक्षण से श्रीरामचरित का नूतन उत्कर्ष भी होता है।

रसात्मकता (चित्त को आनन्द–समुद्र में निमग्न करने की क्षमता) जिस रचना में जितनी अधिक होगी, वह रचना उतनी अधिक उत्कृष्ट होगी। मानस की प्रति पंक्ति मानव मन को जितना अधिक रससमुद्र में निमग्न करती है, उतना सम्भवतः विश्व की कोई कृति नहीं करती है। मानस का सुन्दरकाण्ड मानव को रसानुभूति कराने में सर्वोपरि है। यही उसकी सर्वोत्कृष्टता है। "सुष्ठु उनत्ति आद्रीकरोति चित्तमिति सुन्दरम्।" सु + उन्द क्लेदने + अरः"– इस व्युत्पत्ति के अनुसार सुन्दर वही है, जो चित्त को द्रवीभूत या आर्द्र करता है। अमरकोष की सुधा व्याख्या के अनुसार "सु द्रियते। हङ् आदरे (तु.आ.अ.)।" ग्रहवृहडनिश्चिगमश्च (3/3/58) इस सूत्र से अप् प्रत्यय। (द्र. –अमरकोष की सुधाव्याख्या में "सुन्दर"–शब्द।) उत्तम प्रकार से जिसमें समादर होता है, वह सुन्दर है। मानस का सुन्दरकाण्ड दोनों व्युत्पत्तियों के अनुसार सुन्दरत्व (रुचिरत्व, चारुत्व, साधुत्व, मनोरमत्व, मंजुल, मनोहरत्व, मञ्जुलत्व आदि) से सुसम्पन्न है।

मानस के सुन्दरकाण्ड में 31वें दोहे तक पवनात्मज हनुमान का मनोरम चरित्र चित्रित है। वाल्मीकि रामायण में अञ्जनानन्दन हनुमान् रात्रि में सीता माता का अन्वेषण करते हुए रावणान्तःपुर में अस्तव्यस्तवसन सुन्दरियों का अवलोकन करते हैं। इसका वर्णन महर्षि वाल्मीकि ने 8 सर्गों में किया है। एक ब्रह्मचारी के द्वारा अन्तःपुर में विविध मादक मुद्राओं में निर्भीक शयन करती हुई सुन्दरियों का अवलोकन सर्वथा अनुचित है। यह विचार कर उन्हें महती चिन्ता हुई। अन्त में मेरा मन इनको देखकर अक्षुब्ध है। इस भाव से उन्हें मानसिक शान्ति अधिगत हुई। त्रिकालज्ञ महर्षि वाल्मीकि की वाणी श्रवणीय है–

"निरीक्षमाणश्च ततस्ताः स्त्रिय स महाकपिः।
जगाम महतीं शङ्कां धर्मसाध्वसशङ्कितः।।
परदारावरोधस्य प्रसुप्तस्य निरीक्षणम्।
इदं खलु ममात्यर्थं धर्मलोपं करिष्यति।।
न हि परदाराणां दृष्टिर्विषयवर्तिनी।
अयं चात्र मया दृष्टः परदारपरिग्रहः।।
कामं दृष्ट्वा मया सर्वा विश्वस्ता रावणस्त्रियः।
न तु मे मनसा किंचिंद् वैकृत्यमुपपद्यते।।
मनोहि हेतुः सर्वेषामिन्द्रियाणां प्रवर्तने।
शुभाशुभावस्थासु तच्च मे सुव्यवस्थितम्।।"

(वा.रा. 5/11/36–42)

मानस के सुन्दरकाण्ड में अतिशय निपुणता के साथ मात्र 1 चौपाई में रावण के अन्तःपुर में गमन का उल्लेख अवश्य है, किन्तु एक भी नारी पर दृष्टिपात का भी संकेत नहीं है। कितनी उत्कृष्टता के साथ मानसकार ने श्रीहनुमान जी के उत्तम चरित्र का अङ्कन किया है। मानस की पङ्क्तियाँ पठनीय हैं –

गयउ दसानन मन्दिर माहीं।
अतिविचित्र कहि जात सो नाहीं।।
सयन किएँ देखा कपि तेही।
मन्दिर महुँ न दीखि वैदेही।।

(मानस, सुन्दर 4/3–4)

महर्षि वाल्मीकि का रावण विविध प्रकार के प्रलोभनों से श्रीराम पत्नी सीता को आत्मानुकूल करने का प्रयत्न करता है तथा यह भी कहता है कि यदि दो मास की अवधि तक तुम मुझे पति के रूप में स्वीकार नहीं करती हो, तो पाककर्ता तुम्हें मेरा प्रातःकालिक आहार बना कर प्रस्तुत करेंगे –

द्वौ मासौ रक्षितव्यौमेयोऽवधिस्ते मया कृतः।
ततः शयनमारोह मम त्वं वरवर्णिनि।
द्वाभ्यामूर्ध्वं तु मासाभ्यां भर्तारं मामनिच्छतीम्।
मम त्वां प्रातराशार्थं सूदाश्छेत्स्यन्ति खण्डशः।।

(वा.रा. 5/22/8–9)

इसके विपरीत मानस में राक्षसराज रावण अतीव शिष्टता के साथ भगवती सीता से प्रार्थना करता है कि यदि आप मेरी ओर एक बार भी दृष्टिपात करें तो मैं आपको मन्दोदरी आदि समस्त रानियों को तुम्हारी अनुचरी (सेविका) बना दूँगा। कामातुर रावण ने भी जिस शिष्टता से अपना निवेदन प्रस्तुत किया, वह अभूतपूर्व है इससे सुविदित होता है कि मानस की जनकनन्दिनी सीता ने रावण के अन्तःपुर में स्थित अशोक वाटिका में निवास करते हुए भी उस दुष्ट रावण की ओर एक बार भी दृष्टि नहीं डाली। कितना उत्कृष्टतर चरित भगवती सीता का यहाँ प्रस्तुत है। जननी सीता को ही नहीं, दुश्चरित रावण को भी एक संयत व्यवहारकर्ता के रूप में उपस्थित किया गया है। रावण के शब्द पठितव्य हैं–

"कह रावनु सुनु सुमुखि सयानी।
मन्दोदरी आदि सब रानी।
तब अनुचरी करउँ पन मोरा।
एक बार बिलोकु मम ओरा।।"

(मानस, सुन्दर 8/2–3)

वाल्मीकि रामायण में पवनात्मज हनुमान माता सीता के कष्ट के सद्यः निवारणार्थ यह निवेदन करते हैं कि आप मेरे पृष्ठभाग पर आरूढ़ हों, मैं तत्क्षण सागर को पार करके आपको भगवान राम के निकट उपस्थित कर दूँगा–

"अथवा मोचयिष्यामि त्वामद्यैव सराक्षसात्।
अस्माद् दुःखादुपारोह मम पृष्ठमनिन्दिते।।
त्वां तु पृष्ठगतां कृत्वा संतरिष्यामि सागरम्।
शक्तिरस्ति हि मे वोढुं लङ्कामपि सरावणाम्।।
अहं प्रस्रवणस्थाय राघवायाद्य मैथिलि।
प्रापयिष्यामि शक्राय हव्यं हुतमिवानलः।।
द्रक्ष्यस्यद्यैव वैदेहि राघवं सलक्ष्मणम्।।
व्यवसाय समायुक्तं विष्णुं दैत्यवधे यथा।।"

(वा.रा., सु. 17/21–23)

साध्वी सीता इस निवेदन का सबल प्रतिरोध करती हुई कहती हैं कि मैं स्वेच्छा से पर पुरुष के शरीर का संस्पर्श नहीं कर सकती हूँ। रावण के बलात् संस्पर्श में मैं विवश थी। पुनः यही उचित है कि प्रभु राम सराक्षस दशग्रीव का वध करके मुझे यहाँ से लेकर जायँ –

"भर्तुर्भक्तिं पुरस्कृत्य रामादन्यस्य वानर।
नाहं स्प्रष्टुं स्वतो गात्रमिच्छेयं वानरोत्तम।।
यदहं गात्रसंस्पर्शं रावणस्य गता बलात्।

अनीशा किं करिष्यामि विनाथा विवशा सती।।
यदि रामो दशग्रीवमिह हत्वा सराक्षसम्।
मामितो गृह्य गच्छेत तत् तस्य सदृशं भवेत्।।"
(वा.रा., सु. 16/8–6)

मानस में श्रीराम भक्त हनुमान पराम्बा सीता के सद्यः कष्ट निवारण के सन्दर्भ में विनम्र विनिवेदन करते हैं कि मैं आपको अभी यहाँ से लिवा जाऊँ, किन्तु प्रभु का ऐसा आदेश नहीं है। इस प्रकार मानसकार ने प्रभु–आदेश के सापेक्ष यहाँ पर श्री हनुमान जी की अपार क्षमता एवं विनम्रता का समन्वय किया है तथा माता सीता के द्वारा उसके विरोध का अवसर भी नहीं दिया है। यहाँ प्रभु भक्ति तथा मातृसेवा का अद्भुत समन्वय हैं मानसकार के शब्द श्रोतव्य है–*"अबहि मातु मैं जाउँ लवाई। प्रभु आयसु नहिं राम दोहाई।।"* (मानस, सुं. 15/2)

वाल्मीकि रामायण में काकप्रसङ्ग की विस्तृत चर्चा माता सीता ने की, किन्तु मानसकार ने अतीव शिष्टता तथा मर्यादा के साथ उसका एक संकेत मात्र किया है। स्वकीय विपत्ति निवारण की प्रार्थना करती हुई वैदेही सीता के शब्द अतीव मार्मिक हैं –

"दीन दयालु बिरिदु संभारी।
हरहु नाथ मम संकट भारी।।
तात सक्रसुत कथा सुनाएहु।
बान प्रताप प्रभुहि समुझाएहु।।
मास दिवस महुँ नाथ न आवा।
तौ पुनि मोहि जिअत नहिं पावा।।
कहु कपि केहि विधि राखौं प्राना।
तुम्हहू तात कहत अब जाना।।
तोहि देखि सीतलि भइ छाती।
पुनि मां कहुँ सोइ दिन सो राती।।"
(मा.सुं. 26/2–4)

इस प्रकार गोस्वामी जी का सुन्दरकाण्ड वाल्मीकि जी के सापेक्ष अतीव रम्य, संक्षिप्त तथा उदात्त चरित समवेत है।

मनीका पूरा (चांदपुर) सोराम प्रयागराज (उ.प्र.)–212503

''रसात्मकता जिस रचना में जितनी अधिक होगी वह रचना उतनी अधिक उत्कृष्ट होगी। मानस की प्रति पंक्ति मानस मन को जितना अधिक रस–समुद्र में निमग्न करती है, उतना संभवतः विश्व की कोई कृति नहीं करती।''

ys[k

lhrk dh [kkst rFkk ydkngu ¼Fkkuh'ojh jkek;.k½

Mk- t;ukjk;.k dkf'kd

बाली वध के बाद लक्ष्मण ने सुग्रीव को राजतिलक कराकर किष्किंधा का राजा बनाया और अंगद मंत्री नियुक्त हुआ। सुग्रीव को उसकी पत्नी रोमा के अतिरिक्त तारा भी प्राप्त हुई। वह आनंद मोद में इतना निरत हो गया कि रामचंद्र को दिया गया अपना वचन भूल गया। उधर राम को चिंतित देख लक्ष्मण किष्किंधा गये और सुग्रीव को खरी–खोटी सुनाई। सुग्रीव को अपनी भूल स्मरण हो आई और वानर सेना को सीता की खोज के लिए सभी दिशाओं में भेजा।

अंगद ने कहा कि वह समुद्र को छलांग तो सकता है किन्तु अवस्था के प्रभाववश वापस नहीं लौट सकता। अन्ततः हनुमान को उसकी शक्ति का स्मरण कराया गया और उसने इस चुनौती को स्वीकार किया।

लंका पहुँचने पर उसे एक घर ऐसा नजर आया जिसमें तुलसी के पौधे लगे थे। घर के बाहर "राम राम" शब्द लिखा था। हनुमान ने सोचा, हो न हो यह कोई राम का भक्त है। उसने सूक्ष्म रूप धारण कर उस घर में प्रवेश किया। उसने देखा एक व्यक्ति रामनामी चादर ओढ़े भूमि पर आसन बिछाकर सो रहा है। हनुमान अब निश्चिंत हो गया कि वह उचित स्थान पर पहुँच गया है। हनुमान को विभीषण ने बताया कि सीता का निवास अशोक वाटिका में है।

हनुमान एक पेड़ पर चढ़ गया। सीता रात्रि के समय अकेली बैठी राम नाम का जाप कर रही थी। उसी समय हनुमान ने ऊपर से रामनाम अंकित मुद्रिका सीताजी के पास डाल दी। सीता ने मुद्रिका उठाई। उसे मुद्रिका को पहचानते देर न लगी। इतनी ही देरी में हनुमान वानर रूप में सीता के सम्मुख उपस्थित हुआ और प्रणाम किया। हनुमान ने सारी राम कहानी सीताजी को सुनाई। सीता को विश्वास हो गया कि यह राम भक्त है। सीता ने भी पहचान स्वरूप अपनी मुद्रिका हनुमान को दी।

सीता की आज्ञा से उसने वाटिका के फल–फूल खाए और वानर स्वभाव–वश कुछ को उखाड़ फेंका। हनुमान ब्रह्मफाँस के सम्मानार्थ "फांस" में बँध गया। फांस में बाँधकर उसे रावण के दरबार में ले जाया गया। सभा में उस पर उचित दंड की मंत्रणा हुई। किसी ने कहा कि वानर की पूँछ बहुत प्यारी होती है। इसकी पूँछ में

रूई लपेट कर तेल छिड़क कर आग लगा दो। लोगों ने कौतुकवश ऐसा ही किया। हनुमान जी अपनी पूँछ का विस्तार करते रहे। सारे शहर की रूई और तेल समाप्त हो गए लेकिन सारी पूँछ पर रूई नहीं लिपट पाई। हनुमान की पूँछ पर ज्योंही आग लगाई गई वह घरों की छतों पर कूदने लगा। परिणामस्वरूप सारी लंका जलने लगी। लंका दहन के बाद उसने समुद्र से अनुमति माँगी और अपनी पूँछ की आग बुझाई। हनुमान सीता की खोज पाकर लौटे तो राम बहुत प्रसन्न हुए और लंका की तरफ कूच किया।

उपर्युक्त विवरण हरियाणा में प्रचलित राम कथा के आधार पर दिया गया है। अब अहमद बख्श थानेसरी की रामायण से कुछ अंश यहाँ टिप्पणी सहित दिए जाएंगे ताकि पाठक अन्य रामायणों के संदर्भ में इनकी परख कर सकें।

पहले भी संकेत दिया जा चुका है कि बाली के दाह संस्कार के बाद सुग्रीव को राजगद्दी पर बैठाया गया तथा अंगद को मंत्री बनाया गया। सुग्रीव कामकिंकर बन गया और राम को दिए गए वचन को भूल गया। राम को वर्षा काल के बाद वियोग पीड़ित देख लक्ष्मण सुग्रीव पर क्रोधित हुए। हनुमान को इस बात का आभास हुआ तो उसने तारा को सम्मुख कर उनके क्रोध को शान्त किया तथा कई दिशाओं ने वानर सेना भेजी, वाल्मीकि रामायण पर आधारित यह कथांश अध्यात्म रामायण तथा रामचरित मानस के समान इधर भी प्रचलित है। हाँ इस कथन की अपनी विशेषता अवश्य है–

वृष लग्न महूरत किया निश्चय कर
तिलक लक्ष्मण मुस्काए।
सुग्रीव राज गद्दी बैठे
मिल नार नगर मंगल गाए।।
हो गई आनंदताई वजीरता अंगद पाई।
आ रघुवर के पास लक्ष्मण अर्ज लगाई।।
हुआ भूल सुग्रीव के राज काज अख्त्यार।
जो नर जिस जिस जोग था कर दिया ओहदेदार।।
गई वर्षा ऋतु सर्द ऋतु आई लक्ष्मण वीर।
सीता की सुध ना मिली व्याकुल हुआ शरीर।।
दूँ काल तक को पल में मार
जिसने जनक दुलारी घेरी है।
जा तू ला सुध किस जगह
सिया सुग्रीव ने अँखियाँ फेरी है।।
तामस खा लक्ष्मण उठे धनु बाण ठा हाथ।
लाल लाल लोचन बना गर्ज पड़े एक साथ।।

उधर हनुमान ने सुग्रीव को सचेत किया,

क्यों भूल गए प्रभु को स्वामी
जिन कृपा राज सुख कार हुआ।
एक पल में भस्म करें नगरी
श्री राम ब्रह्म अवतार हुआ।।
बीते छः मास न काज किया
सीया ढूँढन कुछ उपकार हुआ।
चाहो जान बचाई, ढूँढो कहाँ सीता माई।
किया हुआ प्रतिबंध, अर्ज हनुमान ने लगाई।।

जब हनुमान ने सभी वानरों को इकट्ठा किया और सुग्रीव ने उन्हें तुरंत सचेत किया–

एक पांख में साफ खबर लाओ
नहीं जाती जान तुम्हारी है।

उधर सुग्रीव सीता खोज के विलम्ब के कारण चिन्ताग्रस्त है–

क्या बहाना करके करूँ जा दर्शन हर के।
देंगे देख श्राप कहाँ तक रहा लुक डरके।।

किन्तु हनुमान ने उसे सान्त्वना दी–

नहीं शरणागत को देवें श्राप

निडर हो कल दर्शन करें।।

हनुमान ने बहुत कूटनीति से काम लिया :

चले अंजनी सुत महल से ले तारा को साथ।
आए वहाँ जहाँ लक्ष्मण खड़े धनुष बाण ले हाथ।।
श्री राम अनुज चरनन पड़ी कहती तारा नार।
न मरती को मारो मुझे, धरो धनुष से तीर उतार।।

उधर लक्ष्मण ने सुग्रीव पर व्यंग्य किया :

अरे प्रभु याद जब तक रहे, रहे हर बात से मुहताज।
अबही याद हरी रहें कौन विधि मिला किष्किंधा राज।।

सुग्रीव ने लक्ष्मण के सम्मुख अपनी जातिगत कमजोरी की दुहाई दी–

महाराज आप हो जग धनी, हम वानर खल मूढ़
ज्ञान हृदय होना कठिन, परम भयानक गूढ़।।

जब लक्ष्मण उसके तर्कों से संतुष्ट नहीं हुए तो सुग्रीव की स्थिति देखिए–

फेर गिरा हर चरण में ले मुख में तृण घास।
चाहे मारो, छोड़ो मुझे, समझ चरण का दास।।

ऐसा सुन लक्ष्मण ने सुग्रीव से कहा:

शरणागत का मारना महा नीच का काम।
अभयदान हम दें तुम्हें सब नर सुने तमाम।।

आरंभिक वार्ता के बाद जब सुग्रीव भयमुक्त हो राम के पास पहुँचे तो उन्होंने भी उसे सचेत किया–

अरे अब तू क्यों चंदरा बनत निर्भागी मति मंद।
राज, द्रव, सुख, नार पा, फिर भी नहीं हुआ आनंद।।
मिले छत्तीस सौ नेमत खाने को।
अंगद दीवान दास दासी रैयत पर हुक्म बजाने को।।
और कहो क्या चाहता, खड़ा दृग नीर बहाता।
हम से किया प्रण क्या मूरख चित पर नहीं लाता।।

सुग्रीव ने राम के सम्मुख भी वानर का जातिगत स्वभाव ही प्रण पूरा न होने का कारण बताया–

जिसके नारी दृग तीर लगा
नहीं फँसा लोभ में फँस करके।
वो प्रभु पुरुष तुम सम होगा
नहीं रहे सुखों में धँस करके।
मैं पामर बन्दरा अति कामी
गया भूल नगर में बस करके।।

अपना स्पष्टीकरण देने के पश्चात सुग्रीव ने राम को वचन दिया कि वह सभी दिशाओं में अपने दूत भेजकर सीता की खोज करवाएगा–

लक्षों पूरब ढब तरफ चले लक्षों पश्चिम लारे लाते।
लक्षों दक्षिण उत्तर लक्षों ईशान दिशा को जाते।
लक्षों नैऋत्य, अग्नी, वायव, देखें क्या पग धरते जाते।।

उधर हनुमान सहित पाँच वानर दक्षिण दिशा की ओर निश्चित किए गए। राम ने चिह्न स्वरूप हनुमान को अपनी मुद्रिका सौंपी–

ता चरण से दे थापी बोले रघुनाथ
हाथ सिर पर धर के।
ले सुन्दरी लेखा, दे सिया को,
कहना करे वंश नष्ट खर के।।
तुम्हें आन छुटा ले जावेंगे
बैठी रहो न मरिए डर के।।

सीता की खोज में निकले हनुमान जी को मार्ग में अनेक कठिनाइयाँ आईं। इन कठिनाइयों से संबंधित तपसी या असुरा, संपाती, सुरसा, छाया आदि के कथा–प्रसंग वाल्मीकि के समान इधर की प्रतिनिधि रामायण में समान रूप से मिलते हैं। अध्यात्म रामायण में भी वे प्रसंग लगभग समान ही हैं। यहाँ इन कथाओं के विस्तार में जाना विषय से दूर जाना होगा। हाँ, इनसे संबंधित कुछ अंश यहाँ दिए जा रहे हैं:

सुनो गीध कहे त्रिकुट गिरि लंका जिस का नाम।
जहाँ राजा रावण असुर करत परम विश्राम।।
शोक उपवन वहाँ एक विख्यात है।
उस बाग बीच हिंडोले पे दुखवान सिया जग मात है।
यह सागर सौ योजन चौड़ा
जो तरके काम सध जाता है।।

सागर के विस्तार की बात सुन कर अंगद, नल, नील, जाम्बवंत और हनुमान अपने–अपने छलांग लगाने के सामर्थ्य के विषय में चर्चा करते हैं। यद्यपि वाल्मीकि रामायण तथा अध्यात्म रामायण के समान ही यह कथांश है किन्तु वर्णन की शैली सभी की अपनी है–

अंगद कहे मैं जा सकूं इस सिन्धु के पार।
फिर मुड के नहीं आ सकूँ डूब मरूँ मझधार।।
हाथ जोड़ नल हो खड़ा कहने लगा पुकार।
मुझमें इतना बल नहीं जो लँघ जाऊँ सिन्धु पार।।
कूद मंझधार में गोता खा लूंगा।
फिर पचास कोस जोश में भर
एक लख्त टपूसी खा लूँगा।।
नील कहे सौ कोस मैं कूद जाऊँ एक साथ।
जो इस सागर में होवे पर्वत पाँच छः सात।।
साफ लंका में जाए सिधारूँ मैं।
एक एक पर्वत पर बास करत
दिन अवधि पाँच गुजारूँ मैं।
बिन पर्वत जल में डूब मरूँ
दो हुकम कूद अब मारूँ मैं।
कहे जामवंत मैं वृद्ध हुआ
नहीं तन बल इस काल।
फिर भी दो सौ कोस
तो कूद जाऊँ एक नाल।।

अंत में जाम्बवान ने हनुमान को प्रेरित किया। हनुमान प्रेरक वचन सुन अति प्रसन्न हुए और कहा–

एक ढींग नार सगर लंघ जूँ
जा त्रिकूट गिरि उखेरूँ मैं।
तुम आगे आन धरूँ भाइयों
रावण को तख्त से गेरूँ मैं।।

हनुमान की गर्जन को सुनकर जाम्बवान हनुमान को समझाते हैं–

बीरा जा तू लंक अब मत कर कोई बखेड़।
केवल सिया की सुध ल्या
मत और किसी को छेड़।।

हनुमान ने चुनौती स्वीकार की और कहा :

पवन पुत्र हनुमान कहे
सब कपियों से कर जोड़।
मैं जब तक आऊँ नहीं
तुम रहियो इस थौड़।।

लौटने तक प्रतीक्षा करने के पीछे हनुमान का एक अनुभव था। जिस समय बाली राक्षस के वध के लिए गुफा में गया और कुछ काल तक नहीं लौटा तो सुग्रीव ने नगर में लौटकर उसकी अंतिम क्रिया करवा दी और त्वरा में लिए गए निर्णय के कारण गृह कलेश बढ़ा और अंत में बाली वध हुआ। हनुमान को मार्ग की समस्त बाधाओं का आभास था।

देवताओं द्वारा सुरसा के माध्यम से हनुमान के बल पराक्रम की परीक्षा की कथा इधर लोक प्रसिद्ध है और "सुरसा का मुँह" कहावत भी सर्वविदित है। सुरसा ने हनुमान की शक्ति के विषय में इतना कहा–

"मैं नहीं जानती थी तुमको
अब सागर मुझे पहचान लिया।
हमें जितनी वीर सुनी शोभा
राई से पर्वत ठान लिया।।"

देव शत्रु लंकनी के वध के विषय में यहाँ ये दो पंक्तियां संदर्भ स्वरूप यथेष्ट है–

मर गई लंकनी, देव सुर गंधर्व फंकनी।।
मुक्का लगा महावीर गई सुरपुर को लंकनी।।

इधर हनुमान द्वारा सीता खोज की कथा वाल्मीकि रामायण से कुछ भिन्न है। वाल्मीकि रामायण में हनुमान भ्रम वश मंदोदरी को सीता समझ बैठता है। यहाँ विभीषण सीता का अता पता

बताता है। इस प्रसंग में कथा के कुछ अंश यहाँ दिए जा रहे हैंः

रूप अति लघु वीर ने धार लिया।
मंदिर मंदिर घर घर ढूंढा
सीता नहीं पाई हार लिया।।
बीर सिया ढूँढत फिरे जा निकला एक तरफ।
जो देखें एक मंदिर पर लिखे राम राम हर्फ।।

बाहर तुलसी का बिरवा लगा हुआ–

कारज मन माना, धरा ब्रह्मचारी बाना।
बीर पुकारत सहज, भगत जरा बाहर आना।।
सुनत विभीषण उठ खड़े अर्ध बीत गई रात।
देखे द्विज द्वारे खड़े जोड़ दिए दो हाथ।।

विभीषण से वार्ता के समय हनुमान विश्वस्त हो गए कि वह वास्तव में राम भक्त हैं। हनुमान ने यह भी जान लिया कि इसकी रावण से अनबन रहती हैः

बिप्र जी मेरा रावण साथ में रवि राहू का मेल।
जैसे फाँसी सर्प हो आदम का खेल।।
जैसे अमावश में पड़वा आने पर
डर रवि राहू के ग्रसने का।
जैसे बिप्र गुणी पंडित के कर
डर उस चंदन के घिसने का।।
ऐसे मैं डरता, जिक्र किसी पास न करता।
जो कह जा दो बात, सभी सिर ऊपर धरता।।

लोक कवि की इन पंक्तियों का कला पक्ष और भावपक्ष कितना सराहनीय बन पड़ा है–

हनुमान को सीता के निवास के बारे में विभीषण ने जानकारी दी–

सुनो सिया जहाँ रहत है,
अंजनी सुत पवन कुमार।
उस अशोक वाटिका बीच में
जहाँ राक्षसी कई हजार।।
उस वन मां रहत सिया माता,
सिर ऊपर कष्ट उठावत हैं।
तन सूख बदन विकराल हुआ,
श्री रामचंद्र मन ध्यावत है।।

हनुमान वार्ता में मिले संकेत के अनुसार अशोक वाटिका में पहुंचे व पत्तों की ओट में छिप गए। उसी समय रावण राक्षसियों के साथ सीता के पास आ उसे डराने धमकाने लगा। सीता ने लज्जावश बीच में पट स्वरूप तृण रख लिया और रावण को खरी खोटी सुनाने लगी–

मुझको पृथ्वी पर जन्म लिया
रावण का वंश मिटाने को।
तेरे अ्ठारह सहस्र नार,
मंदिर मिट्‌टी के बीच मिला जाँगे।
तेरी बीस भुजा और शीश दसों
धर एक बाण पटका जाँगे।।

रावण ने सीता से व्यंग्य में कहा कि वन–वन भटकने वाले व्यक्ति के साथ रहने का क्या लाभ। इस पर सीता का तर्क कितना श्लाघ्य है –

मूर्ख मात पिता के वचनों माँ सब दुनिया संसार।
वचन भागीरथ के बंधी हुई प्रगट गंग जलधार।।
गंग चली आई सगर सुतों कारण।।

वचन के प्रति अटूट श्रद्धा और पौराणिक कहानियों के संदर्भ अहमद बख्श की कुरुक्षेत्री संस्कृति की जानकारी को दर्शाता है।

रावण सीता के वचनों से क्रुद्ध होकर बौखला उठा और सीता को मारने दौड़ा। उसी समय मंदोदरी ने उसे टोकाः

बालम राजनीति क्यों हारते कर नारी पर हंकार।
स्त्री, गऊ, ब्राह्मण, संत का, नहीं सूरा करते सिंघार।।
ये गऊ रूप स्त्री सीता जिस ऊपर हाथ उठाते हो।।

रावण के चले जाने पर सीता ने आत्मदाह की सोची। हनुमान ने तत्काल उसके निकट मुद्रिका डाल दी। सीता ने समझा कि यह अग्नि आ गिरी है :

मुन्दरा झट डारा, सहज श्रीराम पुकारा।

श्री रघुवर का ध्यान, कपि मन बीच विचारा।।

और कहा–

माई डर मत कर किसी असुर का,
मैं राम दूत हनुमान।
पम्पासुर सुग्रीव पा ठहरे हैं भगवान।।
सुनत बचन सिया मात के चला वीर हनुमान।
वृक्ष बसेरा त्याग कर खड़ा सिया पा आन।।
मुख तृण देकर इक चरण खड़ा,
निज गल में अंचल डार खड़ा।।
सरूप बंदर का देखकर लिया तुरंत मुख फेर।
ऐसा न हो कोई असुर हो लई भ्रम चित ने घेर।।

हनुमान जी ने सीता को वस्तु स्थिति से अवगत कराया और वह आश्वस्त हुईं। हनुमान ने कहा कि यदि आप आज्ञा दें तो बाग से कुछ फल खा लूँ। हनुमान ने कुछ फल खाए, कुछ बिगाड़े और फिर रावण का दरबार देखने की इच्छा से "ब्रह्म फाँस" में बँध गए। रावण ने दंड स्वरूप उसका अंग भंग करना चाहा और उसकी पूँछ में रूई बाँधकर आग लगवा दी। लंका जलने लगी। हनुमान सीता से हाथ का चूड़ा ग्रहण कर किष्किंधा लौटे और सीता की सुधि की सूचना राम को दी।

ykdxhr

हरियाणा में सीता हरण और लंका दहन आदि प्रसंगों से संबंधित कई लोकगीत प्रचलित हैं। एक गीत उस समय का है जब रावण ने सीता को अशोक वाटिका में पहुँचाया। मंदोदरी को उत्सुकता हुई कि वह सीता को देखे और स्वयं उससे पूछे कि वह राम जैसे पति को छोड़ कर रावण के साथ क्यों चली आई। सीता प्रत्युत्तर में रावण वध का संकेत देती है। गीत इस प्रकार है :

चली है मंदोदर उन बागों में देखने सीता नार जी।
संग सहेली लई साथ में गई सीता के पास जी।
तूँ तै ए सीता सतवंती क्यूँ रावण संग आई जी।
भूरे भूरे हाथों हर्या हर्या चुड़ला
यो रावण का सुहाग है।
भूरा भूरा मुखड़ा पीली पीली बेसर
यो रावण का सुहाग है।
तू तै हे सीता सतवन्ती कैसे छोड़े रघुनाथ हैं।
मैं तो हे सीता सतवंती तनै रंडाप्पा त्यार है।।

दूसरा गीत भी सीता और मंदोदरी मिलन का है। यहाँ सीता को चंद्रमा तथा मंदोदरी को अस्तवान सितारा कहा गया है। सीता ने कहा कि उनका उद्देश्य मात्र रावण के संग आना नहीं है। वह तो तैंतीस करोड़ देवताओं को रावण के बंदीगृह से मुक्त कराने का निमित्त बनकर आई हैं। अवधी का एक लोकगीत इस हरियाणवी लोकगीत के समान है। लगता है अयोध्या यात्रा से लौटने पर इस गीत का हरियाणवी संस्करण इधर तीर्थ यात्रियों द्वारा गाया जाने लगा हो या रामलीला करने वाले कलाकार इधर इस गीत को गाते रहे हों। गीत इस प्रकार है :

सिया जी से मिलन मंदोदर राणी आई।
सिया जी से मिलन।
नौ लख तारे जड़े चीर में रिमझिम करती आई
सिया जी से मिलन मंदोदर राणी आई।।
जिब चंद्रमा ने लिया उजाला
तार्यों की किरण घटाई।
सिया जी से मिलन मंदोदर राणी आई।।
जनक राव की सीता बेटी माथे चंदा लाई।
सिया जी से मिलन मंदोदर राणी आई।।
तूँ तैं ए सीता सतवंती मेरे तै
पति के संग कैसे आई।
सिया जी से मिलन मंदोदर राणी आई।।
तैंतीसों की बन्द छुटाऊँ तनैं तै रंडापा देणे आई।
सिया जी से मिलन मंदोदर राणी आई।।

एक अन्य गीत उस समय का है जब सीता

रावण द्वारा प्रताड़ित किए जाने पर आत्मदाह की बात सोचती है। हनुमान उनकी विरह अवस्था को अशोक वृक्ष से देखते हैं और ऊपर से अंगूठी डाल देते हैं। गीत इस प्रकार है :

आओ राम, आओ राम, बटियाँ देखूँ तेरियाँ।
कौशल्या के लाल तुमनैं कहाँ लगाई देरियाँ।।
आखिर ही विण ली चिता लकड़ी ल्या के ढेरियाँ।
आओ राम आओ राम आऊँ अगनी गेरियाँ।।
गेर गए हनुमान जी रामचँदर की गूठियाँ।
लंक में सिया जानकी मैं राम राम टेरियाँ।।
कह द्यँगा माता जानकी सारी हकीकत तेरियाँ।
लंका में सीया जानकी मैं राम राम टेरियाँ।।

इन्हीं प्रसंगों से रामचरित मानस के हिन्दी पद्यानुवाद की कुछ पंक्तियों को यहाँ उद्धृत किया जा रहा है :

बरसा बीती सरदी की रुत निर्मल लिछमन आई।
चाँद आज तक सीता की सुध हमनैं कोन्या पाई।।...
पवन दूत नैं उड़े आण अपणे मन बीच बिचार्‌या।
पर सुग्रीव राज गरबाया रघुवर काज बिसार्‌या।।
हाथ कमल सा पवन तनय के
टेक्या सिर के ऊपर।
भगत जाण्य के रामचंद्र ने दीन्हीं गूँठी सुंदर।।...
उसी पुरी मैं सुंदर सैं अशोक फुलबाड़ी।
उसी बगीचे में सीता से हुई बिरह में माड़ी।।
सोने बर्गी काया कपि की चिम चिम चिम चमकै थी।
जणु चोटी ऐरू पर्वत की दम, दम दम दमकै थी।।
सिंहनाद कर गर्ज्या हणुवत झट्दे बचन उचार्‌या।
खेल कूदणा मन्नै सै यो तात समन्दर खार्‌या।।...
न्यों कह हणुवन्त हाथ जोड़ के सब नैं सीस नवा कै।
चाल पड़े सीता सुध ल्याणे मन मैं राम मना कै।।

उपर्युक्त पंक्तियों में "चाँद", "मांड़ी", "बर्गी", "चिन चिन", "दम दम", "खेल कूदणा", "राम मना कै" शब्द बहुत ही सटीक हैं। ये शब्द इस वर्णन को हरियाणवी रंग प्रदान करते हैं। पाठक स्वयं रामचरित मानस की पंक्तियों से इसकी तुलना कर सकते हैं।

पुस्तक "रामकथा और लोक–साहित्य" से साभार

''पवन तनय बल पवन समाना।
का चुप साधि रहेउ बलवाना।।
कवन सो काज कठिन जग माहीं।
जो नाहिं होइ तात तुम्ह पाही।।'

मानस

l|njdk.M dk vk/kfud lnHk

dfork

fp[kjh

jk t Un cgknj f l g ^jk t u*

श्रीराम लघुभ्राता के संग
कोहिनूर से,
निरख रहे थे सेतुबन्ध का
कार्य दूर से।
सभी चाहते थे अतिशीघ्र
सेतुबन्धन हो,
सिन्धु पार कर सीता और
राम वन्दन हो।
एतदर्थ सारे के सारे
गतिमानित थे,
रामभक्ति से लोग वहाँ के
अनुप्राणित थे।
सेतुबन्ध के सिवा किसी को
भान नहीं था,
कौन कहाँ है इसका उनको
ज्ञान नहीं था।
यहीं गिलहरी की निष्ठा भी
रंग लायी थी,
श्रम की मस्ती पूर्णतया
उस पर छायी थी।
रोम रोम में रजकण को
लपेटकर लाती,
सिन्धु पाटने लगी गिलहरी
प्रभु–रस–माती।
धूल गिराकर फिर वापस
तेजी से जाती,
धूल कणों को रोम–रोम
में भरकर लाती।

जाने कब से इस सुकर्म में
वह निमग्न थी,
रामकटक का वह नूतन
अनमोल रत्न थी।
राम–काज में किया समर्पित
तन–मन सारा,
बही हृदय में शक्ति भक्ति की
नूतन धारा।
कोई देख न पाया चिखुरी
की यह क्रीड़ा,
राम समझते थे इस परम
भक्त की पीड़ा।
क्यों न समझते राम
जगत के स्वामी ठहरे,
परमपिता, परमेश्वर,
अन्तर्यामी ठहरे।
बिन हरि इच्छा के किसने
किसको पहचाना,
जिसे उन्होंने जनवाया
उसने ही जाना।।
धन्य गिलहरी तूने जो
करके दिखलाया
उसे न कोई शूर वीर
योद्धा कर पाया।
हे नन्ही मुन्नी चिखुरी
तू सचमुच न्यारी,
तू हनुमान, भरत, लक्ष्मण से
बढ़कर प्यारी।
यह इतिवृत्त राम लक्ष्मण से
जब कहते थे
उनके नयनों से आँसू
झर–झर बहते थे।
जो इस तुच्छ जीव की सेवा
से सीखेगा,
रामकृपा से वह सबसे
न्यारा दीखेगा।।

खण्ड काव्य "चिखुरी" से साभार

तुलसीदास जी विनय पत्रिका में लिखते हैं –

सुन सीता पति शील स्वभाव
मोद न मन तन पुलक नयन जल सो नर खेहरि खाव
शिशुपन ते गुरु मात पिता अरु सेवक स्वामि सखाउ
कहत राम विधु वदन रिसौंहें सपनेहु लखेउ न काउ
कहेउ राज वन दियों नारि बस गरि ग्लानि गये राउ
ता कुमातु को मग जुगवत त्यों निज तन मरम को घाव
श्रवण सुनत गुन ग्राम राम के उर अनुराग बढाव
तुलसिदास अनयास राम पद पैहहु पेम पसाउ ।

राम से आत्यन्तिक शील की शिक्षा स्वयं, समाज और संसार के लिये परम विधेय है

ys[k

D;k rqylh us vkrad dk iR;Ùkj lnjdkM eas fn;k \

eukt JhokLro

क्या राम के रूप में वाल्मीकि और तुलसी ने आतंक के विरुद्ध एक कल्चरल मोटिफ गढ़ा था ?क्या वाल्मीकि और तुलसी यह महसूस करते थे कि मनोविकृत राक्षसों के आक्रमणों के सामने हम तब तक वल्नरेबल बने रहेंगे जब तक कि हम अपनी संस्कृति की इम्यून सिस्टम को मजबूत नहीं बनाते। राक्षसों का आतंक मूलतः संस्कृति पर आक्रमण है। अरण्यकांड के छठे सर्ग के 18वें श्लोक में वाल्मीकि कहते हैं– "इन भयानक कर्म करने वाले राक्षसों ने इस वन में तपस्वी मुनियों का जो ऐसा भयंकर विनाशकांड मचा रखा है, वह हम लोगों से सहा नही जाता है।" वह एक विराट आर्यावर्त की तुलना में भले ही छोटा हो, लेकिन वह ऐसा वायरल इन्फेक्शन है जो हमारे सांस्कृतिक प्रतिरोध–तंत्र को कमजोर कर ही देगा। राक्षसों का अल्पविकसित सांस्कृतिक व्यक्तित्व ही यह भी सुनिश्चित करेगा कि अन्य सुसंस्कृत देश भी सांस्कृतिक रूप से तहस नहस हो जाएँ। चूंकि वे स्वयं एक कल्चरल कार्नर में पड़ गए हैं– स्वयं की अहम्मन्यता के चलते, तो दूसरे क्यों सांस्कृतिक दरिद्रता के शिकार नहीं बना दिए जाएं। अब्दाल सलाम फराज जो एक शुरुआती आतंकवादी था, ने अपने पैंफलेट में क्या कहा था ? **The neglect of jihad has caused the current depressed position of Islam.** क्या यह स्थिति शिक्षादि मानव विकास लक्ष्यों का पीछा सफलतापूर्वक न करने से पैदा होती है या युद्ध न करने से ? फिर तुलना भी यदि हो तो उसकी परिणति दूसरे की रेखा छोटी करने में क्यों हो ? लेकिन राक्षसी सोच दूसरी ही होती है। उन्हें लगता है तोड़–फोड़, हत्या, लूटपाट, रक्त वर्षा के जरिए उस भारतभूमि को क्यों न अपवित्र किया जाए जिसका सांस्कृतिक अभ्युदय राक्षसों में गहरी आत्महीनता का अवबोध पैदा करता है। राक्षसों के खुद के कठोर फिक्सेशन होंगे, वे उसी कारण से सांस्कृतिक स्टेगनेशन झेल भी रहे होंगे, लेकिन खुद को बेहतर बनाने की जगह वे दूसरों को नष्ट करना चाहेंगे। रावण के बारे में वाल्मीकि पन्द्रहवें सर्ग के 8वें श्लोक में यही कहते हैं कि "वह दुष्टात्मा जिनको कुछ ऊंची स्थिति में देखता है, उन्हीं के साथ द्वेष करने लगता है।" चूंकि उन्होंने हमेशा शस्त्र की भाषा में विश्वास किया है, चूंकि उनके यहां बौद्धिक रूप से शास्त्रार्थ में सर्वविजयी अगस्त्य या कॉडिन्य कभी

नहीं हुआ जो देश देशांतरों में सांस्कृतिक प्रतिभा का प्रकाश करे, चूंकि राक्षसों में "ग्रे मैटर" की कमी है, इसलिए वे अपना संतोष रक्त वर्षा से ही प्राप्त करेंगे। वाल्मीकि रामायण के तीसवें सर्ग में श्लोक 11–12 देखें "राक्षस सब ओर अपनी माया फैलाते हुए यज्ञमंडप की ओर दौड़े आ रहे थे। उनके अनुचर भी साथ थे। उन भयंकर राक्षसों ने वहां आकर रक्त की धाराएं बरसाना आरंभ कर दिया।" वाल्मीकि बालकांड के 20वें सर्ग में यही बताते हैं: "वह महाबली निशाचर इच्छा रहते हुए भी स्वयं आकर यज्ञ में विघ्न नहीं डालता किंतु उसी की प्रेरणा से दो महान बलवान राक्षस मारीच और सुबाहु यज्ञों में खलल डाला करते हैं।" मारीच और सुबहु क्या ऐसे आतंकवादी हैं जिनका रावण ने इन्डाक्ट्रिनेशन किया है। उनके दिमाग में जहर भरा है। आतंक के उद्देश्यों के लिए एजेंट नियुक्त किए हैं जिनका न केवल ब्रेनवाश किया गया है बल्कि जिन्हें जन्म से ही नफरत और हिंसा के लिए ही प्रोग्राम किया गया है। कहने को उनका नाम रक्ष–संस्कृति है लेकिन करते वे आक्रमण हैं और आक्रमण नॉन–कम्बेंटमेन्ट्स पर होगा, सिविलियंस पर होगा। उन पर होगा जो यज्ञ कर रहे हैं। योद्धाओं पर नहीं होगा। युद्ध में तो वे बार–बार हारे हैं। कभी सहस्रबाहु से हारे हैं, कभी बालि से हारे हैं, कभी शिव के अंगूठे तले दब गए हैं। इसलिए अब वे पारंपरिक अर्थों में युद्ध नहीं करते, वे माया–युद्ध करते हैं; माया–युद्ध का सही अनुवाद क्या प्रॉक्सीवार होगा ? उनकी सफलता इसी बात पर निर्भर है कि उनके शिकार माया युद्ध नहीं कर सकते हैं। इसलिए वे सिविलियन सेटलमेंट्स को जितना लक्ष्य बनाते हैं, उतना उनकी जीत का विश्वास होता चला जाता है। याद कीजिए कि राक्षसों के द्वारा पीड़ित एक क्षेत्र का नाम वाल्मीकि ने जनस्थान रखा है। जनस्थान यानी सिविलियन सेंटलमेंट। उन पर खर और दूषण ने कब्जा जमा लिया था, जहां से रावण के माया–युद्ध की कार्रवाइयां चलती रहती थीं। यह माया–युद्ध असल में विदेशी शक्ति का गुप्तभियान (कवर्ट आपरेशन) है। तमस की शक्तियां ब्लैक आपरेशन नहीं करेंगी तो क्या करेंगी ?

आतंक की ताकतों की एक विशेषता निर्दोषों की हत्याएं हैं। वे उस न्यूटोनियम भौतिकी के खिलाफ विद्रोह करती है जो कार्य–कारण के सिद्धांत पर आधारित है। वह एक तरह की झक है जो "कारण" के अनुशासन को भंग करने के विरुद्ध जिद बांधे हुए हैं। उसे स्वैराचार में एक तरह का सशक्तिकरण महसूस होता है। एक घटना (कारण) और दूसरी घटना (कार्य) के बीच आवश्यक व प्रत्यक्ष पारिणामिक रिश्ता न होने पर भी उसे कर गुजरने में आतंकी को लगता है कि वह खुदा हो गया क्योंकि इतनी यदृच्छता तो बस उसी भगवान के लिए संभव है। उसको यह भी भरम हो जाता है कि वह खुद ही जैसे एक डिवाइन मिशन पर है। रावण खुद को खुदा ही समझने लगा था। इसलिए वह निरपराधियों को मारता रहता है। वाल्मीकि रामायण की शुरूआत में ही कहा गया कि "दुष्टजन इस संसार में बहुत से जीवों को बिना किसी अपराध के ही पीड़ा देते हैं।" आतंकी राक्षस यही कर रहे हैं। बाणभटट ने कादंबरी में यही तो कहा था "अकारणाविष्कृत–वैरदारुणादसज्जानात् कस्य भयं न जायते" अकारण शत्रुता करने वाले उन भयंकर दुष्टों से कौन नहीं भयभीत होगा ? दरअसल कारण के साथ की गई हत्या भी अपराध है, क्रूर है, निदंनीय है लेकिन वह अस्तित्व और सभ्यता के आस्थामूलों को उतने विकट तरीके से नहीं हिलाती, जितनी अकारण की गई हत्याएं। हमने

अपनी सभ्यता को तर्क और कारण की नीवों पर आधारित किया है। आतंकवाद जिस क्षण एक अबोध बच्चे को मारता है, उसे मारता है जिसे कम से कम उससे निजी तौर पर कोई गिला नहीं था तो वह चीज एक सिविलाइजेशनल सिहरन पैदा करती है। मत्स्यपुराण में इसीलिए कहा गया थाः "विधाग्नि– सर्पशास्त्रेभ्यो न तथा जायते भयम्/ अकारणं जगद्बैरिखले–भयो जायतेयथा" कि विष, अग्नि, सर्प तथा शस्त्र से भी संसार को उतना भय नहीं होता जितना भय बिना कारण संसार के शत्रु दुष्टों से। अब ऋषि–मुनियों को मारना वस्तुतः लॉ– अबाइडिंग सिटीजन्स को, कानूनी भीरु नागरिकों को मारना रहा होगा। आतंकी के लिए अपनी दुष्ट और भ्रांत मानसिकता के चलते ये नागरिक एक शून्य से अधिक नहीं। ड्यूवाल एवं स्टोल ने लिखा है– Motives are entirely irrelevant to the concept of political terrorism. Most analysts fail to recognise this and hence, tend to discuss certain motives as logical or necessary aspects of terrorism. But they are not. At best, they are empirical regularities associated with terrorism. More often they simply confuse analysis.

इन दिनों हम अक्सर पढ़ते रहते हैं कि आतंकवादी नकली पहचानों (फेक आइडेन्टिटी) का इस्तेमाल करते हैं। स्वयं अमेरिका में 9/11 के बाद अल–अदरिस जैसे लोगों का पता चला जो नकली परिचय–पत्र बनाने और बेचने का धंधा करते थे। 800 डॉलर प्रति कार्ड की दर पर वह 18 कार्ड प्रतिदिन बेचा करता था। 9/11 के दो अपराधियों आलोमारी और अल्घमाड़ी दोनों ने वर्जीनिया निवासी होने के प्रमाण–पत्र हासिल कर लिए जबकि वे मेरीलैंड के मोटेल में रह रहे थे। अलकायदा का ट्रेनिंग मैनुअल आतंकियों को ऐसा रूप धारण करने को कहता है जिससे वह "इस्लामी ओरिएंटेशन का नहीं लगे।" अभी 20 सितंबर 2008 को अखबारों में दिल्ली पुलिस के हवाले से खबर थी कि आतंकवादियों ने फर्जी वोटर आइडेन्टिटी कार्ड हासिल कर लिए हैं और देशभर में नकली पहचान के साथ घूम रहे हैं। कहीं होटल में किसी नाम से रह रहे हैं, कहीं प्रोफेसर और कहीं छात्र बनकर। ब्रिटेन में "द सन ने महज 750 पौंड में एक फर्जी आइडेन्टीटी कार्ड हासिल कर लिया था, सिर्फ यह बताने के लिए कि ब्रिटेन में रूप बदलकर रहना कितना आसान है। अरण्यकांड में वाल्मीकि दसवें सर्ग के दसवें श्लोक में यह कहते हैः "तब उन सभी ने मिलकर अपना मनोभाव इन वचनों में प्रकट किया– श्री राम! दंडकारण्य में इच्छानुसार रूप धारण करने वाले बहुत से राक्षस रहते हैं। उनसे हमें बड़ा कष्ट पहुंच रहा है, अतः वहां उनके भय से आप हमारी रक्षा करें।" क्या ये इच्छानुसार रूप धारण करने वाले राक्षस उसी तरह से आइडेन्टिटी फ्रॉड कर रहे थे जैसे आज हो रहे हैं ?आतंकी कहता है कि वह अपनी पहचान–स्थापना के लिए संघर्ष कर रहा है, लेकिन सच यह है कि अपनी पहचान छुपाए या बदले बिना वह कहीं भी आतंक फैला नहीं सकता। तुलसी ने इन आतंकियों के बारे में इसलिए कहाः ***काम रूप जानहिं सब माया/सपनेहु जिन्ह के धरम न दाया।*** एक अन्य जगह वे लिखते हैं : ***करहिं उपद्रव असुर निकाया/नाना रूप धरहिं करि माया।***

आतंकवाद क्या एक विजयिनी रणनीति रही है? आतंकवाद की परिणतियां क्या कभी उसके अंतिम लक्ष्य की ओर पहुंचाती हैं ? क्या आतंकवाद कभी एक एफेक्टिव हथियार के रूप में सिद्धि पाया है ? आतंकवाद की सफलता दर अत्यंत कम रही है।

एक अध्ययन में 28 आतंकी दलों के 42 नीतिगत लक्ष्यों में से सिर्फ 3 ही किसी हद तक पूरे हो सके हैं। श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण के उन्तीसवें सर्ग के छठवें श्लोक में श्रीराम राक्षस खर से पूछते हैं: राक्षस! दंडकारण्य में निवास करने वाले तपस्या में संलग्न धर्मपरायण महाभाग मुनियों की हत्या करके न जाने तू कौनसा फल पाएगा?

क्यों आज अक्षरधाम, संकटमोचन मंदिरों, इस्लामाबाद के प्रोस्टेस्टेंट इंटरनेशनल चर्च, अल गरीबा के साइनेगॉग, कश्मीर के मंदिरों आदि पर होने वाले हमलों को देखकर राक्षसी हिंसाचार की वही याद आती है जो तुलसी ने बालकांड में कही: ***"द्विजभोजन मख होम सराधा/सब के जाइ करहु तुम्ह बाधा"***। यज्ञ, हवन और श्रद्धा इन सबमें जाकर तुम बाधा डालो। ***"देखत जग्य निसाचर धावहिं। करहिं उपद्रव मुनि दुख पावहिं।"*** यज्ञ देखते ही राक्षस दौड़ पड़ते थे और उपद्रव मचाते थे, जिससे मुनि बहुत दुख पाते थे। उस जमाने में यज्ञ से ऊर्जा मिलती थी तो आतंकी उसे बाधित (disrupt) करते थे। नए जमाने में इनर्जी ग्रिड से ऊर्जा मिलेगी तो उसे करेंगे। मसलन 80 के दशक में दुनियाभर में इनर्जी ग्रिड्स पर 8000 हमले रिपोर्ट हुए। आसाम की गैस पाइपलाइनों से लेकर कोलंबिया तक। आतंकी राक्षस प्रतिद्वंद्वियों के ऊर्जा–चक्रों पर आक्रमण करना हमेशा से चाहते रहे। करते रहे। यह नहीं कि राक्षस संस्कृति के ध्वजावाहकों को मारकर ही संतुष्ट हो जाएंगे कि वे सिर्फ अक्षरधाम, संकटमोचन जैसी संस्कृति की सनातन पहचान या ताज, ओबेराय, नरीमन हाउस जैसे नए उभरते हुए युवा और ग्लोबल भारत के बड़े प्रतीकों को लक्ष्य कर ही उपद्रव मचाएंगे बल्कि जैसा कि वे पहले भी सिद्ध कर चुके हैं कि वे बाजारों में और सड़कों पर चल रहे, रेलों में यात्रा कर रहे आम लोगों के भी दुश्मन बने रहेंगे। रामायण के चौथे अध्याय के बाईसवें श्लोक में वाल्मीकि यही कहते हैं कि "जो सब प्रकार के संग से रहित है, उसे भी दुरात्मा मनुष्य सताया करते हैं।" अल कायदा ट्रेनिंग मैनुअल में अपहृत व्यक्ति को निस्संग करने की रणनीति के बारे में यही बताया गया है : **Isolate the victim socially, cutting him off from public life, placing him in solitary confinement.** यह निस्संग आदमी– यह सर्वहारा– यह आम आदमी राक्षसों के आतंक का शिकार होता रहता है, इसे बालकांड के 15वें सर्ग में वाल्मीकि ने रावण के बारे में कहते हुए स्पष्ट किया: "उसने तीनों लोकों के प्राणियों का नाकों दम कर रखा है" (श्लोक 8) तैंतीसवें श्लोक में उन्होंने रावण के बारे में फिर कहा कि "वह तीनों लोकों को रुलाता है।" बीसवें सर्ग में विश्वामित्र कहते हैं "वह निशाचर तीनों लोकों के निवासियों को अत्यंत कष्ट दे रहा है।" आतंक किसी एक देश को कष्ट नहीं देता। वह इस उस किसी भी देश को क्षति पहुंचा सकता है। वह सभ्यता की अवधारणा मात्र पर आक्रमण है। सन् 2002 में स्टेट ऑफ द यूनियन भाषण में अमेरिकी राष्ट्रपति जार्ज बुश ने जो कहा था, उसके शब्द कितने समान हैं: **Thousands of dangerous killers, schooled in the methods of murder, often supported by outlaw regimes, are now spread thoughout the world, set to go off without warning.**

आतंकवादियों का असल कल्ट वायलेंस ही रहा है और यदि किसी को उस बारे में थोड़ी सी भी गलतफहमी है तो उसे अलकायदा का ट्रेनिंग मैनुअल पढ़ लेना चाहिए। उसमें शारीरिक यंत्रणा की कई विधियां दी गई हैं, उन्हें पढ़िए और फिर तुलसीदास द्वारा किए गए राक्षसों के वर्णन को:

"हिंसा पर अति प्रीति तिन्ह के पापहि कवनि मिति" कि हिंसा पर ही जिनकी प्रीति है, उनके पापों का क्या ठिकाना। अलकायदा के ट्रेनिंग मैनुअल के शब्दों को इसके सामने रखेंः **'It knows the dialogue of bullets, the ideals of assassinations, bombing and destruction, and the diplomacy of the canon and the machine gun, Islamic governments have never and will never be established through peaceful solutions and cooperative councils'.** हिंसा पर प्रीति की इससे बड़ी अभिव्यक्ति क्या होगी ? ये आतंकी राक्षस धर्म–परिवर्तन की मांग नहीं करते हैं, वे उसके लिए मजबूर भी नहीं करते हैं। उनका उद्देश्य परिवर्तन नहीं है, विनाश है। उनका लक्ष्य रक्ष संस्कृति में विनियोजन नहीं है, बल्कि प्रतिद्वंद्वी समझ ली गई संस्कृति को गंभीर क्षति पहुंचाने का है। *जेहि विधि होइ धर्म निर्मूला/सो सब करहिं वेद प्रतिकूला।*

ऐसी स्थिति में निदान क्या है ? वाल्मीकि और तुलसीदास का उत्तर है, यदि सुंदरकांड कोई प्रमाण है तो, आतंकवाद को उसके घर में घुसकर मारो। राम राक्षसों के आतंकवाद को एक पल के लिए भी निगोशिएबल नहीं मानते, वे उसे जड़ मूल से उखाड़ने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध हैं। धरती को निशिचरहीन करने की प्रतिज्ञा। लंका आतंक का स्रोत है। यह कोई "अकेले भेड़िए का आतंकवाद" (lone wolf terrorism) नहीं है। खर, दूषण, त्रिशिरा, सुबाहु, मारीच कोई वैयक्तिक मनोरोगी नहीं है, वे सब स्लीपर सेल्स हैं– या स्लीपर नहीं है, (सिवाय आध्यात्मिक अर्थों में) बल्कि बहुत सक्रिय हैं। लंका इनका केन्द्रीय कमांड मुख्यालय है। ये लोग अपने विकेन्द्रित काम करें तो भी उनकी अंतिम शरण्य और निष्ठा वही राक्षसी लंका है। तीस्ता सीतलवाड टाइपों को इसमें कोई राज्य प्रायोजित आतंकवाद नहीं नजर आता जब मुंबई से लेकर दिल्ली, जयपुर, बंगलुरू में आतंकवादी राक्षसों की अमानुषिक कार्रवाइयां होती रहती हैं। राक्षसों के आतंकी हमले तब तक कारगर होंगे ही नहीं जब तक उन्हें हथियारों, पैसों, आसूचनाओं आदि के बारे में आश्वस्ति न रहे। लंका आतंक का निर्यात भी करती है और प्रायोजन भी। यदि कभी उसके आतंकियों की ज्यादा पिटाई पड़ जाए तो वे रोएंगे अपनी उसी सैंक्चुअरी में जाकर, जहां शूर्पणखा रोई थी– रावण के सामने। आतंकवाद लंका की स्टेट पॉलिसी का इंस्ट्रूमेंट है, वह लंका की कूटनीति का प्रतिस्थापक है। जिस तरह से ईरान ने हेजबोल्लाह को लेबनान में इस्तेमाल किया, रावण मारीच और सुबाहु, शूर्पणखा–खर–दूषण–त्रिशिरा का इस्तेमाल करता है। रावण राम से युद्ध नहीं शुरू करता, वह तो सिर्फ उकसावा देता है। तय तो राम को करना है कि क्या युद्ध किया जाए, अभेद्य लंका के विरुद्ध। रावण की स्वर्ण की लंका "ओनरशिप आतंकवाद" का अच्छा उदाहरण है। अकूत पैसा है आतंक के प्रायोजक राज्य के पास। ओसामा एक सऊदी करोड़पति है, दाउद अब्राहम के पास तमाम तरह का "गंदा पैसा" है। टाइगर मेमन, अयूब मेमन, छोटा शकील किसके पास पाप की कमाई की कमी है ?जब दुनिया में– समकालीन दुनिया में– आतंकवाद के शुरूआती दिन थे, कार्लोस द जकाल ने वियना में तेल उत्पादक देशों के 11 तेल मंत्रियों का अपहरण कर करोड़ों डॉलर की फिरौती प्राप्त की थी। लंका में भी बहुत पैसा था। लंका के "कनक कोट" दरवाजों और "स्वर्णिम महलों" की चर्चा शास्त्रों में बहुत की गई है। लेकिन उसी का कड़वा सच यह भी है कि लंका उस समय "दुष्ट राज्य" (Rogue

state) थी। वहां से दुनिया के अलग–अलग स्थानों पर आक्रमण होते रहते थे। यदि दुष्ट राज्य की परिभाषा अवज्ञाकारी, उपद्रवकारी, स्वैराचारी, हिंसक राज्य के रूप में की गई है, तो लंका तब उसे चरितार्थ करती ही थी। जिस तरह से नोम चौम्स्की के अनुसार दुष्ट राज्य को अपनी विश्वसनीयता बनाए रखने के लिए कुछ औपचारिकताएं करनी ही पड़ती हैं, वैसे ही तत्कालीन समय में था जब रावण अपनी विश्वसनीयता के लिए शिव की दुहाई देता था या जैसे आज के दुष्ट राज्य में खुदा के नाम पर किया जा रहा है। लेकिन जैसे कैलाश हिलाने को भी यही दुष्टता प्रस्तुत रहती थी, उसी तरह से खुदा को भी चैलेंज करने वाले लोग उसी मानसिकता में मौजूद थे। याद कीजिए, वो पंक्तियां: *"तुझको मालूम है लेता था कोई नाम तेरा/ कुव्वते–बाजू–ए–मुस्लिम ने किया काम तेरा।"* एक प्रसिद्ध शायर ने कहीं कहा है। खुदा पर भी शारीरिक शक्ति का अहसान। रावण भी शिव के पास इसी तेवर में जाता है। राम के साथ लंका–प्रायोजित आतंक की कोई मौरली रिलेटिविस्ट (नैतिक आपेक्षिकतावादी) तुलना उसी तरह नहीं भी जिस तरह से आज भारत की किसी आतंक–निर्यातक देश से नहीं है।

मुझे याद है कि कभी हिन्दी साहित्य के एक बुद्धिजीवी ने अपनी पत्रिका के संपादकीय में हनुमान के लंका दहन का उदाहरण देते हुए उन्हें इतिहास का प्रथम आतंकवादी कहा था। मेरे पास दकन क्रानिकल का दस जनवरी 2002 का वह अंक आज भी है जिसमें इस संपादकीय की खबर बनाई गई थी। लेकिन संभवतः उन बुद्धिजीवी ने राक्षसी आतंक की यह पूरी पृष्ठभूमि नहीं पढ़ी होगी। उन्होंने नहीं पढ़ा होगा तुलसी का यह वर्णन ***"जेहि जेहि देश धेनु द्विज पावहिं/नगर गाउँ पुर आगि लगावहिं"*** : जिस–जिस स्थान में वे गौ और ब्राह्मणों को पाते थे, उसी नगर, गांव और पुरवे में आग लगा देते थे तो उसकी परिणति यह होनी ही थी कि वह एक दिन आताः ***"जरइ नगर भा लोग बिहाला/झपटलपट बहु कोटि कराला।"*** हनुमान का लंका–दहन तो राक्षसों के आतंकी ठियों को उनके प्रशिक्षण कैंपों को वहीं घुसकर भस्मसात करना है। वह उतना प्रि–एम्प्टिव भी नहीं है जितना कि आतंक के विरुद्ध आजकल रूस, इस्राइल और संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे "चुने हुए" देश कर रहे हैं। "बुश सिद्धांत" यह था कि संयुक्त राज्य को अधिकार है कि अपने देश की आक्रामक तरीके से हिफाजत उन देशों के विरुद्ध करे जो आतंकवादी समूहों को शरण देते या मदद करते हैं। हनुमान की प्रतिक्रिया तो खतरे की बू सूंघने की भी नहीं है, खतरों को झेलकर त्रस्त हो चुके लोगों की ओर से की गई प्रतिक्रिया है। स्वयं तुलसी ने इसे स्पष्ट किया : ***"साधु अवग्या कर फलु ऐसा/जरइ नगर अनाथ कर जैसा।"*** क्या यह प्रति–आतंकवाद था ? क्या कालिदास ने कुमारसंभव में यही कहा था: ***साम्येत्प्रत्यपकारेण दुर्जन*** : कि दुष्ट व्यक्ति प्रत्यपकार से ही शांत होता है, उपकार से नहीं।

तु.मा.भा. मार्च 2009

तत्कालीन सचिव, सह आयुक्त, जनसंपर्क विभाग, भोपाल (म.प्र.)

ys[k

gueku th dk eu t eV

ik- Mk- e t gj u d oh

इसी वर्ष सितम्बर माह में एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना घटित हुई। कुछ लोगों ने पवनपुत्र हनुमान जी के जीवन से मैनेजमेंट (प्रबंधन) के गुर कैसे सीखें विषय पर छत्तीसगढ़ के रायपुर स्थित कुशाभाऊ ठाकरे विश्वविद्यालय के पत्रकारिता संस्थान परिसर में हनुमान पर अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार के आयोजन को भगवाकरण के एक और प्रयास की संज्ञा देते हुए इसका मुखर विरोध किया। इस घटना ने मुझे उद्वेलित किया क्योंकि मैं नहीं समझता कि भगवान राम के इस दूत के व्यक्तित्व और कृतित्व पर आधारित किसी सेमिनार के आयोजन के विरोध का ज़ाहिरी तौर पर कोई उचित कारण है। हनुमान जी का सिर्फ पौराणिक महत्व नहीं है। उनके सुपरमैन जैसे व्यक्तित्व की उचित व्याख्या समय की मांग है। उनको धर्म विशेष से जोड़ना घोर अन्याय है। हमारे देश में ये परंपरा चल पड़ी है कि हमें किसी दूसरे धर्म के आराध्य के बारे में जानना ही नहीं चाहिए। हम सिर्फ अपने धर्म के लोगों के व्यक्तित्व पर संगोष्ठी आयोजित करेंगे। यदि कोई इस परंपरा से अलग हट कर प्रयास करना भी चाहता है तो उसे दोनों ही समुदाय के लोगों का विरोध झेलना पड़ता है। इसी कारण इंटरफेथ अंडरस्टैंडिंग (एक दूसरे के धर्म को समझना) में लगातर कमी आती जा रही है। परिणामतः सामाजिक समरसता की अवधारणा को अपूरणीय क्षति पहुंची है। छत्तीसगढ़ की घटना को इसी परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिए और इस गलत परंपरा के उन्मूलन हेतु इंटरफेथ डायलाग (एक दूसरे के धर्म और उसके नायकों की जानकारी हेतु संवाद) को अभियान के रूप में प्रारंभ करने की तत्काल आवश्यकता है। यदि विरोध करने वाले लोगों को यह ज्ञात होता कि हनुमान जी का चरित्र कॉरपोरेट जगत के लिए कितना प्रासंगिक है तो संभवतः वे विरोध के स्थान पर इस सेमिनार का स्वागत करते।

वास्तव में हनुमान जी के कार्यों से हम ऐसी अनेकों समस्याओं का समाधान कर सकते हैं जिससे कॉरपोरेट जगत वर्तमान में ग्रस्त है। अधिकांश बहुराष्ट्रीय कंपनियों में इमोशनल इंटेलिजेंस, लीडरशिप, कर्मचारियों में मोटिवेशन और डेडिकेशन की कमी उनमें प्रो–एक्टिव अप्रोच न होना, निर्णय लेने व उद्योगों में

तकनीकी क्रांति के कारण हो रहे लगातार परिवर्तनों का सामना करने हेतु रणनीति बनाने की क्षमता का अभाव जैसी समस्याओं से जूझ रहा है। हनुमान जी के चरित्र की आधुनिक व्याख्या उद्योग जगत को ऐसी समस्याओं से निदान दिला सकती है। उदाहरणतः हनुमान जी के सूक्ष्म ओर विराट रूप से हमें ये सन्देश मिलता है कि हमेशा ताकत ही काम नहीं करती बल्कि समय और मांग के अनुसार हमें अपनी भूमिका सुनिश्चित करनी चाहिए। जब अपने स्वामी या संगठन को कांफिडेंस दिलाना हो तो अपना विराट रूप दिखाना चाहिए और जब लंका में प्रवेश करना हो तो सूक्ष्म रूप बेहतर विकल्प है। ये सर्वविदित तथ्य है कि जब हनुमान जी लंका की ओर जा रहे थे तब सुरसा राक्षसी ने उन्हें खाने की चेष्टा की। इस पर हनुमान जी ने अपना स्वरूप विकराल कर लिया। उनकी देखा–देखी सुरसा भी विकराल रूप में आ गई। तभी हनुमान जी अत्यंत सूक्ष्म रूप में आकर उसके मुख के अंदर गए और तत्काल बाहर आ गए। तब उन्होंने इस लीला से यह शिक्षा दी कि किसी को आगे बढ़ते देख उससे दूने बनने की होड़ में मनुष्य कभी भी सफलता हासिल नहीं कर सकता। आवश्यकता पड़ने पर संजीवनी बूटी के लिए पूरा पहाड़ भी उठाकर लाया जा सकता है। मानव संसाधन के बदलते रूप में आज भी ऐसे कार्मिकों की जरूरत बताई जा रही है, जो संस्थान में हर तरह का काम कर सकें। उन्हें अपने मूल काम के अलावा कंपनी के अन्य विभागों के काम की जानकारी भी होनी चाहिए। जरूरत पड़ने पर वे संदेशवाहक अथवा मालिक के प्रतिनिधि के तौर पर काम कर सकें। इसमें भी मानव संसाधन विभाग की भूमिका जामवंत की तरह महत्वपूर्ण हो जाती है जो हनुमान जैसे कार्मिकों को उनकी क्षमताएं याद दिलाएं।

अपने स्वामी में अगाध आस्था और उनके लिए कुछ भी कर गुजरने की सोच को आज भी अपनाया जा सकता है। रावण के सैनिकों द्वारा पकड़े जाने पर हनुमान ने अपना आत्मविश्वास नहीं खोया। उन्होंने राम के दूत के तौर पर रावण से बात की। जब रावण नहीं माना और उनकी पूंछ में आग लगा दी तो उन्होंने बिना शीर्ष नेतृत्व के संकेत का इंतजार किए अपने स्तर पर निर्णय किया और पूरी लंका में आग लगा दी।

लंका में अपने पहले ही भ्रमण में हनुमान ने विभीषण की खोज भी की। उन्हें पता था कि दुश्मन की नगरी में श्रीराम के पक्ष का एक भी व्यक्ति हुआ तो युद्ध में बहुत काम आ सकता है। विभीषण ने हनुमान को अपना दुख बताया कि वे दांतों के बीच जिह्वा की तरह लंका में रह रहे हैं। यानी चारों ओर अलग विचारों और क्षमताओं वाले लोग हैं और वे खुद को वहां फंसा हुआ सा महसूस करते हैं।

हनुमान ने इस स्थिति को समझा कि दुश्मन की नगरी में एक व्यक्ति को अपने पक्ष में किया जा सकता है। भले ही विभीषण पहले से श्रीराम के भक्त रहें हो, लेकिन लंका की अपनी पहली ही यात्रा में हनुमान ने उन्हें श्रीराम की सेना का हिस्सा बना दिया था। बाद में विभीषण ने ही राम को बताया कि रावण की नाभि में जमा अमृत कलश को नष्ट किए बिना रावण नहीं मर सकता। शिक्षा ग्रहण करने के बाद हमेशा सुरक्षा जोन से निकलकर अपने कैरियर की शुरूआत करनी चाहिए। इसके बाद ही असली सफलता का मजा आता है। हनुमानजी एक राजा के पुत्र थे, लेकिन इसके बाद भी उन्होंने सुग्रीव के सचिव के तौर पर अपना कैरियर शुरू किया। सचिव पद पर रहते हुए

उन्होंने बड़े से बड़े कार्य आसानी से कर दिए और राम के हृदय में ऐसी जगह बनाई जो कभी हट नहीं सकती। वह ऐसे कर्मचारी बने जो मालिक पर उपकार करे और सदैव उसका प्रिय बना रहे। हनुमानजी की तरह मनुष्य को अपनी विद्वत्ता का इस्तेमाल समय–समय पर करते रहना चाहिए। हनुमानजी की तरह शिक्षा हमें त्याग करना सिखाती है। अपने आपको बढ़ा–चढ़ाकर दिखाने में मनुष्य कभी सफल नहीं होता। लघु होकर भी मनुष्य अपने कारज में सफल हो सकता है। हनुमान जी का जिक्र जब भी पौराणिक कथाओं में आता है, तब वे किसी सुपरहीरो से कम नहीं लगते। बजरंगबली के जिक्र का मतलब ही सरल शब्दों में जीवन का गूढ़ सार दर्शाता है।

समुद्र में पुल बनाते समय उपेक्षित कमजोर और उच्छृंखल वानर सेना से भी कार्य निकलवाना उनकी विशिष्ठ संगठनात्मक योग्यता का परिचायक है। ये बातें उनकी नेतृत्व क्षमता को दिखाती हैं। हनुमान जी के व्यक्तित्व से हमें लगन और समर्पण सीखने को मिलता है। हनुमान जी के ब्रह्मचर्य के समक्ष कामदेव भी नतमस्तक थे।

सीता जी से हनुमान पहली बार रावण की अशोक वाटिका में मिले, इस कारण सीता उन्हें नहीं पहचानती थी। एक वानर से श्रीराम का समाचार सुन वह आशंकित भी हुईं। परन्तु हनुमान जी ने अपने "संवाद कौशल" से उन्हें भरोसा दिला ही दिया। यह उनकी कम्युनिकेशन स्किल्स का एक सफल उदाहरण है। प्रेजेंस ऑफ माइंड हनुमान जी ने समुद्र पार करते समय सुरसा से लड़ने में समय नहीं गंवाकर दर्शाया, लंका में रावण के उपवन में हनुमान जी पर मेघनाद ने "ब्रह्मास्त्र" का प्रयोग किया। हनुमान जी इसका तोड़ निकाल सकते थे, लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया, क्योंकि वे ब्रह्मास्त्र का महत्व कम नहीं करना चाहते थे। अर्थात् उन्होंने दिखाया कि मूल्यों (Values) पर सदैव टिके रहना चाहिए।

सीता जी के सामने हनुमान ने खुद को लघु रूप में रखा, क्योंकि यहां वह पुत्र की भूमिका में थे। परन्तु संहारक के रूप में वह दर्शकों के लिए काल बन गए। हालात देखकर कदम उठाना हनुमान से सीखना चाहिए। मैनेजमेंट जगत में उनके इस कार्य को Contigency Approach और Situation Analysis कहा जाता है।

सुरसा वाले कांड में ही उनकी प्रॉब्लम सॉल्विंग एप्रोच (समस्या के हल हेतु प्रतिबद्धता) का पता चलता है। लक्ष्मण जी की जान बचाने के लिए हनुमान जी पूरा पहाड़ उठा लाए, क्योंकि वह संजीवनी बूटी नहीं पहचानते थे। हनुमान जी यहां हमें सिखाते हैं कि मनुष्य को शंका स्वरूप नहीं, वरन समाधान स्वरूप होना चाहिए।

(लेखक अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त मैनेजमेंट गुरु व वर्तमान में डॉ. वीरेंद्र स्वरूप ग्रुप ऑफ़ इंस्टीट्यूशन्स में महानिदेशक के पद पर कार्यरत हैं।)

डायरेक्टर जनरल, वीरेन्द्रस्वरूप ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन्स

ys[k

cy vkj cf) dk leUo; % lUnjdk.M

noUn dekj jkor

हमारे जीवन में सुन्दरकाण्ड का जितना आध्यात्मिक महत्व है उतना ही हमारे सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक क्षेत्र में भी यह उपयोगी है। इसलिये भले ही हम सब संपूर्ण श्रीरामचरित मानस का पाठ न कर पायें लेकिन सुन्दरकाण्ड पाठ तो हर मंगलवार को कर ही लेते हैं। इसके पीछे इसके मुख्य पात्र श्री हनुमानजी का व्यक्तित्व और कृतित्व है जो संकटमोचक के रूप में सामने आता है। भगवान श्रीराम श्री हनुमान की विनम्रता, सेवा, त्याग, साहस, धैर्य एवं समग्र दृष्टि से कहा जाये तो उनके ज्ञान, वैराग्य और भक्ति की प्रशंसा करते हुए थकते नहीं हैं। वहीं श्री हनुमान में अभिमान का लेश मात्र भी नहीं दिखाई देता है। यह उनका आध्यात्मिक पक्ष है। इसका मानवीय पक्ष यह है कि इनके चरित्र का थोड़ा सा भी भाग यदि हम सबके जीवन में आ जाता है तो न केवल हम अपनी बल्कि समाज, राष्ट्र और विश्व की समस्याओं के समाधान सूत्र भी खोज सकते हैं। इसी संदर्भ में सबसे पहले यदि वर्तमान राजनीतिक समस्याओं के संदर्भ में देखें तो हमारे राजनीतिक दल अपने चुनाव प्रचार के समय और प्रायः विरोध की राजनीति के चलते जनमानस में ऐसा दुष्प्रचार कर देते हैं कि जनता की सोयी हुई शक्ति जाग्रत होकर असंतुलित स्थिति में आ जाती है। इस कारण तोड़–फोड़, मारधाड़ की स्थिति निर्मित होती है तब जन धन की अपार हानि के बाद स्थितियाँ नियंत्रण में हो पाती हैं किन्तु विष–विचार तो स्थायी रूप से समाज में वर्ग–हिंसा को बढ़ाते ही रहते हैं। वापिस पुनः शांति की स्थिति अपनाना संभव नहीं हो पाता है। इस प्रकार की समस्या से आज पूरा विश्व जूझ रहा है और हम तृतीय विश्वयुद्ध की ओर बढ़ रहे हैं तब सुन्दरकाण्ड की पृष्ठभूमि में रचा गया यह प्रसंग जो किष्किंधाकाण्ड के समापन पर है, लेकिन सुन्दरकाण्ड की नींव है, बहुत ही प्रासंगिक हो जाता है। सब वानरों के सामने श्री सीताजी की खोज के लिये सौ योजन का समुद्र पार करने का लक्ष्य सामने है। परमपूज्य प्रातः स्मरणीय पंडित रामकिंकर उपाध्याय ने तो इस आध्यात्मिक प्रसंग को हम सबके जीवन से जोड़कर विश्व को बता दिया है कि शांति, शक्ति, भक्ति तथा श्रीरूपी सीताजी को प्राप्त करना तो सभी का लक्ष्य है और विश्व भी इसी दौड़ में शामिल है पर इस समस्या के समाधान में हम सबकी

क्या भूमिका होनी चाहिए ताकि हम सबके जीवन में भौतिक और आध्यात्मिक समृद्धि तो आ जाए पर समाधान का तरीका शांतिपूर्ण हो। इसी खोज में सभी वानर समुद्र तट पर बैठे हुए हैं तथा अपने–अपने बल का बखान कर रहे हैं। इनमें तीन तरह के व्यक्ति सामने आते हैं जो समस्याओं के समाधान के संदर्भ में तीन प्रकार की विचारधारा का प्रतिनिधित्व करते हैं। सबसे पहले युवराज अंगद जैसे व्यक्ति हैं जो कहते हैं मैं समुद्र पार जाकर श्री सीताजी का पता तो लगा सकता हूँ पर वापिस लौटकर आने में संदेह है अर्थात् इस प्रकार का वर्ग किसी समस्या का आधा समाधान ही जानता है पर इससे तो समाज राष्ट्र की समस्याएं हल नहीं होंगी। दूसरे विचारधारा का प्रतिनिधित्व जामवंत जी करते हैं जो कहते हैं ***"बलि बाँधत प्रभु बाढेउ सो तनु बरनि न जाइ। उभय घरी महुँ दीन्ही सात प्रदन्छिन धाइ"*** अर्थात् जब मैं युवा था तब प्रभु के विराट (स्वरूप) की दो घड़ी में सात परिक्रमाएं कर ली थीं। आज का सौयोजन समुद्र पार करना कौनसी बड़ी बात थी। पर समस्याएं तो वर्तमान में ही हल होना चाहिए इस दृष्टि से जामवंत जी का यह सब कहना वर्तमान के लिये कोई मायने नहीं रखता है। तीसरी विचारधारा का प्रतिनिधित्व श्री हनुमान करते हैं पर वे चुप बैठे हैं। जामवंत जी उनके इस स्वरूप को जानकर उन्हें जगाने का प्रयास करते हैं और वे जाग भी जाते हैं। लेकिन जाग कर वे जो कहते हैं यदि वह सब कर देते, जिसमें कि वे सक्षम भी हैं, तो सुन्दरकाण्ड का जन्म नहीं हो पाता, आगे की श्रीरामकथा का तो प्रश्न ही नहीं उठता। तब हम सुन्दरकाण्ड, लंकाकाण्ड और उत्तरकाण्ड जैसे जीवन उपयोगी प्रसंगों से अपरिचित ही रहते। जरा देखिये जामवंत जी के जगाने के बाद श्री हनुमान ने क्या कहा ***"सहित सहाय रावनहि मारी आनउँ इहाँ त्रिकूट उपारी।"*** अर्थात् सेना समेत रावण को मारकर त्रिकूट पर्वत को उखाड़कर यहाँ ले आउँ। विचारिये, यदि जामवंत जी यह सब कह देते कि चलो हनुमान जी जो कह रहे हैं वो सब करके दें तो प्रभु बहुत प्रसन्न होंगे, तब क्या होता ? लेकिन जामवंत जी तो परम विवेकी हैं उन्होंने तब श्रीहनुमान से कहा–***"एतना करहु तात तुम्ह जाई सीतहि देखि कहहु सुधि आई।"*** यहाँ श्री हनुमान जी भी अपनी असीमित शक्ति को संयमित करना जानते हैं इसलिये वे भी जामवंत से पूछते हैं। परिणाम सकारात्मक होता है ओर सुन्दरकाण्ड की रचना का आधार तैयार हो जाता है। जिसमें वे विभिन्न प्रकार की बाधाओं को पार कर सीताजी के पास पहुँचकर श्रीराम का संदेश उन्हें सुनाते हैं और लंका दहन करके सकुशल लौटकर श्रीराम जी को सीताजी की कुशलता का समाचार देते हैं। यह प्रसंग हमें बताता है कि हम जनता की सोयी हुई शक्ति तो जगायें पर उसे सकारात्मक दिशा की ओर मोड़ें तो समस्याओं का सुरसा के समान होकर भी उचित समाधान हो सकता है। यहाँ जामवंत और श्री हनुमान के संवाद में बल और बुद्धि का उचित समन्वय दिखाई देता है। सामाजिक दृष्टि से इस प्रसंग को देखें तो लगता है श्री हनुमान जी ने अपनी असीमित सामर्थ्य से अपने वानर–समूह में कभी ईर्ष्या–द्वेष उत्पन्न नहीं होने दिया, न ही उन्होंने उन सभी वानरों में हीनता ही आने दी अन्यथा रामकाज में सभी वानरों का योगदान नगण्य हो जाता और ऐसे समाज में निष्क्रियता आने में भी देर नहीं होती। यह सब उन्होंने बल बुद्धि के समन्वय से ही

किया। नेतृत्व में यही गुण होना चाहिये। जिस प्रकार सभी के योगदान को महत्व मिलने से घर–परिवार ऊँचा उठ जाता है उसी तरह समाज–राष्ट्र के विकास के लिये सामूहिक नेतृत्व की आवश्यकता होती है। आर्थिक दृष्टि से इस काण्ड का महत्व तो और भी अधिक है। धन–वैभव को कौन नहीं चाहता और सीताजी तो साक्षात् लक्ष्मी हैं किन्तु उन्होंने रावण को बताया कि तुम्हारा यह प्रयास केवल भौतिक बल की दृष्टि से भले ही सफल हो किन्तु इसका अन्ततः परिणाम अच्छा नहीं होगा। आज विश्व भी इसी भौतिक ताप से ज्यादा परेशान है। जिस अर्थ से संसार सुखी होता है वह पृथ्वी के अत्यधिक दोहन से अनर्थ का मूल बनता जा रहा है और हमारी बुद्धि ये निर्णय नहीं कर पा रही है कि हम क्या करें क्या न करें ? ऐसी मानसिक द्वंद्व की स्थितियों में हम बुद्धि के अभाव में और बल के प्रभाव में आकर कार्य करते हैं। तब इसका विपरीत प्रभाव न केवल मनुष्यों, जीव–जन्तुओं बल्कि प्रकृति पर भी पड़ता है। अब तो गर्म होती पृथ्वी को विज्ञान के भरोसे नहीं बचाया जा सकता है ऐसा वैज्ञानिक भी मानने लगे हैं और वे भले ही धर्म–अध्यात्म से सीधे जुड़े हुए न हों पर ये तो कह रहे हैं कि संसाधनों के सीमित उपयोग व अपेक्षाओं में कमी लाना जरूरी हो गया है। इस दृष्टि से रावण की लंका में भौतिक विकास की तो पराकाष्ठा थी। उसने दैहिक और दैविक सुखों तक को अपने अधीन कर लिया था। पर जिस भौतिक विकास को उसने अपने बल से प्राप्त किया था वही भौतिक ताप बनकर उसके विनाश का कारण भी बन गया। श्री हनुमानजी ने तो लंका पहुंच कर जो देखा–सुना उसके ही आधार पर रावण के बल का तो बखान किया पर उसकी बुद्धि–विवेक की कमी का भी उल्लेख किया था। लिखा है ***"जाके बल लवलेस ते जितेहूँ चराचर झारि"*** अर्थात् लेशमात्र बल पाकर तुमने सचराचर को जीत लिया है मैं उनका ही दूत हूँ। हम मनुष्यों के साथ भी तो कभी–कभी यही स्थिति देखी जाती है कि सृष्टि के असीमित विस्तार को देखते हुए भी हम अपने अनुसार सभी को चलाना चाहते हैं जबकि ब्रह्माण्ड की दृष्टि से आदमी की शक्ति नगण्य है। इस प्रकार का सोच और सामर्थ्य हमारी बुद्धि–हीनता का ही तो प्रमाण है। अतः स्पष्ट है कि श्री हनुमान जी के बल बुद्धि के समन्वय की कथा केवल धर्म–अध्यात्म का विषय नहीं है बल्कि हम सबके सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक जीवन से भी सरोकार रखती है इसलिए समस्याओं की सुरसा ने श्री हनुमान में बल बुद्धि का अद्भुत समन्वय देखकर उन्हें आशीर्वाद देते हुए कहा था –

"रामकाज सब करिहहु तुम्ह बल बुद्धि निधान,
आसिष देइ गई सो हरषि चले हनुमान।"

मानस भवन, भोपाल

ys[k

eku l 'kdk lek/kku ¼lqUnj dkM½

jke'kj.k frokjh

किसी घटना के वर्णन में अतिशयोक्ति हो या सच्चाई का अभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता हो तो शंका होना स्वाभाविक है। तुलसीकृत रामचरित मानस में भी कई वर्णन शंकाओं से परे नहीं हैं। हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि राम चरित मानस की रचना चार सौ वर्ष पूर्व हुई थी। तब लोगों की सोच सर्वथा भिन्न थी। अराजकता, शिक्षा का अभाव और मुगलों की गुलामी से समाज त्रस्त था। ऐसे समय में संत तुलसीदास ने रामायण महाकाव्य की रचना लोक भाषा (अवधी) में की। मर्यादा पुरुषोत्तम राम की कहानी और वह भी जन–जन की भाषा में, लोकप्रिय तो होना ही थी। शायद तुलसीदास ने भी नहीं सोचा था कि उनकी रचना घर–घर में पढ़ी जायेगी। क्या हुआ यह महत्वपूर्ण था। जनमानस में शंकाओं की गुंजाइश नहीं के बराबर थी।

फिर भी जिज्ञासा स्वाभाविक है। अगर किसी घटना का वर्णन सच्चाई से परे है तो सच्चाई या संभावित सच्चाई क्या हो सकती है ? तुलसीदास की विद्वत्ता और शब्द भंडार शंकाओं से परे है। चालीस के दशक में एक पुस्तक छपी थी ”मानस शंका समाधान“। हमने भी पढ़ी। लेखक की धारणा थी कि रामचरित मानस में वर्णित सभी घटनाएँ सही हैं। कुछ शंकाओं पर लेखक ने समाधान सुझाये थे लेकिन कई शंकाओं के समाधान उनके वश के नहीं थे तो गोलमोल लेखन का सहारा लिया। खैर..... शंकाएं स्वाभाविक हैं अतः उनका कुछ न कुछ समाधान भी होना चाहिये। रामचरित मानस में सुन्दरकांड का अपना महत्व है अतः उसी कांड की शंकाओं पर और उनके समाधान (संभावित सच्चाई और कहीं कहीं अर्ध व्यंग्य) इस लेख का प्रयोजन हैं –

1- 'kdk % हम सुन्दरकांड की नीचे लिखी उक्ति पर चिंतन करें। भारत और लंका के बीच सौ योजन अर्थात् तेरह सौ किलोमीटर सागर बताया गया है। सागर को हनुमान जी उड़कर पार करते हैं क्या वह पक्षी थे जो उड़ सकते थे। मनुष्य उड़ नहीं सकता। अतः उस उक्ति का क्या अर्थ निकाला जाये ?

lek/kku% शंका स्वाभाविक है। दो बातें ध्यान देने योग्य हैं–भारत तट से लंका

की दूरी और उड़कर जाने की क्षमता। दूरी तो काल्पनिक हैं लेकिन सौ पचास किलोमीटर भी हो तो उड़कर कैसे पार जा सकते हैं। इसका मतलब है कि लंका की दूरी 20–25 किलोमीटर से अधिक नहीं थी और हनुमान जी तैर कर वहाँ पहुँच गये। उक्ति को अतिशयोक्ति के दायरे में लाना ही उचित लगता है।

2- 'kdk % वायुमार्ग में सुरसा ने हनुमान का रास्ता रोक लिया, उसे खाना चाहती थी। हनुमान जी सुरसा का भोजन बनने के लिये तैयार नहीं हुए तो सुरसा ने अपना मुँह बढ़ाकर एक योजन कर लिया तो हनुमान ने अपना शरीर दो योजन कर लिया आदि।

lek/kku % वाह, एक योजन का मतलब होता है चार कोस (तेरह किलोमीटर)। आगे भी है सोलह, बत्तीस आदि। हँसी–मजाक क्षम्य है लेकिन एक सीमा तक। चलो लिख दिया तो लिख दिया, बाकी अर्थ पाठक स्वयं निकाल लें। हुआ यह कि तैराकी में हनुमान जी दक्ष थे। ताकतवर तो थे ही। सामने एक शार्क मुँह फैलाकर झपटा तो हनुमान जी फुर्ती से एक तरफ हो गये। शार्क की समझ में नहीं आया कि सामने कौन सा प्राणी है ? खाने लायक है कि नहीं जब तक शार्क मुड़कर हमला करता हनुमान जी काफी आगे निकल गये थे। हनुमान जी ने इतनी बड़ी मछली पहले नहीं देखी थी अतः रास्ते भर सोचते रहे वह था क्या ?

3- 'kdk %मसक समान रूप कपि धरी.....

वाह, हनुमान जी कभी अपना शरीर इतना बढ़ा लेते हैं कि एक हिस्सा तंजौर तक पहुंच जाये फिर इतना छोटा कर लेते हैं कि नजर ही न आये। अरे हमें भी तो पता लगे यह कैसे संभव है ?जादूगर लोग भी कई तरह के करतब दिखाते हैं लेकिन अपने शरीर को छोटा बड़ा करना उनसे भी नहीं होता। प्रकृति के नियम अकाट्य हैं।

lek/kku % लंकिनी, पहरेदारों की मुखिया थी। बिना छानबीन लंका में प्रवेश की इजाजत कैसे दे सकती थी ? हनुमान जी बिना रोक टोक के प्रवेश कर ही नहीं सकते थे। पहरेदारों की संख्या अधिक नहीं थी। युद्ध हुआ और दो तीन को छोड़कर सभी पहरेदार मारे गये। अंत में बचे खुचे लोगों ने मुख्य द्वार खोल ही दिया। हनुमान जी की ताकत और युद्ध कुशलता देखकर उनकी समझ में आ गया था कि वे भी मारे जायेंगे। उन्हें यह विश्वास नहीं था कि राजधानी के सैनिक हनुमान जी को बन्दी बना ही लेंगे।

4- 'kdk % जब हनुमान जी वानर नहीं बल्कि मनुष्य थे और उनकी पूंछ नहीं थी तो रावण ने पूंछ में तेल और कपड़ा बांधकर आग लगाने का आदेश दिया, यह बात समझ से परे है।

lek/kku % मानसकार दिखाना चाहते थे कि हनुमान कितना चालाक और फुर्तीला था तो यह कहानी गढ़ ली। क्या लंका के भवन लकड़ी के बने थे जो जलने लगे ? फिर लंका एक देश था और अब भी है, सिर्फ एक शहर नहीं। हाँ यह मान सकते हैं कि दूत को मारना राजनीति के विरुद्ध होने के कारण रावण ने आदेश दिया होगा कि हनुमान के हाथों को जला दिया जाये क्योंकि इन्हीं हाथों से उसने अक्षय कुमार को मारा है। जब सेवक दो–तीन जलती मशाल लेकर उनके हाथ जलाने पहुँचे तो हनुमान ने फुर्ती से मशाल छीने और बाहर की ओर दौड़ लगा दी। रास्ते में जहाँ–तहाँ आग भी लगाते गये और समुद्र में छलांग लगा दी। दस बारह घंटों में सारी घटना घट गई। सुबह से खुला राजधानी का मुख्य द्वार शाम को भी खुला रह गया था। छानबीन चल रही थी कि घुसपैठिये के लिये द्वार किसने और क्यों खोला ? पीछे भागकर आते

हुए सैनिक हाथ मलते रह गये।

5- 'kadk% नल और नील इंजीनियर रहे होंगे लेकिन गहरे समुद्र में और वह भी बीस पच्चीस किलोमीटर लंबा पुल कैसे बाँध लिया। न सीमेंट, न इस्पात की छड़ें, न ईंट ,न अन्य कोई निर्माण सामग्री। हमें लगता है पुल बना ही नहीं। फिर सेना लंका कैसे पहुँची ?

lek/kku% मानसकार ने पुल निर्माण पर दो–चार लाइन में जो कहना था कह दिया। देखियेः

"सैल बिसाल आनि कपि देहीं।
कंदुक इव, नल नील ते लेही।
देखि सेतु अति सुन्दर रचना।
बिहसि कृपा निधि बोले बचना।।"

मानसकार को वर्णन में महारत हासिल थी। किष्किंधा में बालि–वध के बाद राम लक्ष्मण पर्वत की एक गुफा में लंबी अवधि तक रहे तो एक–एक रितु के वर्णन में तीस बत्तीस चौपाइयाँ लिख डाली गईं लेकिन पुल निर्माण का वर्णन एक चौपाई में पूरा। यदि पुल का निर्माण हुआ होता तो सालों लग जाते। पत्थर तैरने वाले हों तो भी आपस में जुड़ें नहीं रह सकते। असल में पुल बनाना संभव नहीं था और बना भी नहीं।

6- 'kadk% यदि सागर में पुल नहीं बना तो सेना समुद्र के पार लंका कैसे पहुँचीं। क्या राम रावण युद्ध की कहानी मन–गढ़ंत है ?

lek/kku% कौन कहता है कि राम–रावण युद्ध की कहानी मनगढ़ंत है। सारी दुनिया में रामायण की कहानी कही और सुनी जाती है। कहीं–कहीं राम बदल गये हैं। राम की सेना में आठ दस हजार सैनिक रहे होंगे। समुद्र पार कैसे जाएँ ? प्रमुख लोग बैठकर गंभीर चर्चा करने लगे। सब भारत के मध्य भाग में रहने वाले थे, कोई उपाय नहीं सूझ रहा था। तब विभीषण ने उपाय सुझाया। हमारी सेना में आठ दस हजार सैनिक हैं। रावण की सेना भी इससे बड़ी नहीं है, फिर भी लड़ाई बराबर की है अतः पूरी सेना का लंका पहुँचना आवश्यक है। एक ही उपाय है। चारों तरफ मछुआरों की बस्ती है और सभी मछुआरों के पास नावें हैं। एक–एक नाव में पाँच–छह सैनिक आराम से बैठ सकते हैं। मछुआरे बड़े अच्छे नाविक होते हैं। सेना को पार पहुँचाकर वापस नाव के साथ अपने–अपने गाँव पहुँच जाएंगे। मुझे सब जानते हैं। उनका पारिश्रमिक भुगतान करने की व्यवस्था मैं करा दूंगा। युद्ध में विजय प्राप्त होने पर सभी को स्वर्ण मुद्राएँ अलग से। और फिर क्या था, दो हजार नावों की व्यवस्था तीन–चार दिनों में हो गई और पूरी सेना लंका तट पर पहुँच गई।

लंका कांड की शुरूआत सागर पर पुल बाँधने से होती है। मानसकार ने दर्शाया है कि पुल बनने की जानकारी या यों कहिये कि राम की सेना लंका तट पर पहुँचने की जानकारी जब राक्षस राज रावण को मिली तो उसके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। यह उक्ति सही नहीं है। रावण को पल–पल की जानकारी थी। उनके जासूस हर घटना की जानकारी उन तक पहुँचाते थे। रावण अत्यंत पराक्रमी तो था ही, साथ ही अहंकारी भी था। सेना सुग्रीव की थी जिसने कभी उसे बंदी बनाया था। उसने सोचा पूरी सेना को आ जाने दो, चार छः रोज में राम लक्ष्मण सहित सब को मार गिराएंगे।

ए–3, नेहरू नगर बिलासपुर (छ.ग.)

izlaxo'k

lqUnj dk.M vkj Jh guqer pfjr

i- uohu vkpk;

संत तुलसीदासकृत रामचरितमानस साहित्य की दृष्टि से महाकाव्य ही नहीं है वरन् जीवन–दर्शन, अध्यात्म एवं भक्ति का चरमोत्कर्ष हैं। वस्तुतः हनुमानजी बल, नीति, बुद्धि का चरम हैं। उन्होंने दूत बनकर जिस श्रेष्ठता से श्रीराम का कार्य सम्पन्न किया यह अद्भुत है।

सुन्दर काण्ड में व्याप्त रामकथा संघर्ष, उत्कर्ष और दास्य भक्ति प्रधान है। जामवन्त द्वारा पवनपुत्र को उनके अपरिमित बल और सामर्थ्य से अवगत कराना तथा कामकाज हेतु प्रेरित करना, मार्ग में मेनका, सुरसा, सिंहिका तथा लंकिनी का मिलना पवनसुत के संघर्ष और उत्कर्ष के प्रमाण हैं।

सुन्दरकाण्ड के नामकरण के संबंधित विचार बड़ा ही बुद्धिमत्तापूर्ण है। सीता सामान्य नारी नहीं है। अपहरण के बाद रावण ने सीता को "सुन्दर" पर्वत स्थित अशोक वाटिका में रखा। अतः इस काण्ड का नाम सुन्दरकाण्ड रखा गया। मानस के अन्य काण्डों के नाम व्यक्ति या परिस्थितियों के नाम पर रखे गए हैं। राम की बाललीला के आधार पर "बालकाण्ड", अयोध्या की घटनाओं के आधार पर "अयोध्याकाण्ड", जंगल के जीवन का जीवंत वर्णन अरण्यकाण्ड, किष्किन्धा राज्य का सम्पूर्ण वर्णन किष्किंधाकाण्ड, लंका के युद्ध की चर्चा लंकाकाण्ड, एवं जीवन के संघर्षों का दार्शनिक वर्णन उत्तरकाण्ड में व्यक्त किया है।

लंका त्रिकूटाचल पर बसी हुई थी। तीन पर्वत थे (1) "सुवैल" जहाँ मैदान में युद्ध हुआ था। (2) "नील पर्वत", जहाँ राक्षसों के घर थे। (3) "सुन्दर" जिस पर अशोक वाटिका थी। इस काण्ड की सम्पूर्ण लीला सुन्दर पहाड़ पर प्रारम्भ हुई अतः इस का नाम सुन्दरकाण्ड पड़ा। रामचरितमानस के सुन्दरकाण्ड में हनुमान की बुद्धि, विवेक एवं बल का सुन्दर वर्णन है। दास्य–भक्ति मुखरित हुई है। हनुमान ने सदैव असम्भव को सम्भव किया है। अतः उन्हें महावीर कहा गया है।

सम्पूर्ण लंका काण्ड में युद्ध का ही वर्णन है। इसके पूर्व सेतु का निर्माण एवं रामेश्वरम् का वर्णन है इस सेतु पर से सम्पूर्ण राम दल समुद्र पार करता है। सामरिक दृष्टि से सुवैल पर्वत का महत्व है अतः हनुमान एवं पूरा राम दल वहीं

ठहरता है –

इहाँ सुबेल सैल रघुबीरा।
उतरे सेन सहित अति भीरा।
सिखर एक उतंग अति देखी।
परम रम्य सम सुभ्र बिसेषी।।
(मानस 6/10/1)

हनुमानजी अशोक वाटिका में जाते हैं। वहाँ माता सीता विरह में अति व्याकुल थीं। उस समय हनुमान जी राम की दशा का वर्णन करते हैं जिसे सुन माता सीता को सांत्वना मिलती है एवं वे आश्वस्त होती हैं। सीता के मन का दुःख दूर करने का यह कार्य अद्वितीय है।

उनकी शक्तियों को जागृत करने हेतु भक्तगण मानस के सुन्दरकाण्ड का पाठ करते हैं। भक्तों को हनुमान चालीसा अतिप्रिय है। आदिकवि वाल्मीकि ने पवनसुत हनुमान को परम ज्ञानी, विद्वान, बहुवेशधारी रूप में प्रस्तुत किया है। गोस्वामी जी ने इनकी ज्ञान–गरिमा की वन्दना करते हुए सुन्दरकाण्ड की रचना की है–

विद्या–बल अरु बुद्धि में तुम समान नहीं कोय।
बिना आपकी शरण के कार्य सिद्ध नहीं होय।।

संकटमोचन के नाम से हनुमान जी संसार में प्रसिद्ध हैं।

ए–403, तिरूपति हाइट्स, नानाखेड़ा, उज्जैन (म.प्र.)

तुलसी मानस प्रतिष्ठान का प्रतिष्ठा प्रकाशन

rylh vuØef.kdk

गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित बारहों ग्रंथों की सम्पूर्ण सामग्री की अकारादि क्रम से विवरणिका

ldyudrk&eDr'oj flg

मूल्य रुपये 250:00 पृष्ठ संख्या 365 पक्की जिल्द

सामान्य डाक से मँगाने पर परिवहन शुल्क प्रतिष्ठान वहन करेगा। रजिस्टर्ड डाक से मँगाने पर कृपया रजिस्ट्री शुल्क (रुपये 60 मात्र) साथ भेजें। वी.पी.पी. नहीं भेजी जाती।

व्यवस्थापक

leh{kk

eR;q dh rRo ehekalk

iHkn;ky feJk

dfr	%	चिर सहचरी
y[kd	%	डॉ. जमनालाल बायती
idk'kd	%	तुलसी मानस संस्थान, जयपुर
eY;	%	500 रुपये

डॉ. जमनालाल बायती महाविद्यालयीन सेवा से निवृत्त बहुपठित, विचारवान, और गहन चिंतन धारा के सर्जनशील साहित्यकार हैं। इस समालोच्य पुस्तक में उन्होंने जीवन की सर्वज्ञात, सुनिश्चित और अपरिहार्य सुनिश्चितता मृत्यु का तात्विक विवेचन किया है। महाभारत में यशरूप धर्मराज के "संसार के सबसे बड़े आश्चर्य" के उत्तर में युधिष्ठिर ने कहा था–

"अहन्यहनि भूतानि गच्छन्ति यममंदिरम्
शेषा जीवितुमिछन्ति किमाश्चर्यमितः परम्।"

अर्थात् प्राणिवर्ग को दिन प्रतिदिन मृत्यु को प्राप्त होते देखते हुए भी अन्य सभी जब मृत्यु को अपने से परे देखते हैं तो संसार में इससे बड़ा दूसरा क्या आश्चर्य हो सकता है ?

संभवतः बायती ने इसका कारण खोजा है इस पुस्तक में। उनके अनुसार चूंकि मृत्यु प्रत्येक जीवधारी की "चिर सहचरी" है, अतः उसके साथ रहना और चलना जीवन की एक अपरिहार्य परिस्थिति है। लेखक ने पुस्तक में अपार सामग्री, जिसमें देश–विदेश के अनेक विचारक हैं, तो संकलित की ही है, उसने अपने व्यक्तिगत जीवन के भी ऐसे अनेक उदाहरण प्रस्तुत किये हैं जो पाठक को पुस्तक में तल्लीन रखते हैं। विशेषकर पुस्तक के भाग 2 की सामग्री लेखक और उसके निकट के परिचितों का अपना भोगा हुआ यथार्थ होने से उसकी पूर्ण प्रामाणिकता है।

वेदान्त के प्रवक्ता यह दृढ़मतेन घोषित करते हैं कि गीता के पढ़ने और समझने के लिए एकमात्र शर्त यही बनती है कि वे मृत्यु के भय से अपने आपको सर्वथा मुक्त मानकर चलें। लेखक ने स्वयं भी गीता के दूसरे अध्याय का उदाहरण दिया है–

देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा

तथा देहान्तर्प्राप्तिर्धीस्तत्र न मुह्यति।

गीता 2/13

अर्थात् मृत्यु जीवन का पूर्णविराम कहीं नहीं है। यह केवल शैशवावस्था, युवावस्था अथवा जरावस्था की ही भांति एक अल्प विराम है। जीवन तो एक शाश्वतता है, अटूट, अनंत और अविनश्वर।

किताब का मृत्यु के साथ "चिर सहचरी" का रूपक साहित्यिक दृष्टि से इसलिए खूब फबता है क्योंकि "पुल्लिंगी" जीवन को स्त्रीलिंग की "मृत्यु" जनम–जनम का साथ देने को मिल जाती है। फिर कवियों और विचारकों को इस रहस्य की तह में पहुँच पाने का दावा लेकर चलने में तो अपनी विशेष ख्याति भी प्रकट होती दिखती रही है।

भारतीय मनीषा ने सदा से मृत्यु को एक चुनौती मानकर उस पर विजय का उद्घोष किया हैं। पुरुषसूक्त के यजुर्वेद पाठ (अध्याय 31) के मंत्र 18 में तो वेद के ऋषि ने स्पष्ट घोषणा ही कर दी है–

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।

अर्थात् वेद के इस ऋषि को उस तत्व की पहचान हो गयी थी जो उसे मृत्यु के परे ले जाने में समर्थ था। संभवतः शुकदेवजी महाराज से इसी ज्ञान को प्राप्त कर ही परीक्षित भागवत में यह घोषणा कर पाते हैं–

"भगवंस्तक्षकादिभ्यो मृत्युभ्यो न विभेम्यहम्
प्रविष्टो ब्रह्म निर्वाणमभयं दर्शितं त्वया।"

श्रीमद्भागवत 12/6/5

अर्थात् इस ब्रह्मज्ञान प्राप्ति के पश्चात् हे भगवन् शुकदेवजी, अब तक्षक अथवा मृत्यु की सेना से भी मुझे कोई भय शेष नहीं है।

ऐसे रोचक और दार्शनिक निष्पत्ति से परिपूर्ण विषय पर लेखनी चलाने के लिए लेखक के प्रति मैं अपनी शुभेक्षा प्रकट करता हूँ।

35, ईडन गार्डन चूनाभट्टी कोलार रोड, भोपाल 16

vuRrfjr i'uk dh 'kj 'k;k

श्री राजीव खंडेलवाल की हाल में "सन्दर्भ प्रकाशन, भोपाल" द्वारा प्रकाशित पुस्तक "कुछ सवाल ? जो देश पूछ रहा है" चुभते बाणों की ऐसी शर शैया है जिस पर पड़ा हुआ देश सिसकियाँ लेता प्रतीत होता है। इसमें समसामयिक 55 ऐसे जीवंत आलेख संगृहीत हुए हैं जो हाल के कुछ वर्षों में भारतीय जन मानस को आंदोलित कर देने वाली घटनाओं के घाओं को तरोताजा कर अपने भीतर और अपने आस–पास बार–बार झाँकने को विवश कर देते हैं।

श्री खंडेलवाल की राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ से अपनी परंपरा और सेवा से सम्बद्धता है। इस पुस्तक में उन्होंने इस राष्ट्रीयता और राष्ट्रीय भक्ति को समर्पित संगठन के सम्बन्ध में व्याप्त अनेक भ्रांतियों को भी दूर करने की चेष्टा की है। लेखक और लेखकीय भावनाओं के प्रति पत्रिका परिवार का आभार।

सम्पादक मंडल

leh{kk

nh?kkZdkj dforkvksa dk bfroRr

iHkn;ky feJk

dfr	%	प्रलंम्बिका
y[kd	%	डॉ. परशुराम शुक्ल "विरही"
idk'kd	%	रजनी प्रकाशन, दिल्ली
eY;	%	150 रुपये

हिन्दी के सुविख्यात साहित्यकार और देश के प्रख्यात कवि परशुराम शुक्ल "विरही" का ताजा कविता संकलन जैसे उनकी रचनाधर्मिता का ही एक प्रामाणिक इतिवृत्त है। यह निष्कर्ष उनकी इस "आत्माभिव्यक्ति" से ही निकाला जा सकता है–

"इस संकलन की पहली कविता और अंतिम कविता के रचना–काल में चालीस वर्षों से अधिक का अंतर है। इस अंतर का असर कविताओं में संदर्भित घटनाओं के प्रभाव में देखा जा सकता है।" (भूमिका "आत्माभिव्यक्ति" से)

यद्यपि काल के इस अव्याहत क्रम को किसी "विकास"– क्रम में साहित्यिक दृष्टि से परखा जाना उचित नहीं है तथापि इसकी कुछ उल्लेखनीय कवितायें इस प्रकार नामित की जा सकती हैं– "राष्ट्र संघ के बड़ों से", "भावी मनुष्य की प्रतीक्षा", "स्वागत आने वाली पीढ़ी" और "बीसवी सदी से कहा"। जैसा कि इन कविता शीर्षकों से भी प्रकट है, कवि श्री शुक्ल की कविता का केन्द्रीय स्वर उनकी अपने समय की साक्ष्य में एक रचनाकार की भूमिका का सम्यक निर्वाह है। एक जागरूक इंसान, एक आत्मवन्त द्रष्टा और अपने आसपास की चिंताओं से सराबोर अथकित राहगीर इतनी विडंबनापूर्ण विसंगतियों से बेखबर तो नहीं बैठ सकता है।

इस संग्रह की एक लम्बी कविता "असफल प्रतिलोम विवाह का अभिशाप : एक पुराकथा" मुझे अपनी प्रपत्ति में सर्वाधिक रुचिकर प्रतीत हुई। इस कविता में कवि ने महाभारत में वर्णित कच और देवयानी के प्रसिद्ध आख्यान को छुआ है। जैसा कि विदित है, यद्यपि असुर गुरु शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी सजातीय देव गुरु

बृहस्पति के पुत्र कच से विवाह करना चाहती है, किन्तु कच चूंकि भस्म रूप में सुरा के साथ शुक्राचार्य के उदार में समा जाने के बाद पुनजीर्वित हुआ, अतः उसने भगिनी रूपा देवयानी से विवाह को स्वीकार नहीं किया। कच की यह स्थापना ऋग्वेद के दशम मंडल के "यम यमी सूक्त" के सन्दर्भ की ही एक अर्थ में आवृत्ति है जहां यम ने सहोदरा यमी से विवाह के प्रस्ताव को अस्वीकार किया था, किन्तु देवयानी की यह राग (और कालान्तर में द्वेष) की अवांतर स्थिति उसे प्रतिलोम विवाह (ब्राह्मण कन्या के क्षत्रिय कन्या से मनु स्मृति के अनुसार अव्यवह्रत विवाह! यद्यपि ऐसा शकुन्तला के संदर्भ में भी हुआ जिसे लेकर इसे एक अपवाद भी माना जा सकता है) की स्थिति में पहुंचा देती है जहां वह राजा ययाति से विवाह करती है। अपनी रजोगुणी अवस्था में वह असुर राज वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा को दासी रूप में पहले ही ग्रहण कर चुकी है किन्तु वही उसकी न केवल एक सौत की भूमिका में आ जाती है, अपितु कालांतर में ययाति को पुनः युवा होने में अपने कनिष्ठ पुत्र के रूप में सहायक भी बनती है। इन सारी विसंगतियों का अर्थ खोलती कवि की ये पंक्तियाँ निश्चित ही स्मरणीय हो जाती हैं –

"सेविका से सपत्नी/असफल प्रतिलोम/शुक्राचार्य के पास पहुँची देवयानी क्रुद्ध
आंधी आई अचानक/टूटकर गिरने लगीं शाखाएं वृक्षों की
लम्बी–लम्बी डगें भरते/शुक्राचार्य आये/तमतमाये हुए।
गंभीर ध्वनि गूंजी/ययाति!
प्रथम पत्नी की अनुमति के बिना/विवाह दूसरी नारी से/नियम विरुद्ध है
वासनात्मक स्वैराचार/शाप देता हूँ तुम्हें/यौवन से वंचित
वृद्ध हो जाओ तुम।" (पृष्ठ 67)

यह स्मरण किया जा सकता है कि राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, निराला, दुष्यंत और श्री नरेश मेहता आदि ने भी इस तरह के आख्यान लेकर कालजयी रचनाएँ लिखी हैं।

leh{kk

cnyh dk0; lxg% crky dh pkdfM;k

noUn dekj jkor

dfr	%	बेताल की चौकड़िया
y[kd	%	दीनदयाल तिवारी बंगला
idk'kd	%	धर्मोदय साहित्य प्रकाशन, सागर
eY;	%	100 रुपये i"B%106

बिरछा बने सहायक जन के शोभा हैं उपवन के
जनमइ से मरवे तक देखो, काम आय सबहन के।

लोक कवि ईसुरी के छन्द, जिन्हें चौकड़ियों के नाम से जाना जाता है, उसी आधार पर कवि ने "बेताल की चौकड़ियाँ" की रचना की है। लगता है कवि मन "लोक के विक्रम से तंत्र" के संबंध में कई सवालों का समाधान चाहता है ताकि समाज से सामाजिक बुराइयाँ मिट सकें। धर्म, संस्कृति, गुरु, गाय, गंगा, गीता और तुलसीदासजी पर चौकड़ियाँ लिखकर कवि ने नयी पीढ़ी को अध्यात्म–दर्शन पर भी कविताएँ लिखने की प्रेरणा दी है तथा नशा, सफाई, रिश्वत, महँगाई, दुर्जन, आतंकी आदि पर कविता लिखकर समाज दर्शन को भी साधा है। अन्यथा मंचीय फूहड़ कविताओं के दौर में इस तरफ बिरले लोगों का ही ध्यान जाता है। इसलिए साहित्य जगत में यह कृति अपना महत्वपूर्ण स्थान बनायेगी।

कवि अवकाश प्राप्त शिक्षक हैं। लेकिन जनचेतना जगाने के लिये लिखी चौकड़ियों के माध्यम से जो संदेश दिया है उससे सिद्ध होता है कि एक शिक्षक कभी अपने कर्तव्य से अवकाश नहीं लेता। उसके सामने तो ज्ञान का अनंत आकाश उड़ान भरने के लिये खुला होता है। बुंदेली की मिठास संग्रह में सर्वत्र है। अतः न केवल साहित्य जगत बल्कि सामान्य जनों के बीच कवि की यह कृति लोकप्रिय होगी और चौपालों पर भी इसे पढ़ा–सुना जा सकेगा। इसके लिये श्री दीनदयाल तिवारी साधुवाद के पात्र हैं।

महेन्द्र स्क्वायर्स सोसायटी, बावड़िया कला भोपाल

ikBd fy[krs gSa

अगस्त अंक में गौ–विमर्श देख कर खुशी हुई। इस अंक में "क्या गौ ऋण चुकाना संभव है" के अंत में लेखक ने अंत में एक गीत देते हुए लिखा है कि "एक विद्वान लेखक अपने हृदय की भावना ऐसे प्रकट करता है।" उसके बाद गीत है– "अगर बचाना है भारत को, गौ को आज बचाएँ हम।" विनम्रता पूर्वक कहना चाहता हूँ कि यह मेरा गीत है। हो सकता है कि लेख लिखने वाले को कवि का नाम देने में तकलीफ हुई हो। यह मानसिकता है। लेकिन ऐसा होना नहीं चाहिए।

गिरिश पंकज
सेक्टर–3, एचआईजी 2/2, दीनदयाल उपाध्याय नगर, रायपुर 492010

आपने अपनी प्रतिक्रिया में "अगस्त अंक" तो लिखा, परंतु किस सन् का इसका जिक्र नहीं किया। आपका आशय सितंबर 17 के अंक से था, ऐसा देखने से पता चला।

जैसा कि आपने लिखा कि "हो सकता है लेख लिखने वाले को कवि का नाम देने में तकलीफ हुई हो।" लेखक ने स्वयं "एक विद्वान लेखक" के नाम से आपकी कविता उद्धृत की है। संभव है कि उन्हें आपकी कविता याद हो और नाम भूल गये हों। इसमें तकलीफ की बात नहीं।

संपादक

ifr"Bku dk vkxkeh dk;Øe

शनिवार 9 फरवरी 19 से	प्रातः 10:00 बजे से	महिला मानस मंच द्वारा
रविवार 10 फरवरी 19	संध्या 6:00 बजे तक	महिलाओं के लिये विशेष आयोजन
शुक्रवार 8 मार्च 19 से	संध्या 6:30 बजे	अंतराष्ट्रीय महिला दिवस
शनिवार 23 मार्च 19	संध्या 7:00 बजे	होली मिलन समारोह

रामनवमी महोत्सव

13 अप्रैल से 18 अप्रैल तक

शनिवार 13 अप्रैल 19	प्रातः 9:30 बजे	संगीतमय सुंदरकांड
	अपरान्ह 12:00 बजे	रामजन्मोज्सव/महाआरती/प्रसाद वितरण
रविवार 14 अप्रैल 19	संध्या 7:00 बजे	रामलीला मंचन/भजन संध्या
सोमवार 15 अप्रैल 19	संध्या 7:00 बजे से	भजन संध्या
मंगलवार 16 अप्रैल 19 से	संध्या 6:30 बजे से	रामकथा–लक्ष्मण चरित्र
गुरुवार 18 अप्रैल 19		पं. उमाशंकर व्यास

izfr"Bku lekpkj

i- xkjyky 'kDy Lefr lekjkg

fnukd 2 fnlEcj l 6 fnlEcj 18

iopudrk& ijeiT; Lokeh jkt'ojkun th ljLorh

प्रतिवर्षानुसार इस वर्ष भी तुलसी मानस प्रतिष्ठान के शलाका पुरुष पं. गोरेलाल शुक्ल स्मृति समारोह गरिमामय ढंग से सानंद सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम के शुभारंभ में सर्वप्रथम मंचस्थ द्वय श्रद्धेय अतिथियों, प्रतिष्ठान के कार्याध्यक्ष पं. रमाकांत दुबे, श्री एन.एल. खण्डेलवाल, श्री पी.डी. मिश्र एवं कार्यक्रम संचालक श्री कमलेश जैमिनी ने पूज्य तुलसीदासजी एवं पं. गोरेलाल शुक्ल के चित्र पर माल्यार्पण एवं दीप प्रज्जवलन कर कार्यक्रम का शुभारंभ किया। तत्पश्चात् श्री पी. डी. मिश्र ने पं. गोरेलाल जी शुक्ल स्मृति समारोह में पधारे अतिथि द्वय का परिचय देते हुये कहा कि पूजय स्वामी जी भारत ही नहीं भारत के बाहर भी मानस का संदेश देकर संस्कृति के संवर्द्धन कर रहे हैं। वहीं ***प्रो. जगदीश उपासने*** कुलपति पत्रकारिता के क्षेत्र में विशेष सम्मान रखते हैं। आप संचार और संवाद के विशेषज्ञ हैं। आपने इस अवसर पर सुधी श्रोताओं के प्रति भी कृतज्ञता व्यक्त करते हुये कहा कि आप सभी के सहयोग से प्रतिष्ठान की प्रतिष्ठा बनी हुई है।

स्वागत उद्‌बोधन के पश्चात् भाई रतनकुमार जी की स्मृति में स्थापित पुरस्कार इस वर्ष प्रथम स्थान प्राप्त छात्रा ***कु. कीर्ति*** को दिया गया। पुरस्कार स्वरूप 11000/– रुपये नगद एवं शाल, श्रीफल से मुख्य अतिथि महोदय ने कु. कीर्ति का सम्मान किया। अपने सम्मान के पश्चात् कु. कीर्ति ने कहा कि मेरी इस सफलता के पीछे हमारे माननीय कुलाधिपति एवं मेरे सभी शिक्षकों का योगदान है जिनकी प्रेरणा एवं मार्गदर्शन से मैं इस सफलता के शिखर पर पहुंची हूँ। आपने तुलसीमानस प्रतिष्ठान के द्वारा धार्मिक कार्यक्रमों के साथ–साथ सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं पत्रकारिता जैसे क्षेत्रों में भी योगदान हेतु प्रतिष्ठान के कार्याध्यक्ष श्री रमाकान्त दुबे एवं उनके सभी सहयोगियों के प्रति भी कृतज्ञता व्यक्त की।

इस गरिमामय कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में कुलपति प्रो. जगदीश उपासने ने कहा कि संचार संवाद का महत्व तो आदिकाल से रहा है। हमारे देश के स्वतंत्रता संग्राम में भी पत्रकारिता का विशेष योगदान रहा है। आपने कहा कि विचार जाग्रत करने में पत्रकारिता की भूमिका यह होनी चाहिए कि हम लोगों पर

अपने विचार थोपें नहीं बल्कि उनके विचारों को एक दिशा दें। लेकिन वर्तमान में ऐसा नहीं हो पा रहा है। इससे पत्रकारिता का स्तर गिरा है और सत्य–असत्य के बीच का द्वन्द्व हमारे नैतिक स्तर को ऊँचा उठने नहीं दे रहा है। आपने इस संदर्भ में धर्मराज युधिष्ठिर का उल्लेख करते हुए कहा कि महाभारत में उनके रथ का पहिया धरती से ऊपर उठा हुआ चलता था लेकिन जब अस्थामा प्रकरण में वे सत्य से थोड़ा डिगे तो उनका रथ धरती पर आ गया था। ठीक यही स्थिति आज पत्रकारिता की है। उसकी विश्वसनीयता में कमी आने से लोगों की आस्था कम हुई है। आपने इस अवसर पर प्रदेश में अपना कीर्तिमान रचने वाली कु. कीर्ति को शुभकामनाएं देते हुए कहा कि आने वाले समय में कु. कीर्ति और आगे जाकर पत्रकारिता को नये आयाम रचेंगी ऐसी आशा है।

मुख्य अतिथि महोदय के उद्बोधन के पश्चात् परमपूज्य स्वामी राजेश्वरानंद जी सरस्वती ने श्री भरत चरित्र पर अपना व्याख्यान केन्द्रित करते हुये कहा कि वे बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी हैं। उनके चरित्र में समस्त धर्मों का निर्वाह एक साथ दिखाई देता है। वे एक आदर्श गृहस्थ और संत और एक राजा के रूप में भी हमारे सामने आते हैं। आपने कहा कि जब श्रीभरत से श्रीरामवनगमन और महाराज श्री दशरथ के सुरधाम गमन से उत्पन्न हुई परिस्थितियों में गुरु वशिष्ठ ने आग्रह किया कि तुम अपने पिताश्री की आज्ञा और बड़े भाई श्रीराम की इच्छानुसार अयोध्या का राज सिंहासन स्वीकार करो तथा जब श्रीराम अयोध्या वापिस आ जायेंगे तब उनका राज्य उन्हें सौंप देना। माताओं में कौशल्या जी ने भी इस प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा कि ***"पूत पथ्य गुरु आयसु कहही"*** अर्थात् बेटा भरत गुरु की आज्ञा हितकारी है उसका सम्मान करो। तब सभी ने सोचा कि श्री भरत गुरु आज्ञा की अवहेलना नहीं करेंगे और आज्ञा अनुसार राज्य स्वीकार करेंगे। श्री भरत ने भी यही कहा ***"तुम तो देहु सरल सिख सोई जो आचरत मोर भल होई"*** किन्तु ऐसा कहने के बाद उन्होंने तत्काल जो कहा उसे सुनकर सभी चौंक गये वे कहते हैं ***"जद्यपि यह समुझत हउँनी के, तदपि होत परितोष न जीके"*** आपने कहा कि यह श्रीभरत का ही शील है जो कठोर सत्य को भी इस तरह से कह देते हैं। वे यहां सत्य और शील का मिश्रण इस तरह से करते हैं जिससे अपनी बात भी रहे और किसी को बुरा भी न लगे। श्री भरत ने कहा गुरुजी मैं भले ही अभी आपकी आज्ञा की अवज्ञा करता दिखाई दे रहा हूँ लेकिन आप पूर्व में मेरे पिताश्री से हुई चर्चानुसार तो मैं आपका ही अनुसरण कर रहा हूँ जिसमें आपने कहा था ***सुनि नृप जासु बिमुख पछताहीं, जासु भजन बिनु जरनि न जाहीं*** अर्थात् जब आप कहते हैं श्रीराम के विमुख होने पर तो केवल पछतावा ही हाथ लगता है और जिनके भजन के बिना हृदय की जलन शांत नहीं होती तो वही स्थिति आज मेरे समक्ष भी है। लेकिन वर्णन आता है कि गुरु वशिष्ठ तब भी नहीं माने और कहा कि यह सब ठीक है और हमारे धर्मशास्त्र भी कहते हैं कि ***"अनुचित उचित बिचारु तजि, जे पालहिं पितु बैन, ते भाजन सुख सुजस के बसहिं अमरपति ऐन"*** अर्थात् जो अनुचित उचित का विचार छोड़कर माता–पिता की आज्ञा मानते हैं वे सुख और सुयश के भागी होते हैं। इसलिए भी तुम गुरु आज्ञा का पालन करो। तब श्री भरत ने कहा– ***"मोहि राजु हठि देइहहु जबही, रसा रसातल जाइहि तबही"*** मुझे यदि आप हर्षपूर्वक राज्य देंगे

तो यह पृथ्वी रसातल को चली जायेगी। तब सभी ने कहा यह पृथ्वी तो अभी रावण जैसे राक्षस का भार सम्हाले हुए है और तुम तो राम प्रेम की मूर्ति हो तब यह कैसे हो सकता है ?

भगवान श्रीराम की आज्ञा अनुसार श्री भरत चरण पदुकाएं लेकर वापिस अयोध्या आ जाते हैं लेकिन स्वयं राज सिंहासन पर आसीन न होकर उन्हीं चरण पादुकाओं की राज सिंहासन पर स्थापना कर पूजा करते हैं और 14 वर्ष तपस्या करते हुए अयोध्या की राजव्यवस्था का कार्य भी संभालते हैं। आपने कहा कि श्री भरत का चरित्र धर्म का सार है। आपने इस संदर्भ में विभिन्न प्रसंगों का उल्लेख करते हुए अपने भक्ति गायन से सभी को भाव विभोर कर दिया।

कार्यक्रम के समापन पर प्रतिष्ठान के संयोजक श्री रघुनंदन शर्मा, पूर्व मुख्यमंत्री श्री बाबूलाल गौर, श्री रमाकान्त दुबे, श्री एन..एल. खण्डेलवाल, श्री पी. डी. मिश्र ने आपका शाल, श्रीफल से सम्मान किया और कामना की कि स्वामी जी प्रतिवर्ष इसी तरह प्रतिष्ठान पर अपनी कृपा बनाये रखेंगे। समापन अवसर पर श्री पी.डी. मिश्र ने सभी के प्रति आभार प्रदर्शन किया। कार्यक्रम का संचालन श्री कमलेश जैमिनी ने किया।

देवेन्द्र कुमार रावत भोपाल

Jh fl) j?kukFk efnj e
Jh jke njckj dh çk.k çfr"Bk lekjkg lIiUu

fnukd 24 fnlEcj 2018

दिनांक 24 दिसंबर 2014 को श्री श्री 1008 श्री दिव्यानंद जी सरस्वती द्वारा श्री सिद्ध रघुनाथ मंदिर में श्री राम दरबार की स्थापना संपन्न हुई थी। इस वर्ष सोमवार दिनांक 24 दिसंबर 2018 को श्री राम दरबार की प्राण प्रतिष्ठा की चौथी वर्षगांठ पर श्री सिद्ध रघुनाथ मंदिर में प्राण प्रतिष्ठा समारोह दिवस का आयोजन किया गया।

जिसका आरंभ प्रातः काल 9:30 बजे आशीर्वाद ऑर्गनाइजेशन मंडली द्वारा संगीतमय सुंदरकांड के पाठ से हुआ तथा दोपहर 12:00 बजे पूजा–अर्चना एवं महाआरती संपन्न हुई। भक्तजनों ने मानस भवन के इस आयोजन में सोत्साह भाग लिया।

प्रबंध कारिणी समिति के सदस्य श्री एन.एल. खंडेलवाल, श्री राजेंद्र शर्मा, श्री पी.डी. मिश्रा, श्री कमलेश जैमिनी, श्रीमती जानकी शुक्ला, श्रीमती मिथिलेश, श्रीमती रजनी यादव अध्यक्षा महिला मानस मंच एवं श्री एवं श्रीमती कैलाश जोशी की उपस्थिति से कार्यक्रम सानंद संपन्न हुआ।

ik;kt dk lfoue fuonu

यह हर्ष की बात है कि अनेक रामानुरागी सज्जन स्वयं अपने परिवार अथवा समाज के लिए कुछ मांगलिक आयोजन करवाना चाहते हैं। ऐसे महानुभाव अपने संकल्प के अनुकूल राशि दान में देकर मानस भवन में निम्न धार्मिक एवं लोकहित संबंधी कार्यक्रम के आयोजन के प्रायोजक बन सकते हैं –

1. बसंतोत्सव – बसंत पंचमी पर महिलाओं द्वारा महिलाओं के लिए विशेष आयोजन		1,10,000/–
2. श्रीराम जन्मोत्सव एवं प्रवचन		75,000/–
3. तुलसी जयंती समारोह (सप्त दिवसीय प्रवचन) (दीदी मंदाकिनी रामकिंकर)		2,10,000/–
4. नवरात्र बाल्योत्सव–विद्यार्थियों के लिए विशेष प्रतिस्पर्धाएँ		25,000/–
5. पितृपक्ष में भागवतकथा–पितरों की शांति हेतु		3,10,000/–
6. पं. रामकिंकर प्रसंग – उदीयमान प्रवचनकारों द्वारा रामकथा प्रवचन		25,000/–
7. पं. गोरेलाल शुक्ल स्मृति समारोह – स्वामी राजेश्वरानंद सरस्वती द्वारा रामकथा प्रवचन		1,50,000/–
8. वर्षभर साप्ताहिक सुंदरकांड (वर्ष में 52 शनिवार अथवा मंगलवार)		51,000/–
9. तीस दिवसीय नवरात्र महोत्सव (गरबा)		3,50,000/–
10. अखंड रामायण पाठ (24 घंटे)		11,000/–
11. संकल्प सिद्धि पूजन		5,100/–
12. पूर्वजों की शांति हेतू महादान दानवीर 'क' वर्ग	निश्चित तिथि पर • सुंदरकांड का संगीतमय पाठ • 21 दीपों की विशेष आरती • विशेष प्रसादी/भोग • अस्पताल में 400 मरीजों का एक दिन का भोजन	2,11,000/–
दानवीर 'ख' वर्ग	• सुंदरकांड का संगीतमय पाठ • 21 दीपों की विशेष आरती • वृद्धाश्रम आसरा में फल–वितरण	1,51,000/–
दानवीर 'ग' वर्ग	• सुंदरकांड का संगीतमय पाठ • 21 दीपों की विशेष आरती • विशेष प्रसादी/भोग	1,21,000/–
13. शारदीय नवरात्र घट सीपना		1100/– प्रतिघट

इन आयोजनों में प्रायोजक का नाम आदि का उल्लेख होगा तथा पूजन आरती आदि उनके द्वारा की जाएगी। इस दान को आयकर अधिनियम की धारा 80 जी के अंतर्गत छूट उपलब्ध होगी।